आधुनिक हिन्दी निबन्ध

गंगानारायण चतुर्वेदी

सवाई मानसिंह हाईवे, जयपुर-3

मूल्य : चालीस रुपये मात्र
© : साहित्यागार
संस्करण : 1985
प्रकाशक | साहित्यागार,
एस० एम० एस० हाई वे,
जयपुर–302 003

मुद्रक : एजुकेशनल प्रिण्टर्स, जयपुर–3

साहित्यागार

अनुक्रमणिका

26. किसी मैच का आँखों-देखा हाल
27. यात्रा-वर्णन
28 किसी ऐतिहासिक स्थान की यात्रा
29 किसी रमणीक स्थान की यात्रा
30 चाँदनी रात में नौका-विहार
31. दहेज न मिलने पर जब बरात लौट गयी
32. मनोरंजन के आधुनिक साधन
33 विज्ञान के चमत्कार
34. बाल्य-जीवन की सुखद स्मृतियाँ
35. जब मेरा परीक्षा-परिणाम आया
36 एक विकसित ग्राम
37 भीड़ भरे बाजार की सैर
38. स्वाधीनता-दिवस समारोह का आयोजन
39. मेरे देश की धरती सोना उगले
40. गुलाबी नगर जयपुर
41. एक भीषण दुर्घटना
42 जब मेरा छोटा भाई मेले में खो गया था
43. बाढ़ पीड़ित क्षेत्र का दौरा
44. शरारत जो मँहगी पड़ी
45. मतदान के दिन एक मनोरंजक घटना
46. विद्यालय का वार्षिकोत्सव
47. एक भीषण अग्निकाण्ड
48. मेले में जब अचानक वर्षा होने लगी
49. जीवन की वह चिरस्मरणीय घटना
50. फूस की छत के नीचे बरसात की एक रात

आमुख

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् प्राय सभी क्षेत्रो मे हिन्दी की आश्चर्यजनक उन्नति हुई है। देश के कोने-कोने मे अनेक हिन्दी-लेखक पैदा हो गए है। सभी उसे राष्ट्र-भाषा के पद पर आसीन करना चाहते हैं। वास्तव मे आजकल देश मे हिन्दी का जितना अधिक मान है और उसके प्रति जितना अधिक अनुराग है, उसे देखते हुए हम कह सकते हैं कि हमारी भाषा सचमुच राष्ट्र-भाषा के पद पर आसीन होती जा रही है।

हिन्दी मे निबन्ध-लेखन का कार्य खूब हुआ है और हो रहा है। इसी शृ खला मे मेरा भी यह एक प्रयास है। हिन्दी हमारी राष्ट्र-भाषा है। इसे समृद्ध बनाना और इसका विकास करना हम सब का नैतिक दायित्व है। माध्यमिक शिक्षा बोर्डों, विश्व-विद्यालयो तथा विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओ मे 'हिन्दी-निबन्ध' एक अनिवार्य विषय है। मेरा विश्वास है कि निबन्धो की यह पुस्तक विद्यार्थियो की माँग को पूरा करेगी एव हिन्दी-निबन्ध साहित्य की रिक्तता का किन्ही अ शो मे पूर्ण करेगी। निबन्धो के लिए जिन विषया का चयन किया गया है, वे आधुनिक तथा परीक्षोपयोगी हैं। निबन्ध की वर्ण्य विषय-वस्तु को रूपरेखा के आधार पर क्रमबद्ध करने का प्रयास किया गया है, जिससे विद्यार्थी निश्चित रूप से लाभान्वित होगे।

जिन विद्वानो के अनुभवो का मैंने इस पुस्तक के लेखन मे लाभ उठाया है, उनके प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन करना मैं अपना नैतिक दायित्व समझता हूँ। निबन्ध-लेखन के लिए सतत् प्रेरणा देने और आवश्यक सहयोग देने के लिए मैं श्री रमेश वर्मा, सचालक एव श्री मनोहर सिंह, व्यवस्थापक 'साहित्यागार' का आभारी हूँ।

—लेखक

जीवन में अनुशासन का महत्त्व | 1

निबन्ध की रूप रेखा

1. प्रस्तावना
2. अनुशासन का अर्थ
3. अनुशासन के प्रकार
4. अनुशासन से लाभ (व्यक्तिगत, सामाजिक तथा राष्ट्रीय)
5. अनुशासन के विकास के उपाय
6 उपसंहार

1 प्रस्तावना—ईश्वर की रचना में सर्वश्रेष्ठ रचना मानव है। इसलिए सन्तो, महात्माओं और ज्ञानियों ने संसार में मानव-जीवन को दुर्लभ माना है। बुद्धि, विवेक, भावना और शारीरिक कार्य-क्षमता की दृष्टि से मनुष्य-जीवन प्रकृति की ओर से दिया हुआ एक वरदान है। संसार में ज्ञान-विज्ञान तथा अन्य क्षेत्रों में जो कुछ भी आश्चर्यजनक कार्य हुए हैं वे सब मनुष्य की ही देन हैं। ऐसा सुन्दर अवसर 'मनुष्य-जीवन' पाकर भी जो लोग अपना तथा दूसरों का हित नहीं कर पाते हैं और ऐसे सुअवसर को व्यर्थ ही गवाँ देते हैं, उन जैसा मूर्ख कौन होगा? मानव-जीवन की सफलता में सबसे बड़ी बाधा है—अनुशासन का अभाव। अनुशासन के अभाव में मनुष्य में मनुष्यता ही उत्पन्न नहीं हो पाती। उसे अपनी बुद्धि, विवेक और बल का सही उपभोग करना नहीं आ पाता। इससे उसका जीवन अभाव युक्त होकर असफल हो जाता है। वह अपने जीवन में स्वयं भी कष्ट पाता है और दूसरों को भी कष्ट देता है।

2 अनुशासन का अर्थ—अनुशासन का ठीक-ठीक अर्थ समझने के लिए हमें यह समझना चाहिए कि अनुशासन मन की एक भावना का नाम है। जिस प्रकार प्रेम, दया और परोपकार मन की भावना होती है उसी प्रकार अनुशासन भी एक भावना ही है। 'अनु+शासन' इन दो शब्दों से मिलकर 'अनुशासन' शब्द बनता है। 'अनु' का अर्थ है—पीछे और शासन का अर्थ है—नियंत्रण। नियंत्रण का भाव जिसके पीछे हो, वह अनुशासन कहलाता है। यहाँ यह और समझ लेना आवश्यक है कि यहाँ 'पीछे' का अर्थ आन्तरिक प्रेरणा से है। जब हम अपने आचरण और काया को आन्तरिक प्रेरणा से नियन्त्रित करते हैं तो वह अनुशासन कहलाता

है । धीरे-धीरे नियमित अभ्यास से ही अनुशासन की भावना का विकास होता है। व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के हित मे नियमों तथा मर्यादाओं का पालन करने के लिए अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं और भावनाओं पर नियन्त्रण रखना ही अनुशासन कहलाता है।

3 अनुशासन के प्रकार—अनुशासन दो प्रकार का माना जाता है—1 आन्तरिक और 2 बाह्य। आन्तरिक अनुशासन वह अनुशासन है जिसमें व्यक्ति अपनी स्वय की प्रेरणा से नियम और मर्यादाओं का पालन करता है। वह स्वयं ही यह निश्चय करता है कि उसे अमुक-अमुक कार्य करने चाहिए और अमुक-अमुक कार्य नही करने चाहिए। वह अपनी भावनाओं पर स्वेच्छा से अंकुश लगाता है। चाहे उसे कितना ही कष्ट हो पर वह ऐसे कार्य नही करता जो नियम और मर्यादाओं के विरुद्ध हो। बाह्य अनुशासन वह अनुशासन होता है जिसमें किसी प्रकार के दण्ड के भय से नियम और मर्यादाओं का पालन करने के लिए व्यक्ति विवश होता है। इस प्रकार का अनुशासन अस्थायी होता है क्योंकि जब भी भय की स्थिति समाप्त होती है, व्यक्ति का आचरण अनियन्त्रित हो जाता है और अनुशासन समाप्त हो जाता है। इसके विपरीत आन्तरिक अनुशासन मे स्थायित्व होता है। उसमें व्यक्ति किसी के दबाव अथवा भय से नहीं, अपनी आन्तरिक प्रेरणा से ही अपने आचरण को नियन्त्रित करता है। वास्तव में आन्तरिक अनुशासन ही श्रेष्ठ अनुशासन है किन्तु जीवन मे उपयोगिता की दृष्टि से बाह्य अनुशासन का भी उतना ही महत्त्व है जितना आन्तरिक अनुशासन का। इसके अतिरिक्त निरन्तर अभ्यास से बाह्य अनुशासन ही आन्तरिक अनुशासन भी बन जाता है।

4 अनुशासन से लाभ—अनुशासन व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के हित में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। अनुशासन से ही व्यक्ति के जीवन में सुधार होता है और वह श्रेष्ठ कार्यों मे प्रवृत्त होकर अपना विकास कर पाता है। नम्रता, आज्ञा-पालन, सेवा, कठोर परिश्रम और नियमितता अनुशासन मे ही आती हैं। इनके अतिरिक्त और ऐसे अनेक श्रेष्ठ गुण है, जिनका विकास अनुशासन मे ही होता है। जो व्यक्ति अनुशासित होते हैं, वे अपने जीवन मे विद्या, धन, बल, यश और ख्याति बड़ी सरलता से प्राप्त कर लेते है। एक मात्र अनुशासन का भाव उत्पन्न होने से मनुष्य-जीवन की सफलताओं के सभी द्वार खुल जाते हैं। अनुशासित व्यक्ति सभी को प्रिय लगता है और सब उसका हित चाहने लगते हैं।

समाज और राष्ट्र अनुशासन से ही स्थिर रह पाते है और उन्नति करते हैं। यदि समाज मे अनुशासन न हो, कुछ मान्य मर्यादाएँ और नियम न हों तो उसे मानव-समाज नहीं कहा जा सकता। वह मनुष्य की एक भीड़ मात्र रह जायेगी। अनुशासन से ही उसमें सामाजिकता का भाव उत्पन्न होता है। बड़ों के प्रति आदर, छोटों के प्रति स्नेह, पड़ोसियों के प्रति सद्भाव, दुखी पीड़ित और असहायों के प्रति

सहायता के भाव अनुशासन से ही उत्पन्न होते हैं। किसी को कष्ट न देना और दूसरो के साथ अच्छा बर्ताव करना अनुशासन ही सिखाता है। समाज मे एकता, प्रेम, सहयोग और सहानुभूति के भाव अनुशासन से ही विकसित होते हैं जो उसके मूल आधार है। राष्ट्र की स्थिरता, सुरक्षा और उन्नति का आधार भी अनुशासन ही है। अनुशासन ही राष्ट्र को महान बनाता है। अपने राष्ट्र को मातृभूमि के रूप मे मानना और उसकी सुरक्षा, स्वाधीनता तथा उन्नति के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर देने की भावना अनुशासन से ही उत्पन्न होती है। यदि सेना और पुलिस मे अनुशासन न हो तो न तो राष्ट्र की स्वाधीनता कायम रह सकती है और न ही कानून व्यवस्था रह सकती है। जिस राष्ट्र के नागरिक जितने अनुशासित होते हैं, वह राष्ट्र उतना ही सबल, समृद्ध और सुरक्षित होता है। इस विवेचन से यह सिद्ध हो जाता है कि व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र के हित मे अनुशासन बहुत उपयोगी होता है।

5. अनुशासन के विकास के उपाय—अनुशासन व्यक्ति पर थोपा नही जा सकता, इसके लिए आदर्श उपस्थित करना आवश्यक होता है। अत अनुशासन की भावना का विकास करने के लिए यह आवश्यक है कि बडे लोग छोटो के सामने अपना आदर्श प्रस्तुत करे। उनके कार्य-कलापो और आचरणो को देख कर ही छोटे लोग उनसे प्रेरणा प्राप्त करते है। विद्यार्थियो और बालको को चाहिए कि वे बडो की आज्ञा का पालन करना सीखें। आज्ञा-पालन ही अनुशासन की पहली सीढी है। इसी से बालको मे स्वय की भावनाओ पर नियत्रण रखने का अभ्यास प्रारम्भ होता है। आज्ञा-पालन जिनका स्वभाव बन जाता है उनमे नम्रता, कष्ट सहिष्णुता और कठोर श्रम करने के गुण उत्पन्न हो जाते हैं तथा वे शनै-शनै पूर्ण अनुशासित हो जाते हैं।

6. उपसंहार—जीवन मे अनुशासन का बहुत अधिक महत्त्व है। मनुष्य मे मनुष्यता अनुशासन से ही विकसित हो पाती है। जिनके जीवन मे अनुशासन नहीं होता वे मनुष्य होते हुए भी पशु-तुल्य ही रहते है। न तो वे अपनी कुत्सित भावनाओ पर अंकुश लगा पाते है और न ही दूसरो के हित के विचार उनके मस्तिष्क मे आते है। येन केन प्रकारेण स्वार्थ-साधन ही उनके जीवन का एक मात्र लक्ष्य हो जाता है। इससे उनका स्वय का जीवन तो निष्फल हो ही जाता है, साथ ही समाज और राष्ट्र को भी वे बहुत अधिक हानि पहुंचाते है।

□□□

2 | राष्ट्र-निर्माण में युवाशक्ति का योगदान

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना

2. युवकों के कर्त्तव्य

(i) अनुशासन का पालन (ii) कठोर परिश्रम (iii) संगठन और नेतृत्व (iv) शिक्षा-प्रसार (v) समाज-सुधार (vi) समाज-सेवा (vii) राष्ट्रीय सम्पत्ति की सुरक्षा (viii) सांस्कृतिक परम्पराओं की रक्षा (ix) विकास-योजनाओं में सहयोग

3. उपसंहार

1. प्रस्तावना—युवावस्था जीवन का वसन्त काल है। यह जीवन का स्वर्णिम काल होता है जब प्रकृति की ओर से दी गई समस्त शारीरिक और मानसिक शक्तियाँ पूरे उभार पर होती हैं। नया खून और नया जोश होता है। थकना और हार मान लेना जवानी जानती ही नहीं है। संसार के सभी महान् कार्यों का सेहरा युवकों के ही सिर बाँधा गया है। युवा-शक्ति में आँधी का सा वेग होता है जो अन्याय और अनाचारों के स्थापित स्तम्भों को उखाड़ फेंकने की सामर्थ्य रखता है तथा व्यापक वर्षा की सी नव-जीवन दायिनी शक्ति होती है। संसार सदा ही नव-निर्माण के लिए युवा-शक्ति पर निर्भर रहता आया है। युवा-शक्ति ने जब भी करवट ली है संसार का काया पलट कर डाला है। संसार का इतिहास युवा-शक्ति के अर्नगिनत और आश्चर्यजनक कार्यों का ही लेखा-जोखा है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में राष्ट्र-निर्माण का कार्य चल रहा है। यह महान् कार्य देश की युवा-शक्ति के योगदान के बिना पूरा होना सम्भव नहीं है। अतः देश के युवकों को चाहिए कि वे राष्ट्र-निर्माण के कार्य में तन-मन से जुट जाँय और बदली हुई परिस्थितियों के अनुसार एक सुदृढ़, समृद्ध एवं विकसित राष्ट्र के रूप में विश्व के मानचित्र पर भारत का एक गौरव पूर्ण चित्र प्रस्तुत करें।

2. युवकों के कर्त्तव्य—भारत की युवापीढ़ी निम्नलिखित कर्त्तव्यों का पालन करके राष्ट्र-निर्माण के महान् कार्य को पूरा कर सकती है :—

(i) **अनुशासन**—देश की युवापीढ़ी में अनुशासन की भावना उत्पन्न होना अत्यन्त आवश्यक है। अनुशासन के बिना व्यक्ति, समाज और राष्ट्र किसी का भी

हित नहीं हो सकता। किसी भी जन-कल्याणकारी योजना की सफलता अनुशासन पर ही आधारित होती है। यह एक खेद का विषय है कि स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् युवा-पीढ़ी में अनुशासन की भावना का ह्रास हुआ है। स्वच्छन्दता और उच्छृंखलता की प्रवृत्ति दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इससे हमारा राष्ट्रीय चरित्र दूषित होने लगा है। स्वार्थ, पक्षपात, भ्रष्टाचार और अनाचार की घटनाएँ बढ़ रही हैं। कानून और व्यवस्था की स्थिति पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ने लगा है। इससे राष्ट्र कमजोर हो रहा है और जन-कल्याणकारी योजनाओं की सफलता में बाधाएँ उत्पन्न हो रही हैं। एक सुदृढ़ तथा समृद्ध राष्ट्र का स्वप्न अनुशासन के अभाव में साकार नहीं हो सकता। अतः युवकों का यह पहला कर्त्तव्य है कि वे जीवन के प्रत्येक स्तर पर अनुशासन की स्थापना में व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से सहयोग करें।

(ii) **कठोर परिश्रम**—परिश्रम का महत्त्व सर्वव्यापी है। परिश्रम ही सफलता की कुंजी है। कठोर परिश्रम से असम्भव दिखने वाले कार्य भी सम्भव हो जाते हैं। राष्ट्र-निर्माण का महान् कार्य बिना परिश्रम के कभी सम्भव नहीं हो सकता। आधुनिक युवा-पीढ़ी में परिश्रम से कतराने की भावना बढ़ने लगी है। शारीरिक श्रम को तो हीन भावना से देखने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। कम से कम परिश्रम से अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करने की भावना बढ़ती जा रही है। यह एक अशुभ लक्षण है। इससे राष्ट्रीय उत्पादन पर तो बुरा असर पड़ ही रहा है साथ ही युवकों की शक्ति और सामर्थ्य का उपयोग न होने के कारण वे शारीरिक रूप से रुग्ण होते जा रहे हैं। उनमें आलस्य, प्रमाद और विलासिता के भाव उत्पन्न होने लगे हैं। राष्ट्र-निर्माण के कार्य में यह प्रवृत्ति बहुत बाधक है। अतः युवा-पीढ़ी को चाहिए कि वह अनवरत कठोर श्रम में लीन हो जाय। तभी राष्ट्र सुदृढ़ और सम्पन्न बन सकेगा।

(iii) **संगठन का नेतृत्व**—राष्ट्र की मानवीय शक्ति के संगठित हुए बिना राष्ट्र-निर्माण का कार्य सम्भव नहीं है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व विदेशी शासकों ने अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए हमारी संगठित इकाई को जाति, धर्म, सम्प्रदाय और भाषा के नाम पर विभाजित करने का प्रयास किया था। उसका प्रभाव हमारे समाज में अब भी यदाकदा दिखाई पड़ जाता है। यह राष्ट्र के लिए हानिकारक है। भारत का प्रत्येक निवासी एक ही राष्ट्र का नागरिक है। भेद-भाव की भावना फैलाने की कोशिश हमारी युवा-पीढ़ी के लिए एक चुनौती है। युवकों को चाहिए कि वे इस चुनौती का डटकर मुकाबला करें और राष्ट्र में उपलब्ध सभी साधनों की संगठित शक्ति से राष्ट्र-निर्माण के कार्य में लगे रहें। इसके साथ ही उन्हें समाज को कुशल नेतृत्व भी प्रदान करना चाहिए जिससे आने वाली पीढ़ियाँ उनके बताये गये मार्ग

(iv) शिक्षा-प्रसार—शिक्षा एक ऐसा प्रकाश है जिसके प्राप्त हो जाने पर मनुष्य के भीतर-बाहर का अन्धकार दूर हो जाता है और उसमे विवेक का भाव उत्पन्न हो जाता है जिससे अनेक समस्याओं का समाधान स्वत हो जाता है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि सदियो की गुलामी के कारण हमारे देश मे पढे-लिखे लोगों की सख्या बहुत कम है। हमारे देश की वर्तमान युवा-पीढी-विशेषकर विद्यार्थी शिक्षा-प्रसार के कार्य मे बहुत अधिक सहायक सिद्ध हो सकते हैं। वे अपने अवकाश-काल मे अपने घर, आस-पडौस तथा अन्य स्थानो पर बालको, प्रौढो और स्त्रियो को पढना-लिखना सिखाकर समाज और राष्ट्र की बहुत बडी सेवा कर सकते हैं।

(v) समाज-सुधार—समाज मे व्याप्त अन्धविश्वासों, कुरीतियों और रूढियों के रहते राष्ट्र सुदृढ एव सम्पन्न नही बन सकता। युवा-पीढी को चाहिए कि वह इन बुराइयों को समाप्त करने मे पहल करें। छुआ-छूत, दहेज आदि ऐसी रूढियाँ और कुरीतियाँ हैं जिनको केवल युवा-पीढी ही समाप्त कर सकती है कानून बना देने से इसमे कोई लाभ नही हो सकता। इसके अलावा धार्मिक अन्धविश्वास भी उन्ही के द्वारा समाप्त किये जा सकते हैं। यदि युवा-पीढी इन्हें समाप्त करने का सकल्प करले तो शीघ्र ही समाज मे आश्चर्यजनक सुधार हो सकता है और राष्ट्र की मजबूती को बल मिल सकता है।

(vi) समाज-सेवा—जब तक समाज मे विषमताएँ व्याप्त रहेंगी, शोषण और अत्याचार होते रहेंगे तथा अमीर-गरीब मे अन्तर कम नही होगा, राष्ट्र मजबूत नही बन सकेगा। देश की युवा-पीढी को ही विषमताओं को समाप्त करने के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी है। वे जागरूक और सगठित रह कर दीन, हीन तथा पिछडे वर्ग के लोगों के हितो की रक्षा करें तथा उनमे ऊँचा उठने के लिए आत्म-विश्वास पैदा करें तो विषमताएँ समाप्त होकर एक मजबूत राष्ट्र की नीव रखी जा सकती है।

(vii) राष्ट्रीय सम्पत्ति की सुरक्षा—प्राय देखने मे आता है कि अपनी माँगे मनवाने के लिए आन्दोलनकारी राष्ट्रीय सम्पत्ति-बस, रेल, इमारतें आदि को क्षति पहुँचाते हैं। अपनी उचित माँगो की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित करने तथा उस पर नैतिक दबाव डालने के लिए हडताल और आन्दोलन जनता का हथियार है किन्तु आन्दोलन के दौरान राष्ट्रीय सम्पत्ति को क्षति पहुँचाने से राष्ट्र की हानि होती है और राष्ट्र कमजोर बनता है। युवा-पीढी को इस सम्बन्ध मे पूरी साव-धानी बरतनी चाहिए तथा सतर्क एव जागरूक रहकर राष्ट्रीय सम्पत्ति की सुरक्षा की जिम्मेदारी निभानी चाहिए।

(viii) सांस्कृतिक परम्पराओं की रक्षा—किसी भी देश की आत्मा उसकी सस्कृति है। अपनी सास्कृतिक परम्पराओं के कारण ही कोई भी देश संसार में सम्मानित होता है। यह सौभाग्य की बात है कि हमारे देश की सस्कृति और

उसकी परम्पराएँ बहुत ऊँची है। हजारो वर्ष पुरानी हमारी सस्कृति अनेक उथल-पुथल और परिवर्तनो के बाद भी अक्षुण्ण बनी हुई है। युवा पीढी को इसे बनाये रखने का दायित्व निभाना चाहिए। पश्चिमी सभ्यता की चकाचौंध से अन्धे बन कर अपनी सास्कृतिक परम्पराओ को त्यागने वाले युवक-युवतियाँ भारी भूल कर रहे है। उनका यह कदम आत्मघाती है। यदि सस्कृति नष्ट हो गई तो देश का गौरव पूर्णरूपेण ही समाप्त हो जायगा। युवा पीढी का यह कर्तव्य है कि अपने परम्परागत सास्कृतिक स्वरूप को सही रूप मे पहचानें और उसकी परम्पराओ की रक्षा करने का प्रयत्न करें।

(ix) विकास-योजनाओ मे सहयोग—सरकार देश का योजनाबद्ध विकास करने के लिए लम्बी अवधि की विकास-योजनाएँ चलाती है किन्तु इन योजनाओ की सफलता जन-सहयोग के बिना सम्भव नही है। युवा-पीढी को चाहिए कि इन योजनाओ के बारे मे जन-समुदाय को जानकारी करावे तथा इनकी सफलता के लिए अपनी ओर से पूरा सहयोग करे। राष्ट्र का आर्थिक-सामाजिक विकास इन्ही योजनाओ पर निर्भर है। ये योजनाएँ ही राष्ट्र को एक सुदृढ आधार प्रदान करेंगी। इनमें सहयोग देकर युवक राष्ट्र निर्माण के कार्य मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है।

3. उपसहार—राष्ट्र निर्माण का कार्य एक महान् कार्य है। पूर्ण सजगता, कठोर परिश्रम और उत्तरदायित्व की भावना मे ही यह महान् कार्य पूरा हो सकता है। किसी भी राष्ट्र की सबसे मूल्यवान पूँजी और शक्ति उसकी युवा-पीढी ही है। युवा शक्ति ही इस कठिन कार्य को सरलता से कर सकती है। आज के युवक ही कल राष्ट्र के कर्णधार बनेगे। एक सुदृढ तथा समृद्ध राष्ट्र का लाभ कल उन्हे ही मिलने वाला है। राष्ट्र निमाण का कार्य स्वार्थ और परमार्थ दोनो ही दृष्टियों से लाभकारी है। अत युवा-पीढी को चाहिए कि वह अपनी पूर्ण शक्ति और क्षमता के साथ इस कार्य मे जुट जाय तथा इतिहास मे अपना नाम कर दे।

□□□

3 | विद्यार्थी-जीवन

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. विद्यार्थी-जीवन का महत्व
3. विद्यार्थी के लक्षण
4. विद्यार्थी के कर्त्तव्य
5. स्वतन्त्र भारत के विद्यार्थी
6. उपसंहार

1. प्रस्तावना—ससार के सभी प्राणियो मे मानव-जीवन सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। मनुष्य को प्रकृति की ओर से विशिष्ट शक्तियाँ, गुण और क्षमताएँ मिलती हैं। जो लोग अपने इस दुर्लभ जीवन को सफल बनाते हैं, वे ही मनुष्य कहलाने के अधिकारी होते हैं। मानव-जीवन अन्य प्राणियों की तरह खाने-पीने, उठने-बैठने, सोने-जागने और सन्तान उत्पन्न करने तक ही सीमित नही होता बल्कि इन कार्यों से आगे बढ़कर विशेष कुछ करने मे ही मानव-जीवन की सफलता है। मानव-जीवन निरुद्देश्य नहीं हो सकता। जब मनुष्य को प्रकृति की ओर से बुद्धि तथा अन्य प्रकार की शारीरिक और मानसिक शक्तियाँ वरदान स्वरूप मिली हैं तो इनका उपयोग उद्देश्यपूर्ण जीवन में ही किया जाना आवश्यक है। तभी मानव-जीवन की सार्थकता है।

2. विद्यार्थी-जीवन का महत्व—मानव-जीवन की सफलता के लिए विद्यार्थी-जीवन का महत्त्व सर्वाधिक है। यह अवस्था भावी जीवन की तैयारी करने की अवस्था होती है। इस अवस्था मे ही शरीर और बुद्धि दोनों का विकास होता है। इसी अवस्था मे आदतें बनती है, रुचियो और अभिरुचियो का विकास होता है तथा मन पर सस्कार स्थायी होते है। यह अवस्था जीवन का बसन्त काल है, जिसमें अगणित शारीरिक और मानसिक शक्तियों का प्रस्फुटन होता है। यह अवस्था भावी जीवन की आधारशिला है। जिस भवन की नींव जितनी सुदृढ होती है, वह भवन उतना ही मजबूत बनता है। साथ ही जिस प्रकार के नक्शे से नीव लगायी जाती है, उस पर वैसा ही भवन बनता है। अत: इन सभी दृष्टियों से हमे विद्यार्थी-जीवन के महत्त्व को समझना चाहिए। जो लोग विद्यार्थी-जीवन के महत्त्व को समझ लेते हैं और अपने इस जीवन में कठोर परिश्रम, अनुशासन और सयम का पालन करते हुए विद्याध्ययन में लगे रहते हैं, उनका भावी जीवन सुखी और सफल होता है। ससार के प्रायः सभी महा-

पुरुषो के बाल्यकाल की घटनाएँ इसके प्रमाण हैं। महात्मा गाधी, लाल बहादुर शास्त्री, प० जवाहर लाल नेहरू तथा डा० राजेन्द्र प्रसाद ग्रादि महापुरुषो के व्यक्तित्व का निर्माण उनके विद्यार्थी-जीवन से ही हुआ था।

3. विद्यार्थी के लक्षण—विद्यार्थी शब्द विद्या+अर्थी इन दो शब्दो के सधि योग से बना है, जिसका अर्थ है—वह व्यक्ति जिसका एक मात्र उद्देश्य विद्या प्राप्त करना है। विद्या प्राप्त करना अथवा अनेकानेक विषयो का गूढ ज्ञान प्राप्त करना एक प्रकार की तपश्चर्या है। इस तपस्या मे वे ही सफल होते है जो एक विशेष प्रकार की जीवन-चर्या को अपनाते हैं।

हमारे सस्कृत साहित्य मे विद्यार्थी के प्रमुख पांच लक्षण बताए हैं—

काक चेष्टा बको ध्यान श्वान निद्रा तथैव च।
अल्पाहारी च स्त्री त्यागी विद्यार्थी पंच लक्षणम्॥

विद्यार्थी कौए की तरह चेष्टावान् अथवा चचल होना चाहिए। उसमे पूर्ण जिज्ञासा होनी चाहिए। जिस प्रकार कौआ एक क्षण के लिए भी शान्त और स्थिर नही रहता उसी प्रकार विद्यार्थी को भी शान्त और स्थिर नही रहना चाहिए। सब ओर से चौकन्ना रहकर पूर्ण सजगता के साथ प्रतिक्षण कुछ न कुछ करते ही रहना चाहिए।

विद्यार्थी का दूसरा लक्षण है—बगुले का सा ध्यान लगाने वाला। जिस प्रकार बगुला पानी मे एक टाँग से खडा रहकर ध्यान लगाता रहता है और अपने पास मे मछली के आते ही चट से उसे पकड लेता है, उसी प्रकार विद्यार्थी को भी अपने अध्ययन की प्रक्रिया मे शान्त चित्त से पढते रहना चाहिए और महत्त्वपूर्ण ज्ञान के बिन्दु को तत्काल ग्रहण कर लेना चाहिए।

विद्यार्थी का तीसरा लक्षण श्वान निद्रा है। जिस प्रकार कुत्ता गहरी नीद मे सोता हुआ भी पाँव की जरा सी आहट से ही जाग पडता है उसी प्रकार की नीद विद्यार्थी की भी होनी चाहिए। लगातार घटो गहरी नीद मे सोते पडे रहना विद्यार्थी का लक्षण नही है।

विद्यार्थी का चौथा लक्षण अल्पाहारी होना है। अत्यन्त सादा भोजन अल्प मात्रा मे करने वाला ही पूर्ण स्वस्थ रहकर विद्याध्ययन मे लगा रह सकता है। खूब भरपेट भोजन करने वाला आलसी बन जाता है और वह पूर्ण स्वस्थ भी नही रह पाता। ऐसी स्थिति मे विद्याध्ययन करने मे बाधा उत्पन्न हो जाती है।

विद्यार्थी का पाँचवाँ लक्षण स्त्री-त्यागी अथवा ब्रह्मचर्य का पालन करना होता है। जो विद्यार्थी अपने अध्ययन-काल मे ब्रह्मचर्य का पालन न करके भोग विलास का जीवन व्यतीत करने लग जाते हैं, उनका विद्यार्थी-जीवन बिगड जाता है और वे अपने उद्देश्य मे विफल हो जाते हैं।

उपर्युक्त प्रमुख पांच लक्षणो के अतिरिक्त कुछ अन्य लक्षण और भी हैं। विद्यार्थी मे गुरू, माता पिता तथा बडे लोगों के प्रति श्रद्धा होनी चाहिए तथा उसके

व्यवहार में नम्रता होनी चाहिए। नम्रता और श्रद्धा के अभाव में वह गूढ ज्ञान प्राप्त करने से वंचित रह जाता है। विद्यार्थी के जीवन में नियमितता होनी चाहिए। उसके सोने-जगने, पढ़ने-लिखने और खेलने-कूदने का एक निश्चित् कार्यक्रम होना चाहिए तथा निर्धारित कार्य क्रमानुसार ही उसकी दिनचर्या होनी चाहिए। विद्यार्थी के लिए परिश्रमी होना भी आवश्यक है। परिश्रम से जी चुराने वाला विद्यार्थी अपने जीवन को सफल नहीं बना सकता।

4. विद्यार्थी के कर्त्तव्य—विद्यार्थी के कुछ विशेष कर्त्तव्य हैं जिनका पालन उसे अपने विद्यार्थी-जीवन में अवश्य करना चाहिए :—

(i) **समय का सदुपयोग**—विद्यार्थी-जीवन एक निश्चित् अवधि का होता है। इस अवधि के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग किया जाना विद्यार्थी-जीवन की सफलता के लिए आवश्यक है। फालतू बैठे रहना, मित्रों के साथ गप्पें लड़ाना तथा आवश्यकता से अधिक मनोरंजन के कार्यों में समय गुजारना समय का दुरुपयोग करना है। विद्यार्थी को इन बुराइयों से बचना चाहिए। ।

(ii) **अनुशासन और आज्ञा पालन**—गुरुजनों की आज्ञा का पालन करना तथा अनुशासन में रहना विद्यार्थी का प्रमुख कर्त्तव्य है इसके अभाव में न तो वह सही दिशा में अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है और न ही उसे अच्छे संस्कार मिल सकते हैं।

(iii) **सादगी और सरलता**—विद्यार्थी को अपने जीवन में सादगी और सरलता को अपनाये रहना चाहिए। तटक-भड़क, दिखावा और फैशन के चक्कर में पड़ जाने वाले विद्यार्थी अपने मार्ग से भटक जाते हैं और उनका विद्यार्थी-जीवन विफल हो जाता है।

(iv) **सत्संगति**—जीवन में संगति का महत्त्व सर्वोपरि है। अच्छी संगति से जीवन में सुधार होता है और बुरी संगति जीवन को बिगाड़ देती है। विद्यार्थी का कर्त्तव्य है कि वह अच्छे लोगों की संगति में रहे और बुरे लोगों की संगति से बचे। अनेक प्रकार की बुरी आदतें और दुर्व्यसन बुरी संगति की ही देन होती हैं।

(v) **अध्ययन के साथ व्यायाम**—मानसिक विकास के साथ-साथ शारीरिक विकास होना भी आवश्यक है। अतः विद्यार्थी को चाहिए कि वह विद्याध्ययन के साथ-साथ नियमित रूप से खेल-कूद तथा अन्य प्रकार का व्यायाम करता रहे। विद्यार्थी-जीवन भावी जीवन की तैयारी का समय होता है। अतः बौद्धिक विकास के साथ शरीर को भी स्वस्थ और सबल बनाना आवश्यक है।

5. स्वतंत्र भारत के विद्यार्थी—बड़े खेद का विषय है कि हमारे देश की जनता के प्रत्येक वर्ग ने आज स्वतन्त्रता का अर्थ स्वच्छंदता समझ लिया है। मजदूर, किसान कर्मचारी, व्यापारी, राजनेता और विद्यार्थी सभी स्वच्छन्द हो गये हैं। विद्यार्थी-समाज ने तो सभी मान्य मर्यादाएँ त्याग दी हैं और स्वच्छन्दता तथा अराजकता की सीमाएँ लाँघना

जा रहा है। अनुशासन, नम्रता, आज्ञा-पालन, सदाचार, सादगी और शिष्टाचार से जैसे उनका कोई सम्बन्ध ही नही रह गया है। आज का विद्यार्थी क्या नही कर सकता। हड़ताल घेराव और तोड-फोड जैसी असामाजिक गति विधियों से लेकर मारपीट तथा हिंसा जैसे जघन्य अपराधो मे भी उसे कोई हिचक नही है। आदर के पात्र गुरु कहलाने वाले अध्यापको के साथ अशिष्टता और मारपीट करने की बात अब सामान्य सी हो गई है। खुले आम शराब आदि मादक द्रव्यो का सेवन करना और सगठित गिरोह के रूप मे किसी भी स्थान पर आतंक फैला देना वे अपनी बहादुरी समझने लगे है। पढलिख कर ज्ञानार्जन करना तथा शालीनता एव शिष्टतापूर्ण आचरण से अपने व्यक्तित्व का विकास करने की बात को अब दकियानूसी विचारधारा समझा जाने लगा है। विद्यार्थी-समाज की यह स्थिति निश्चय ही देश और समाज के लिए घातक सिद्ध हो रही है।

6. उपसहार—आज का युग प्राचीन युग मे प्राय सभी मामलो मे भिन्न है। प्राचीन मान्यताएँ और धारणाएँ बदल गई हैं। जीवन के कुछ मूल्य भी बदले हैं और इस बुद्धि प्रधान भौतिक युग मे समाज का एक नया स्वरूप उभर कर सामने आ रहा है। ऐसी स्थिति मे प्राचीन परिपाटी को पकड़े रहने का आग्रह करना तो किसी भी दशा मे उपयुक्त नहीं होगा किन्तु विद्यार्थी जीवन का महत्त्व आज भी उतना ही है बल्कि स्वतन्त्र भारत मे प्रत्येक व्यक्ति सुयोग्य नागरिक बने, इसके लिए आधुनिक विद्यार्थी को कर्त्तव्य निष्ठ होना और भी आवश्यक हो गया है। उसे इस नये वातावरण मे भी अनुशासित रहकर परिश्रमी बनना ही पड़ेगा। ज्ञान प्राप्ति के लिए उसमे नम्रता और श्रद्धा होनी चाहिए। दुर्व्यसना से दूर रहकर अपने मे सद्गुणो का विकास करना ही होगा। शुद्ध स्वार्थ-बुद्धि की दृष्टि से भी उसकी आत्मोन्नति कर्त्तव्य-पालन से ही सम्भव हो सकेगी।

□□□

4 | परिश्रम का महत्त्व

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. परिश्रम का आशय
3. परिश्रम की आवश्यकता
4. परिश्रम का महत्त्व
5. उपसंहार

1. प्रस्तावना—हम जब अपने चारों ओर के वातावरण पर दृष्टि डालते हैं तथा समाचार पत्रो, रेडियो और दूरदर्शन के माध्यम से देश-विदेश की स्थिति की जानकारी प्राप्त करते हैं तो हम पाते हैं कि एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति की स्थिति भिन्न है। एक समाज से दूसरे समाज और एक देश से दूसरे देश की स्थिति मे पर्याप्त अन्तर है। कोई अत्यन्त निर्धनता मे अभावो से ग्रस्त होकर नारकीय जीवन बिताने को विवश है तो कोई सब प्रकार के साधन-सुविधाओं से पूर्ण स्वर्गीय जीवन बिता रहा है। व्यक्ति-व्यक्ति की स्थिति में इतना अधिक अन्तर प्रकृति की देन नही है। प्रकृति ने अपनी ओर से सभी मनुष्यो को लगभग समान साधन और शक्तियाँ दी हैं। सभी को ज्ञानेन्द्रियो, कर्मेन्द्रियो और बुद्धि का वरदान दिया है किन्तु फिर भी एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य की स्थिति मे आकाश-पाताल का अन्तर होना यह सिद्ध करता है कि इस स्थिति के लिए मनुष्य स्वयं जिम्मेदार है। जो प्रकृति द्वारा प्रदत्त साधनो का भरपूर उपयोग करते हैं, वे अच्छी से अच्छी स्थिति मे पहुँच जाते हैं और जो इन साधनो का उचित मात्रा मे उपयोग नही करते, वे हीनावस्था मे चले जाते हैं।

2. परिश्रम का आशय—मन और बुद्धि के संयोग से ज्ञानेन्द्रियो और कर्मेन्द्रियो का अधिकाधिक उपयोग करना ही परिश्रम कहलाता है। इसे दूसरे शब्दो मे हम यों भी समझ सकते हैं कि किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उचित रीति मे मन लगाकर बार-बार प्रयत्न करना ही परिश्रम कहलाता है। उदाहरण स्वरूप किसी विद्यार्थी का लेख खराब है और वह उसे सुधारना चाहता है तो पहले उसे अपने मन मे यह निश्चय करना होगा कि उसे अपना लेख सुधारना है। फिर बुद्धि से सुधारने की युक्ति सोचनी होगी या किन्ही लोगो से पूछ कर युक्ति समझनी होगी और फिर उस युक्ति के अनुसार बार-बार अभ्यास करना होगा। कालान्तर

मे उसका लेख निश्चय ही सुधर जायेगा और वह अपने उद्देश्य मे सफल हो जायेगा। उसका यह समस्त क्रिया-कलाप परिश्रम ही कहलायेगा।

3. परिश्रम की आवश्यकता—जीवन मे परिश्रम सबसे अधिक आवश्यक होता है। परिश्रम के बिना मानव-जीवन का कोई अस्तित्व ही नही है। अपनी सामान्य दिनचर्या मे उठने-बैठने और हाथ-पाँव हिलाने-डुलाने से लेकर अपनी आजीविका के लिए अथवा किसी से मिलने-जुलने जाना-आना परिश्रम के अन्तर्गत ही आता है। बिना परिश्रम के साधारण से साधारण काम भी नही हो सकता फिर बडे और महान् कार्यों की तो बिना परिश्रम के कल्पना ही नही की जा सकती। इस सम्बन्ध मे कवि रहीम की उक्ति बहुत सार्थक है —

> **श्रम ही सों सब मिलत है, बिनु श्रम मिले न काहि।**
> **सीधी अ गुरी घी जम्यो, क्यो हू निकसत नाहि ॥ ,**

जमा हुआ घी सीधी अगुली से नही निकल पाता। उसे निकालने के लिए अगुली को टेढा करना ही पडता है और यह टेढा करना परिश्रम के अन्तर्गत ही आता है। सस्कृत की एक सूक्ति और देखिए—

> **'उद्यमेन हि सिद्ध्यति कार्याणि न मनोरथै,**
> **न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगा ॥'**

अर्थात् ससार के सभी कार्य उद्यम (परिश्रम) करने से ही सिद्ध होते हैं। केवल इच्छा करने मात्र से कुछ भी प्राप्त नही होता। सिंह अत्यन्त बलवान् पशु है किन्तु उसके सोते हुए के मुँह मे कोई पशु नही चला जाता। उसे अपना आहार प्राप्त करने के लिए परिश्रम करना ही पडता है।

इस प्रकार के अनेक उदाहरण हम स्वय ढूँढ सकते हैं। परिश्रम की आवश्यकता हम अपने दैनिक जीवन मे हर क्षण अनुभव करते हैं। अत हमे यह भली-भाँति समझ लेना चाहिए कि परिश्रम हमारे जीवन का एक आवश्यक अग है।

4. परिश्रम का महत्त्व—परिश्रम का जीवन मे बहुत अधिक महत्त्व है। परिश्रम के बल पर असाध्य कार्य भी साध्य हो जाते हैं और असम्भव भी सम्भव हो जाता है। ससार का कोई भी कार्य ऐसा नही है जो परिश्रम के बल पर पूरा न हो सके। कवि रहीम ने इसे यो समझाया है —

> **'करत-करत अभ्यास के, जडमति होत सुजान।**
> **रसरी आवत जात ते, सिल पर होत निशान ॥'**

अभ्यास करते रहने से महामूर्ख भी ज्ञानी हो जाता है। जिस प्रकार कुए की पाल के पत्थर पर रस्सी के बार-बार आने-जाने की रगडक से गहरा निशान बन जाता है। जब महामूर्ख और कठोर पत्थर की स्थिति मे अभ्यास (परिश्रम) करते रहने से इतना अन्तर पड जाता है तो सामान्य व्यक्तियो की तो बात ही क्या है। परिश्रम के बल पर मनुष्य जो चाहे, सो प्राप्त कर सकता है।

हमारे धर्माचारियों ने जीवन के चार पुरुषार्थ बतलाये हैं—(1) धर्म (2) अर्थ (3) काम (4) मोक्ष। ये चारों ही पुरुषार्थ परिश्रम के बल पर ही सिद्ध हो सकते हैं। परिश्रम के अभाव में मनुष्य अपने स्वयं का ही कोई हित नहीं कर पाता तो उसके द्वारा परहित की बात अथवा किसी प्रकार का धर्माचरण करने की बात तो सोचना भी उचित नहीं है। अर्थोपार्जन अथवा धन कमाना परिश्रम के बिना कैसे सम्भव हो सकता है ? संसार के सभी भोग-विलास और इच्छाओं की प्राप्ति के लिए भी परिश्रम आवश्यक है और मोक्ष प्राप्ति के लिए त्याग, तपस्या, भजन और ध्यान ये सभी श्रम साध्य हैं। परिश्रम से ये सभी पुरुषार्थ सिद्ध होते हैं। परिश्रम के बल पर ही मनुष्य अपना जीवन सफल बना सकता है।

मानव-जीवन की उन्नति का प्रमुख साधन परिश्रम ही है। जो मनुष्य जितना अधिक परिश्रम करता है, वह अपने जीवन में उतना ही अधिक सफल होता है। आज विज्ञान अपनी उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच गया है। चिकित्सा, यातायात, संचार, युद्ध तथा अन्तरिक्ष यात्रा आदि सभी क्षेत्रों में आश्चर्यजनक उपलब्धियाँ प्राप्त की जा चुकी हैं। इन सब उपलब्धियों का यदि कोई रहस्य है तो वह है वैज्ञानिकों के द्वारा किया गया निरन्तर कठोर परिश्रम। आगे आने वाले वर्षों में विज्ञान और भी उन्नति करेगा। इसका कारण यही है कि वैज्ञानिक अब भी नयी-नयी खोज और नये-नये आविष्कार करने के कार्य में जुटे हैं और निरन्तर कठोर परिश्रम कर रहे हैं।

परिश्रमी व्यक्ति में धैर्य, साहस, कष्ट-सहिष्णुता और आत्म-विश्वास के गुण उत्पन्न हो जाते हैं। वह अपने मार्ग में आनेवाली किसी बाधा से नहीं घबराता बल्कि अपने परिश्रम के बल पर उन बाधाओं को ही दूर हटा देता है। वास्तव में सफलता का रहस्य परिश्रम ही है। परिश्रमी व्यक्ति दुःख-सुख की परवाह किये बिना अपने कार्य में लगा रहता है और अन्ततोगत्वा सफल हो ही जाता है। संस्कृत में एक सूक्ति है—

'मनस्वी कार्यार्थी गणयति सुखं न च दुखम्'

कभी-कभी हमें ऐसा लगता है कि किसी कार्य में हमने परिश्रम तो बहुत किया किन्तु फिर भी हम सफल नहीं हो सके और इसका कारण हम यह समझ लेते हैं कि भाग्य ने हमारा साथ नहीं दिया। ऊपरी तौर से देखने पर तो यह बात सत्य दिखाई देती है किन्तु यदि गहराई से सोचें तो हम समझ सकेंगे कि भाग्य अपने आप में कोई अलग वस्तु नहीं है। हमारे द्वारा पूर्व में किये गये परिश्रम का फल ही भाग्य बन कर हमारे सामने आता है। जब हम किसी कार्य में असफल होते हैं तो इसका एक मात्र कारण यही होता है कि हमारे प्रयत्न में कहीं न कहीं कमी अवश्य रह जाती है। सोच-समझकर विधिपूर्वक किया गया प्रयत्न कभी असफल हो ही नहीं सकता।

आज संसार के देशों में अमेरिका, रूस, जापान, चीन और इंगलैंड ये देश पूर्ण विकसित और समृद्ध माने जाते हैं। इसका कारण इन देशों की प्राकृतिक सम्पदा या अन्य कोई बात नहीं है। मुख्य बात है इनके नागरिकों की परिश्रम शीलता। इन देशों के नागरिक कठोर परिश्रमी हैं। व्यर्थ के दिखावे से दूर रहकर कठोर परिश्रम करने का उन्हें अभ्यास है। दूसरे महायुद्ध में जापान बुरी तरह से तहस-नहस कर दिया गया था किन्तु वहाँ के नागरिकों ने अपने परिश्रम से जापान का पुनर्निर्माण किया और आज वह अमेरिका के मुकाबले का धनाढ्य देश बन गया है। विज्ञान का क्षेत्र हो या व्यापार का अथवा राजनीति का क्षेत्र हो या खेल-कूद का सभी क्षेत्रों में ये देश आगे रहते हैं। इसका एक मात्र कारण उनका परिश्रमी होना ही है।

5. उपसंहार—संसार को ज्ञान का प्रकाश दिखाने वाला और संसार का गुरु कहलाने वाला हमारा देश भारत आज सभी दृष्टियों से पिछड़ा हुआ है। इसके अनेक अन्य कारण भी होंगे किन्तु एक प्रमुख कारण यह है कि हमारे देश के लोग परिश्रम से जी चुराने वाले हैं। व्यापारी, कर्मचारी और श्रमिक सभी कम से कम कार्य करके अधिक से अधिक लाभ उठाने की कोशिश करते हैं। विद्यार्थी बिना पढ़े ही परीक्षा में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होने की बात सोचते हैं। जब श्रम का इस प्रकार घोर अनादर हो रहा है तो फिर लाभकारी परिणाम सामने कैसे आ सकते हैं ? इतना ही नहीं स्वतन्त्रता के बाद वाली नयी पीढ़ी तो ऐसी सामने आ रही है, जिसे शारीरिक श्रम से घृणा है। आज देश में व्याप्त बेरोजगारी, महगाई, भ्रष्टाचार और अराजकता का मूल कारण हमारा परिश्रम से जी चुराना ही है। यदि हम चाहते हैं कि हमारा देश सभी क्षेत्रों में आत्मनिर्भर बने, बेरोज-गारी और भ्रष्टाचार समाप्त हो तथा देश में अमन-चैन और खुशहाली आवे तो हमें व्यक्तिगत तौर पर और सामूहिक तौर पर कठिन परिश्रम करना होगा। यही इन सब व्याधियों की एक मात्र रामबाण औषधि है। कवि जयशंकर प्रसाद की ये पंक्तियाँ देखिए—

> यह नीड़ मनोहर कृतियों का
> यह विश्व कर्म रंग स्थल है।
> है परम्परा लग रही यहाँ
> ठहरा जिसमें जितना बल है॥

□□□

5 | समय का सदुपयोग

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—जीवन मे समय का महत्त्व
2. समय के सदुपयोग की आवश्यकता
3. समय के सदुपयोग से लाभ
4. समय के सदुपयोग करने की विधि
5. उपसंहार

1. प्रस्तावना—यदि हम जीवन की व्याख्या करें और यह समझने का प्रयास करें कि जीवन क्या है, तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि जीवन वास्तव मे प्रकृति अथवा ईश्वर की ओर से मानव-जीवन के रूप में दिया गया एक निश्चित् समय है। जन्म के पश्चात् शैशवावस्था, फिर बाल्यावस्था, युवावस्था, प्रौढावस्था, वृद्धावस्था और मृत्यु–जीवन का यह क्रम निरन्तर अबाध गति से चलता रहता है। हमे पता ही नही चलता कि हमारे जीवन मे ये परिवर्तन कब और कैसे हो जाते हैं। यही समय का लक्षण है। समय निरन्तर गतिशील है। वह कभी एक क्षण के लिए भी नही रुकता। उसके बीत जाने पर ही पता चलता है कि समय चला गया और फिर वह लौट कर कभी नही आता। समय ही जीवन में सबसे अधिक मूल्यवान, शक्तिशाली और महत्त्वपूर्ण होता है। ठीक समय पर उचित निर्णय लेने वाले तथा उचित कार्य करने वाले लोग ही वांछित लाभ प्राप्त कर पाते हैं। जो लोग समय के महत्त्व को समझ नही पाते उनका समय व्यर्थ ही निकल जाता है और फिर वे जीवन भर पछताते रहते हैं। समय का महत्त्व समझ लेने वाले लोग जीवन की सफलता का रहस्य जान लेते हैं। समय का सदुपयोग करने की विधि वे सीख जाते हैं और कुछ भी प्राप्त करना उनके लिए कठिन नही होता।

2. समय के सदुपयोग की आवश्यकता—समय के सदुपयोग का अर्थ है—सदा कुछ न कुछ उपयोगी कार्य करते रहना और जीवन का एक क्षण भी व्यर्थ के कार्यों मे अथवा ठाले बैठकर नहीं बिताना। जिस समय जो कार्य करना अपेक्षित है उस समय वही कार्य करना। जीवन मे समय का सदुपयोग करना बहुत आवश्यक है क्योंकि समय पर वांछित कार्य करने से ही मनुष्य को लाभ होता है। समय एक अवसर ही तो है। जो लोग अवसर का लाभ नही उठाते- उपयुक्त समय पर वांछित कार्य नही करते—वे अवसर गँवा देते हैं और जीवन भर पछताते रहते हैं। उदाहरण के लिए

हम विद्यार्थी-जीवन को ही लें। यह वह समय है जब बालक अथवा नवयुवक को अपना शारीरिक, मानसिक और चारित्रिक विकास करने का सुअवसर प्राप्त होता है। वह सब प्रकार के पारिवारिक-सामाजिक दायित्वों से मुक्त होता है। अधिकाधिक ज्ञानार्जन करना, शरीर को सबल एवं स्वस्थ बनाना तथा अच्छी आदतें डालना ही विद्यार्थी-जीवन का लक्ष्य है। जो लोग समय का सदुपयोग करते हैं, इस अवसर का पूरा लाभ उठा लेते हैं। उनका जीवन सुखी, समृद्ध तथा सम्मानजनक बन जाता है। इसके विपरीत जो लोग समय का दुरुपयोग करते हैं, खेल-तमाशे और इधर-उधर के अन्य अनुपयोगी कार्यों में ही अपना समय गँवा देते हैं। उनके हाथ से जीवन निर्माण का यह अमूल्य अवसर निकल जाता है और फिर वे जीवन भर पछताते रहते हैं। लाख प्रयत्न करने पर भी वे इस अवसर को पुनः प्राप्त नहीं कर पाते। इसी तथ्य को गोस्वामी तुलसीदास ने अपने रामचरित मानस में प्रकाशित किया है

'का बरषा जब कृषी सुखाने
समय चूकि पुनि का पछताने ॥

3. समय के सदुपयोग से लाभ—जीवन की सफलता का रहस्य समय के सदुपयोग में ही छिपा हुआ है। जीवन का एक-एक क्षण मूल्यवान होता है। हमारे सामने कितनी ही कठिन परिस्थितियां हों, कैसी भी चुनौती हो लेकिन यदि हम समय का सदुपयोग करना जानते हैं तो हम उन परिस्थितियों पर विजय अवश्य प्राप्त कर लेंगे। समय का सदुपयोग करने की आदत से मनुष्य में उत्साह, कठोर श्रम, उत्तर दायित्व की भावना, कष्ट सहिष्णुता और सदाचार की भावना उत्पन्न हो जाती है। वह बुरी संगत, बुरी आदतें और दुर्व्यसनों से बच जाता है। जो लोग बुरी संगत और बुरी आदतों के शिकार होते हैं, समय का सदुपयोग करने की आदत बनाने पर वे भी इन बुराइयों से मुक्त हो जाते हैं। समय का सदुपयोग करने वाले लोग आर्थिक दृष्टि से समृद्ध, शारीरिक दृष्टि से नीरोग एवं सबल, चारित्रिक दृष्टि से सच्चरित्र और सामाजिक दृष्टि से सम्मानित होते हैं। संसार के सभी महापुरुषों के जीवन की घटनाओं और उनकी दिनचर्या की जानकारी करने पर यही तथ्य प्रमाणित होता है। उनकी महानता का मूल रहस्य समय का सदुपयोग करने की आदत ही रहा है। संसार के इतिहास में ऐसे अनेक महापुरुष, वैज्ञानिक, लेखक और समाज सुधारक हुए हैं जिन्होंने अपनी अल्पायु में ही बड़े-बड़े कार्य कर डालें। इसका यही रहस्य था कि उन्होंने समय के मूल्य को समझा था और जीवन के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग किया था। समय का सदुपयोग करके कोई भी सामान्य व्यक्ति महान् बन सकता है। जिस देश अथवा समाज में जितने अधिक लोग समय का सदुपयोग करते हैं वह देश अथवा समाज उतना ही अधिक उन्नत होता है। एक विचारक का कथन है कि किसी देश अथवा समाज के स्वरूप को देखना चाहो तो लोगों की दिनचर्या को देखो। इसका यही तात्पर्य है कि समय का सदुपयोग करने से ही व्यक्ति समाज और राष्ट्र का स्वरूप

उज्जवल बनता है। समय सर्वशक्तिमान होता है। समय की शक्ति और उसका मूल्य समझने वाले लोग स्वयं शक्तिमान बन जाते हैं। जो समय की परवाह नहीं करते, समय उनकी परवाह नही करता। गोस्वामी तुलसीदास ने समय की शक्तिमत्ता को इस प्रकार परिभाषित किया है—

'तुलसी नर को का बड़ो, समय बड़ो बलवान।
भीलन लूटी गोपिका, वहि अर्जुन वहि बान॥'

4. समय का सदुपयोग करने की विधि—समय का सदुपयोग करने के लिए सबसे पहली आवश्यकता है-समय के मूल्य को समझना। हमे यह भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि समय अमूल्य है और प्रतिक्षण बीतता जा रहा है। भूली हुई विद्या, नष्ट हुई सम्पत्ति और खोई हुई प्रतिष्ठा तथा बिछुड़े हुए लोग दुबारा मिल सकते हैं लेकिन बीता हुआ समय दुबारा कभी नहीं मिलता। समय निरन्तर गतिशील तथा परिवर्तनशील बना रहता है। वह कभी किसी की प्रतीक्षा नहीं करता। अतः समय को अमूल्य समझकर एक क्षण भी व्यर्थ नहीं खोना चाहिए। अपनी दिनचर्या इस प्रकार निर्धारित करनी चाहिए जिसमें जीवन का प्रत्येक क्षण उपयोगी कार्य मे ही व्यतीत हो। सोना, उठना, नित्यकर्म करना, पढ़ना-लिखना, व्यायाम करना, आजीविका चलाना तथा आमोद-प्रमोद के कार्य करना आदि सभी कार्य निर्धारित समय और निर्धारित अवधि में ही करने चाहिए। छुट्टी अथवा अवकाश के समय के उपयोग की भी एक योजना होनी चाहिए ताकि फालतू अथवा खाली समझे जाने वाले समय को भी उपयोगी कार्यों मे लगाया जा सके। शारीरिक श्रम के बाद मानसिक श्रम और मानसिक श्रम के बाद शारीरिक श्रम के कार्य करने से थकान दूर हो जाती है और कार्य करने मे रुचि बनी रहती है।

समय का सदुपयोग करने के लिए दूसरी आवश्यकता है-जीवन का एक महान् उद्देश्य निर्धारित करना। निरुद्देश्य कार्य करने वाले व्यक्ति का समय प्रायः व्यर्थ नष्ट होता है। इसके विपरीत जो लोग अपने जीवन का एक बड़ा उद्देश्य निर्धारित कर लेते हैं वे समर्पित भाव से उस उद्देश्य की प्राप्ति में ही लगे रहते हैं। उनका प्रत्येक क्षण उद्देश्य के चिन्तन और कार्यों मे ही बीतता है और इस प्रकार समय का सदुपयोग हो जाता है।

समय का सदुपयोग करने मे एक बड़ी बाधा आलस्य और दीर्घसूत्रता है। आलस्य मनुष्य का शत्रु है। आलसी व्यक्ति अपने जीवन का अधिकाश समय व्यर्थ ही गँवा देता है। अतः हमे आलस्य का त्याग करना चाहिए और जो कार्य करना है उसे कल पर न छोड़कर तत्काल कर लेना चाहिए। कबीर ने इसी तथ्य को प्रतिपादित करते हुए कहा है—

'काल करै सो आज कर, आज करै सो अब।
पल में परलै होयगी, बहुरि करैगो कब॥'

आलस्य के अतिरिक्त प्रमाद और दीर्घसूत्रता से भी समय का दुरुपयोग होता है। लापरवाह व्यक्ति समय का मूल्य नही पहचान पाता। इसके साथ ही बुरे लोगो की सगति और दुर्व्यसनो की आदत भी समय का दुरुपयोग करती है। अत समय का दुरुपयोग करने के लिए कुसगति तथा दुर्व्यसनो को पूरी तरह से त्याग देना चाहिए।

5 उपसहार—समय के मूल्य को पहचानने वाले तथा समय का सदुपयोग करने वाले लोग ही जीवन मे सफल होते है। धन, विद्या, बल, पद, प्रतिष्ठा, यश और ईश्वर-प्राप्ति आदि सभी पुरुषार्थ वे सरलता मे प्राप्त कर लेते हैं। उनके लिए जीवन मे कुछ भी प्राप्त करना असम्भव नही होता। ये लोग न केवल अपना ही, बल्कि अपने साथ ही अपने परिवार, समाज और राष्ट्र का भी कल्याण कर देते हैं। वे महापुरुष कहलाते हैं और अनन्त काल तक अपने आदर्शों तथा कार्यों से आगे आने वाली पीढियो को प्रेरणा देते रहते हैं।

यह दुर्भाग्य की बात है कि हम भारतीय समय का मूल्य नही पहचानते और व्यर्थ की गपशप तथा प्रदर्शन के कार्यों मे अपने जीवन का बहुत अधिक समय बर्बाद कर देते हैं। समय की पाबन्दी बरतने मे हम बहुत शिथिल हैं। यही कारण है कि हमारा देश ससार के अन्य देशो की तुलना मे अनेक क्षेत्रो मे बहुत अधिक पिछडा हुआ है। हमे और विशेष रूप से हमारी नयी पीढी को चाहिए कि वह समय का सदुपयोग करने की आदत डालें जिससे व्यक्ति समाज और राष्ट्र सभी का हित हो सके।

□□□

6 | परोपकार

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. परोपकार का आशय
3. मानव-जीवन और परोपकार
4. परोपकार का क्षेत्र
5. कुछ आदर्श
6. उपसंहार

1. प्रस्तावना—पाप और पुण्य की परिभाषा करना एक अत्यन्त कठिन कार्य है। एक व्यक्ति किसी कार्य को पाप समझ कर उससे बचने का प्रयास करता है तो दूसरा व्यक्ति उसी कार्य को बड़ी रुचि से करता देखा जाता है। कुछ लोग झूठ और बेईमानी को पाप समझ कर इनसे बचने का प्रयास करते रहते हैं और बदले में अनेक प्रकार के अभावों का कष्ट उठाते रहते हैं। इसके विपरीत कुछ लोग झूठ, बेईमानी और पाखंड को ही अपना धर्म बना लेते हैं। वे बेईमानी करने का कोई अवसर हाथ से नहीं जाने देते और प्रत्यक्ष में वे सब प्रकार के साधन-सुविधाओं से सम्पन्न होकर सुखी जीवन व्यतीत करते प्रतीत होते हैं। ऐसे उदाहरण हम अपने दैनिक जीवन में नित्य ही देखते रहते हैं। सामान्य व्यक्ति की बात ही क्या, बड़े-बड़े चिन्तक और विचारक भी एक मत होकर नहीं बता पाते कि वास्तव में पाप और पुण्य की सर्व-मान्य परिभाषा क्या है। इस सम्बन्ध में प्राचीन मनीषी वेदव्यास का मत सटीक और सही प्रतीत होता है। उन्होंने पाप और पुण्य की परिभाषा बतलाते हुए थोड़े बहुत शब्दों में स्पष्ट कर दिया था कि हमारे जिस कार्य से दूसरों को कष्ट पहुंचता है, वह पाप है और हमारे जिस कार्य से दूसरे का हित होता है, वह पुण्य है।

'अष्टदश पुराणेषु व्यासस्य वचन द्वयम्
परोपकार: पुण्याय, पापाय पर पीड़नम्'

2. परोपकार का आशय—वेदव्यास की परिभाषा के अनुसार परोपकार ही एक मात्र हमारा धर्म है। परोपकार शब्द पर+उपकार के संधियोग से बना है जिसका सीधा सादा अर्थ है—दूसरों की भलाई। पर अर्थात् दूसरो से आशय उन व्यक्तियों और प्राणियों से है, जिनसे हमारा सीधा कोई सम्बन्ध नहीं है। ऐसे लोगों के हित के कार्य करना ही परोपकार कहलाता है। अपने परिजनों, मित्रों,

सगे-सम्बन्धियो और परिचितो के कल्याण के कार्य करना परोपकार के अन्तर्गत नही आ सकता। क्योकि उनके हित से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हमारा स्वय का भी हित जुडा रहता है। परोपकार तो तभी माना जायगा जबकि हम किसी ऐसे व्यक्ति अथवा प्राणी का हित करें जिससे हमारा प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से कभी कोई सम्बन्ध न था, न है और न रहेगा। जब हम केवल मानवीय दृष्टिकोण के आधार पर किसी का हित करते हैं, तभी वह परोपकार कहलाता है।

3. मानव जीवन और परोपकार—मानव-जीवन अन्य प्राणियो के जीवन से इसी आधार पर भिन्न है कि उसमे अपने अतिरिक्त दूसरो के हित के कार्य करने की भी समझ है। इसी समझ का नाम मानवता है। प्रेम, दया, सहानुभूति, त्याग और बलिदान आदि गुण मनुष्य मे ही पाये जाते हैं। यदि हम यह कहे कि इन गुणो के समूह का नाम ही मानवता है तो यह उचित ही होगा क्योकि अन्य प्राणियो से मानव जाति की पहचान को अलग से बतलाने वाले यही गुण हैं। इन गुणों से विहीन मनुष्य और पशु मे कोई अन्तर नही है। ऐसा मनुष्य पूँछ और सींग से विहीन मनुष्य का शरीर धारण किये बिना पशु ही है।

परोपकार एक उदात्त भाव है। मानवता के उपर्युक्त गुण ही परोपकार के भाव को जन्म देते हैं। जिसके हृदय मे प्रेम, दया, सहानुभूति और त्याग के भावो का अस्तित्व ही न हो वह दूसरो के कष्टो को समझ ही नही सकता और यदि किसी प्रकार समझ भी ले तो उनको दूर करने के लिए प्रयत्न करने की बात तो उसकी समझ मे आ ही नही सकती। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि परोपकार का सम्बन्ध मानवता से ही है।

मानव-जीवन की सार्थकता परोपकार करने मे ही है। मानव शरीर धारण करके यदि परोपकार नहीं किया तो समझना चाहिए उसका यह दुर्लभ जन्म व्यर्थ ही चला गया। परोपकार के बिना मनुष्य, मनुष्य कहलाने का अधिकारी ही नही है। कवि मैथिलीशरण गुप्त के शब्दो में देखिए—

'यह पशु प्रवृत्ति है कि आप आप ही चरे।
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे॥'

हमारी भारतीय सस्कृति मे धर्म का अर्थ स्वाभाविक कर्त्तव्य से लिया जाता है। परोपकार मनुष्य का धर्म माना गया है। गोस्वामी तुलसीदास ने इसे बडे स्पष्ट रूप से समझाया है—

'परहित सरिस धरम नहिं भाई
पर पीडा सम नहिं अधमाई॥

ससार के इतिहास की बात छोड भी दें तो भी हमारे भारत का इतिहास परोपकार को अपना धर्म समझ कर अपना सर्वस्व त्याग देने वाले महापुरुषो की कथाओ के गौरव से भरा पडा है। उनके त्याग का स्मरण करके आज भी हमारा

ही नहीं संसार के मानव समाज का मस्तक गौरव से उन्नत हो रहा है। महर्षि दधीचि का लोक-कल्याण के लिए अपनी अस्थियों का दान करना, रन्तिदेव का भूखे होने पर भी परोसे हुए थाल को अपने से अधिक भूखे व्यक्ति को दान कर देना, राजा शिवि द्वारा एक पक्षी के प्राण बचाने के लिए अपने शरीर का मास काट कर दे देना, परोपकार के ऐसे उदाहरण हैं जिनकी कोई मिसाल नहीं है। महात्मा बुद्ध और भगवान महावीर द्वारा लोक-कल्याण के लिए सर्वस्व त्याग करना परोपकार के धर्म का पालन करना ही है। परोपकारी लोगों के ऐसे असंख्य उदाहरण हमे मिल सकते हैं। संत महात्माओं का तो अवतार ही परोपकार के लिए होता है। अपनी तपस्या के बल पर वे अनेक सिद्धियाँ प्राप्त कर लेते हैं किन्तु उनका उपयोग वे स्वय अपने हित में कभी नही करते। उनके जीवन का लक्ष्य ही परोपकार करना होता है। महात्मा कबीर के शब्दों में देखिए—

'तरवर सरवर संतजन चौथा बरसण मेह।
परमारथ के कारणे च्यारों धारी देह॥'

ईश्वर प्राप्ति के लिए ज्ञान, ध्यान, भजन और कीर्तन ये सब सांवन माने गये हैं किन्तु परोपकार के भाव के अभाव में ये सब साधन फीके हैं। समस्त सृष्टि ईश्वर ही की रचना है। उसकी इस रचना की उपेक्षा करके उसकी प्रार्थना करना असंगत बात जान पड़ती है। संसार के प्राणी मात्र से प्रेम करना, उनके हित मे लगे रहना ही ईश्वर की सच्ची प्रार्थना और सेवा है। एक अंग्रेज मनीषी ने इसे यों समझाया है—

" The best way to pray to god is to love his creatiɔn."

संसार के सभी धर्मों ने परोपकार को मान्यता दी है और परहित के कार्यों को ईश्वर की सेवा माना है। प्रेम, दया और दीन-दुखियो की सेवा को सभी धर्मों मे एक व्रत के रूप में स्वीकार किया है। हिन्दू धर्म के अतिरिक्त बौद्ध, जैन और ईसाई धर्मों में तो परोपकार के कार्य को अत्यधिक महत्त्व मिला है। छोटे-बड़े औषधालयों, विद्यालयों, जलाशयों और धर्मशालाओं के निर्माण परोपकार की भावना से करवाये गये हैं। इनके अतिरिक्त अन्य अनेक कार्य परोपकार की भावना से करवाये जाते हैं।

प्रकृति स्वयं अपने आचरण से हमें परोपकार करने की प्रेरणा देती है। वृक्ष स्वयं फल नहीं खाते और नदियाँ स्वयं पानी नहीं पीती। प्रकृति के समस्त क्रिया कलाप दूसरों के ही लिए होते हैं। वास्तव में मनुष्य-जीवन की सार्थकता परोपकार में ही है। परोपकार एक उदात्त भाव होने के कारण इससे अनिर्वचनीय सुख और सतोष मिलता है। किसी भूखे को रोटी खिलाने से, असहाय की सहायता करने से और पीड़ित के प्रति सहानुभूति व्यक्त करने से जो सुख और सन्तोष मिलता है तथा मन में जो अपार शान्ति का अनुभव होता है, उसको तो वही जान सकता

है जिसने परोपकार किया हो। कवि रहीम ने इसे यो समझाया है—

> ' रहिमन यों सुख होत है, पर उपकारी अंग।
> बाटन वारे को लगै, ज्यो मेहदी को रग ॥ '

4. परोपकार का क्षेत्र—परोपकार का क्षेत्र बहुत विस्तृत और व्यापक है। किसी दुखी प्राणी की सहायता करना ही परोपकार नही है बल्कि तन, मन, धन, वचन और बुद्धि से किसी भी प्रकार दूसरो का हित करना परोपकार के अन्तर्गत आता है। परोपकार के लिए हमे किसी विशेष व्यक्ति, स्थान, समय अथवा परिस्थिति की प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नही है। परोपकार के अवसर तो हमारे पास सदा सुलभ रहते हैं। हम जिस समय जिस स्थान पर हैं, वही हमारे पास परोपकार के अनेक अवसर उपलब्ध रहते है। जब हम एकान्त मे अकेले बैठे अपने मन मे यह विचार भी करते हैं कि अमुक व्यक्ति का हम किस प्रकार हित करे, तो हमारा यह आचरण भी परोपकार के अन्तर्गत ही आता है।

उपसहार—हमारे देश मे परोपकार की भावना आदिकाल से ही प्रवाहित होती चली आ रही है। परोपकार हमारी सस्कृति का एक प्रमुख अग है। परोपकार की भावना से प्रेरित होकर हमारे देश के निवासियो ने मानवता की अनुपम सेवा की है। आज के बुद्धिवादी तर्क प्रधान युग मे दया, प्रेम, सहानुभूति और परोपकार के भाव को निरी भावुकता समझ कर मूर्खता भी समझा जाने लगा है किन्तु ऐसी समझ मानवता की विरोधिनी है। आज ससार मे चारो ओर कलह, अशान्ति और अराजकता व्याप्त है। यह इसी छिछली समझ और स्वार्थवाद को अत्यधिक महत्त्व देने का ही परिणाम है। आज भी यदि विनाशोन्मुख ससार को कोई बचा सकता है और सब जगह सुख शाति का साम्राज्य स्थापित कर सकता है तो वह है भारतीय ऋषि मुनियो के द्वारा विश्व-कल्याण की कामना के लिए बतलाया गया यह भाव-सूत्र—

> ' सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामयाः।
> सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित् दु ख भाग् भवेत् ॥ '

□□□

7 | स्वावलम्बन अथवा आत्म-निर्भरता

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—स्वावलम्बन का आशय
2. स्वावलम्बन का महत्व
3. स्वावलम्बन से लाभ
4. उपसंहार

प्रस्तावना—स्वावलम्बन का आशय—संसार में सभी प्रकार के लोग निवास करते हैं। कुछ लोग परमुखापेक्षी होते हैं जो अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दूसरो की सहायता की अपेक्षा रखते हैं, दूसरों की सहायता के बिना उनका काम ही नही चलता। इसके विपरीत कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं ही करते है। उन्हें अपने किसी कार्य के लिए दूसरों का मुँह ताकना अच्छा नही लगता। ऐसे ही लोग स्वावलम्बी या आत्मनिर्भर कहलाते हैं। स्वावलम्बन शब्द 'स्व+अवलम्बन' इन दो शब्दों के मेल से बना है। 'स्व' का अर्थ है-खुद, निज, स्वयम् अथवा अपना। 'अवलम्बन' का अर्थ है-आधारित अथवा भरोसे पर रहना। इस प्रकार स्वावलम्बन का अर्थ है- अपने स्वयं पर आधारित होना। जो लोग अपनी स्वयं की शक्ति, सामर्थ्य, योग्यता और गुणो पर आधारित होते है, वे स्वावलम्बी कहलाते हैं। वे अपने सब काम स्वयं ही करते हैं और अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति अपने ही बलबूते पर करते हैं। ऐसे लोगों को दूसरे शब्दों मे आत्म-निर्भर भी कहा जाता है।

2. स्वावलम्बन का महत्व—स्वावलम्बन की भावना एक दैवी गुण है। यह मनुष्य का एक उदात्त भाव है। स्वावलम्बन का भाव मन में आते ही मनुष्य का व्यक्तित्व आदर्श गुणो से युक्त हो जाता है। स्वावलम्बी मनुष्य मे स्वाभिमान जागृत हो जाता है। उसे अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए किसी से याचना करने में अपना अपमान महसूस होता है। उसका सम्पूर्ण जीवन स्वावलम्बनपूर्ण होता है। वह किसी मामले में भी पराश्रित नही रहता। अपने सुखमय जीवन के लिए वह अथक प्रयास और कठोर परिश्रम करता है तथा जीवन-यापन के लिए सभी सामग्री और सुविधाएँ स्वयं ही जुटाता है वह बात-बात में दूसरो का सहारा नही ढूंढता, बल्कि दूसरे लोग ही उससे सहायता की याचना करते हैं।

स्वावलम्बन का भाव मनुष्य को स्वतंत्र और निर्भीक बनाता है। स्वतंत्रता की अनुभूति मनुष्य के लिए सबसे अधिक सुखकर होती है क्योंकि पराधीन व्यक्ति कभी सुखी हो ही नही सकता। गोस्वामी तुलसीदास के शब्दो मे—

'पराधीन सपने सुख नाहीं
करि विचार देखो मन माहीं।'

पराधीन रहकर सोने के थाल मे षट्रस व्यजन खाने वाले व्यक्ति की तुलना मे स्वाधीन रहकर रूखा-सूखा खाने वाला व्यक्ति अधिक सुखी होता है। स्वाधीनता की रक्षा स्वावलम्बन के बिना सम्भव नही हो सकती। पराश्रय और पराधीनता मे कोई अन्तर है ही नही। जो लोग पराश्रित होते है, वे निर्भीक नही हो सकते। उनके मन मे हमेशा यह भय बना रहता है कि जिनके सहारे उनका काम चल रहा है, वे किसी बात पर उनसे अप्रसन्न न हो जाँय। इसी से भयभीत होकर वे उनकी खुशामद और गुलामी मे लगे रहते हैं। अनेक अवसरो पर अपनी आत्मा की आवाज को दबाकर भी उनकी हाँ मे हाँ मिलाते रहते हैं। स्वावलम्बन ही एक मात्र ऐसा गुण है जो मनुष्य के मन को निर्भीक और आत्मा को प्रबल बनाता है।

स्वावलम्बन मनुष्य मे उत्साह, धैर्य और कष्ट सहिष्णुता के गुण उत्पन्न करता है। उत्साह से कार्य करने पर ही मनुष्य को सफलता मिलती है। स्वावलम्बी व्यक्ति मे उत्साह सदा बना रहता है। वह अपनी पूरी शक्ति और क्षमता के साथ अपना कार्य पूरा करने मे जुटा रहता है। यदि उसके कार्य के सफल होने मे विलम्ब भी होता है तो वह धर्म नहीं खोता और उसका उत्साह बना ही रहता है। स्वावलम्बी व्यक्ति को अनेक अवसर पर अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पडते है किन्तु वह कष्टों से विचलित नही होता। स्वावलम्बन की अनुभूति का आनन्द उसे कष्ट का अनुभव होने ही नही देता। उसे चिलचिलाती धूप मे चाँदनी की सी शीतलता का आनन्द मिलता है। घोर निर्जन वन मे बनी झोंपडी मे रहने मे उसे राजमहलो के से आनन्द की अनुभूति होती है। वनवास के समय कुटिया मे रह रही सीता ने स्वावलम्बन के भाव के कारण ही कवि मैथिलीशरण गुप्त के शब्दो मे कहा था—

'मेरी कुटिया मे राज भवन मन भाया।'

आत्म नियन्त्रण, आत्म-विश्वास और सतोष ऐसे गुण है जो स्वावलम्बन से ही उत्पन्न होते हैं। स्वावलम्बी व्यक्ति अपने ही साधनों से काम चलाने मे विश्वास करता है। अनेक अवसरो पर वह अपनी इच्छाओ को सीमित रखता है और अनेक प्रकार से आत्म नियन्त्रण भी करता है। वह दूसरो के वैभव को देखकर ईर्ष्या नही करता और सुख-सुविधा के साधनो को जुटाने मे अनैतिक तरीके नहीं अपनाता। वह जानता है कि सच्चा और स्थाई सुख इच्छाओ की पूर्ति मे नहीं बल्कि आत्म-नियन्त्रण और सतोष मे ही है। स्वावलम्बन की भावना

मनुष्य में आत्म-विश्वास का भाव जागृत कर देती है। आत्म-विश्वास के कारण उसमें दृढ़ निश्चय के साथ आगे बढ़ने का उत्साह उत्पन्न हो जाता है। ऐसे व्यक्ति के लिए संसार में कुछ भी प्राप्त कर लेना असम्भव नहीं होता है। अपनी प्रबल इच्छा-शक्ति के बल पर वह जो चाहता है, उसे वही मिलकर रहता है।

3. स्वावलम्बन से लाभ—जैसाकि पहले कहा जा चुका है, स्वावलम्बन मनुष्य का एक दैविक गुण है। व्यक्ति में स्वावलम्बन का भाव स्थायी होने से न केवल उसका व्यक्तिगत जीवन ही उन्नत और सुखी होता है बल्कि उससे राष्ट्र और समाज का भी हित होता है। अत हम सभी दृष्टियों से स्वावलम्बन के लाभ पर विचार करेंगे।

(क) व्यक्तिगत लाभ—स्वावलम्बन मनुष्य की उन्नति में बहुत सहायक होता है। स्वावलम्बन से ही उसमें उत्साह, कठोर परिश्रम, तत्परता, धैर्य, कष्ट सहिष्णुता, आत्म-नियंत्रण, आत्म-विश्वास, नियमितता और निर्भीकता आदि श्रेष्ठ गुणों का विकास होता है। जिस व्यक्ति में ये सब गुण हों, उसके लिए जीवन में सफलता प्राप्त करना बड़ा सरल हो जाता है। उसके लिए असम्भव कुछ भी नहीं होता। जीवन के हर क्षेत्र में वह उत्तरोत्तर उन्नति करता चला जाता है। उसका जीवन सुखी और समृद्ध हो जाता है। लोग उसके गुणों की सराहना करते हैं और उसे सुख-शान्ति तथा यश मिलता है। वह परोपकारी बनकर दूसरों का कल्याण करने के साथ-साथ स्वयं का भी कल्याण करता है। वह अपनी जाति, वंश और कुल का नाम उज्ज्वल करके इतिहास में अपना नाम अमर कर देता है। उसके कार्यों से प्रेरणा लेकर दूसरे लोग भी लाभान्वित होते रहते हैं।

(ख) सामाजिक लाभ—जिस जाति अथवा समाज में स्वावलम्बन की भावना होती है, वह कभी पिछड़ा हुआ नहीं रहता। अपने बलबूते पर वह अपना निरन्तर विकास करता रहता है। संसार का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिस समाज में परावलम्बन का भाव उत्पन्न हुआ, उसी का पतन हुआ। भारतीय इतिहास में पिछली कुछ शताब्दियाँ परतंत्रता और दासता के कलंक से कलंकित रही हैं। पराधीनता के इस लम्बे समय में भारतीय समाज का बहुत पतन हुआ है। यदि हम पराधीनता के कारणों पर गम्भीरता से विचार करें तो पायेंगे कि हमारा समाज आपसी फूट और विलासिता के कारण परावलम्बी बनकर इतना कमजोर हो गया था कि विदेशी आक्रमण के धक्के को सहन नहीं कर सका और गुलाम हो गया। गाँधी जी और अन्य नेताओं के नेतृत्व में जब हमारे समाज में स्वावलम्बन का भाव जागृत हुआ तो हमने गुलामी की जंजीरें तोड़ कर फेंक दीं। स्वतंत्र भारत में उन जातियों का पतन निरन्तर होता जा रहा है, जो परावलम्बी बन कर जीने की आदी हो गई हैं। इसके विपरीत स्वावलम्बन के सहारे खड़ी होने वाली जातियाँ ऊपर उठती चली जा रही हैं।

(ग) राष्ट्रीय उन्नति—राष्ट्र की उन्नति स्वावलम्बन से ही होती है। दूसरे महायुद्ध में जापान को भारी जन धन की हानि हुई थी। लगता था कि यह देश सदियों तक भी नही उठ पायेगा किन्तु आज जापान की उन्नति को देखकर सारा संसार आश्चर्यचकित है। इसका एक मात्र कारण है-वहाँ की स्वावलम्बी जनता। उन्होंने यह सिद्ध करके दिखा दिया कि सफलता और समृद्धि परिश्रमी और स्वावलम्बी व्यक्ति के चरण चूमती है। एक जापानी मनीषी का यह कथन है—

" हमारी दस करोड अ गुलियां हमारे देश के सभी काम स्वय करती हैं। इन ही अ गुलियों के बल से सम्भव है, एक दिन हम संसार को जीत लें। "

जिस देश के नागरिक स्वावलम्बी होते हैं उस देश में कभी भुखमरी, बेरोजगारी और गरीबी नहीं होती। कोई प्राकृतिक विपदा उस देश को हानि नही पहुँचा पाती। राष्ट्रीय जीवन के स्रोत वे स्वय उत्पन्न कर लेते हैं। वह देश निरन्तर प्रगति करता रहता है और अपना सम्मान तथा गौरव बनाये रहता है।

4 उपसंहार—आज हम राजनैतिक दृष्टि से स्वाधीन है किन्तु सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से हम आज भी पराधीन हैं। राष्ट्रीय योजनाओं तथा अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी हम दूसरो के आगे हाथ फैलाते है। देश में अकाल पड़े या सूखा, बाढ आवे या अन्य प्राकृतिक विपदा, हमे अपनी समस्याओं के समाधान के लिए विदेशो से सहायता प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। हमारी यह स्थिति निश्चय ही अपमानजनक, चिन्ताजनक और कष्टकारी है। स्वावलम्बन के अभाव मे ही हमारी यह दयनीय स्थिति बनी हुई है। परिश्रम से हम जी चुराते है और अपने हर कार्य मे दूसरो की सहायता की अपेक्षा रखते है। सरकारी स्तर पर हमारे देश में अनेक बडे उद्योग स्थापित किये गये हैं तथा अनेक छोटी-छोटी परियोजनाओं के माध्यम से देश को आत्म-निर्भर बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं, किन्तु जब तक हमारे देश के नागरिको मे स्वावलम्बन का भाव जागृत नही होगा, तब तक इन परियोजनाओं का लाभ देश का नहीं मिल सकता। स्वावलम्बन की भावना से ही नागरिकों मे आत्म-सम्मान का भाव जागृत होगा और आत्म-विश्वास के साथ कठोर परिश्रम के बल पर हम अपनी दशा मे सुधार लाने मे सफल हो सकेंगे।

8 | कर्त्तव्य पालन

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2. कर्त्तव्य-पालन का आशय
3. कर्त्तव्य-पालन का महत्त्व
4. कर्त्तव्य पालन में बाधाएँ
5. कुछ आदर्श कर्त्तव्य-पालन
6 उपसंहार

1 प्रस्तावना—संसार कर्मभूमि है । यह एक प्रकार का रंगमच है, जहाँ प्रत्येक मनुष्य निश्चित समय के लिए निश्चित रूप में आता है और अपनी निश्चित भूमिका अदा करके रंगमच से हट जाता है । एक ही मनुष्य को अपने जीवन-काल मे अनेक प्रकार की भूमिकाएँ अदा करनी पडती हैं । कभी यह पुत्र होता है और कभी पिता । इसी प्रकार उसे समय-समय पर अनेक भूमिकाएँ निभानी होती हैं । एक ही व्यक्ति मित्र, शत्रु, रक्षक, भक्षक, पति अथवा पत्नी, भाई अथवा बहिन, राजा, प्रजा, न्यायार्थी एव न्यायकर्त्ता के रूप में ससार के रंगमच पर प्रकट होता है और अपना अभिनय प्रस्तुत करके निश्चित समय के पश्चात् रंगमच से हट जाता है । यदि वह अपनी भूमिका भली प्रकार निभाता है तो दर्शक ससार उसकी प्रशसा करता है और उसे भी सतोष तथा आनन्द की प्राप्ति होती है । इसके विपरीत यदि वह अपनी भूमिका के निर्वाह मे चूक जाता है तो दर्शक समार उसकी हँसी उड़ाता है । वह बदनाम होता है, उसे अपयश मिलता है और अन्ततोगत्त्वा उसे दु ख तथा पश्चात्ताप का भागी बनना पडता है । ससार रूपी रगमच पर अभिनेता के रूप मे अपनी भूमिका का निर्वाह ही कर्त्तव्य-पालन है । कर्त्तव्य-पालन से मनुष्य-जीवन सफल होता है और कर्त्तव्य-पालन मे चूक करने अथवा शिथिलता बरतने मे जीवन असफल हो जाता है ।

2 कर्त्तव्य-पालन का आशय—कर्त्तव्य-पालन का आशय समझने के लिए हमे 'कर्त्तव्य' शब्द का ठीक-ठीक अर्थ समझना होगा । कर्त्तव्य का सीधा अर्थ करणीय कार्य से लगाया जाता है । अर्थात् जो कर्म करना हमारे लिए उचित एव आवश्यक है, यही कर्त्तव्य है । संस्कृत शब्दकोष मे कर्त्तव्य को व्याख्या इस प्रकार की गई है—

'यस्मिन् क्रियमाणे न दोषस्तत् कर्त्तव्यम्'

अर्थात् जिस कर्म के करने में मनुष्य किसी प्रकार के दोष का भागी न बने वही कर्त्तव्य है। इस व्याख्या से यह स्पष्ट हो जाता है कि कर्त्तव्य मनुष्य की बुद्धि और विवेक से सोचा-समझा एक पवित्र कर्म होता है। जिस कर्म को सम्पादित करने से पहले मनुष्य खूब सोच और समझ लेता है और यह निश्चय कर लेता है कि अमुक कर्म करना उसके लिए आवश्यक है, उस कर्म के सम्पादन में वह किसी भी प्रकार के दोष का भागी नहीं बनेगा चाहे उसका परिणाम कुछ भी हो, बल्कि उस कर्म को न कर पाना दोष का कारण बनेगा। वही कर्म कर्त्तव्य कहलाता है और उस कर्म का निष्ठापूर्वक सम्पादन ही कर्त्तव्य-पालन कहलाता है। उर्दू भाषा में इसे 'फर्ज' और अंग्रेजी में 'ड्यूटी' के नाम से जाना जाता है। भारतीय संस्कृति में कर्त्तव्य को 'धर्म' के नाम से स्वीकार किया गया है।

3 कर्त्तव्य पालन का महत्त्व— जैसा हम पहले कह चुके हैं- यह संसार कर्मभूमि है।' इससे कर्त्तव्य-पालन का महत्त्व स्वत स्पष्ट हो जाता है। संसार में मनुष्य का जन्म कर्म के लिए ही हुआ है। मनुष्य जन्म को भोग-विलास करने का साधन मानना सबसे बडी भूल है। मनुष्य जीवन की सार्थकता कर्त्तव्य पालन में ही है। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते समय यह बात स्पष्ट रूप से कही है कि तेरा अधिकार केवल कर्म करने में ही है, उसके फल में तेरा कोई अधिकार नहीं है—

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'

जब मनुष्य को केवल कर्म करने का ही अधिकार है तो यह बात स्वत स्पष्ट हो जाती है कि कर्त्तव्य पालन मनुष्य का स्वाभाविक धर्म है। यदि वह कर्त्तव्य-पालन में चूक करता है तो वह स्वय के साथ अन्याय करता है और प्रकृति के विपरीत आचरण करता है। राष्ट्र कवि मैथलीशरण गुप्त के शब्दो में—

'अधिकार खोकर बैठ रहना यह, महा दुष्कर्म है।
न्यायार्थ अपने बन्धु को भी दण्ड देना धर्म है॥'

अपने कर्त्तव्य का पालन धर्म मान कर करने वाले लोगों का जीवन ही संसार में आदर्श होता है। वे ही संसार की सच्ची सेवा कर पाते हैं। संसार की बुराइयों को समाप्त करने का पवित्र कार्य वे ही करते हैं। वे मानवता के रक्षक तथा श्रेष्ठ परम्पराओं को विकसित करने वाले माने जाते हैं। वे इतिहास में सदा सदा के लिए अमर हो जाते हैं और भावी पीढ़ियाँ उनके आचरण से शिक्षा तथा प्रेरणा ग्रहण करती रहती हैं। मैथिलीशरण गुप्त के ही शब्दो में देखिए—

'इच्छा रहित भी वीर पाण्डव रत हुए रण में अहो!
कर्त्तव्य के वश विज्ञ जन क्या-क्या नहीं करते कहो?'

कर्त्तव्य-पालन की भावना मनुष्य में अनेक श्रेष्ठ गुणों का विकास कर देता है। इस भावना से प्रेरित होकर कार्य करने वाले व्यक्ति में निडरता उत्पन्न हो जाती

है। वह निर्भीक होकर अपने कर्म मे लगा रहता है। उसके स्वभाव मे आलस्य और लापरवाही नही आ पाती। इनके स्थान पर उसमे तत्परता और सावधानी के गुण उत्पन्न हो जाते है। कर्त्तव्य-पालन की भावना से न्याय-बुद्धि का विकास हो जाता है और वह उचित-अनुचित मे स्पष्ट भेद करने लग जाता है। जो न्यायोचित कर्म होता है, उसके सम्पादन मे वह तनिक मात्र भी नही हिचकता। कर्त्तव्य-पालन की भावना से ही मनुष्य मे त्याग और बलिदान का भाव उत्पन्न होकर स्थायी बन जाता है। कर्त्तव्य-पालन मे जब उसे बड़े से बडा त्याग करने की आवश्यकता अनुभव होती है और जब आत्म-बलिदान का अवसर आता है तो वह बेझिझक अपना सर्वस्व बलिदान करने को तत्पर हो जाता है। कर्त्तव्य-पालन का भाव मनुष्य मे प्रेम, दया, सहानुभूति, सहयोग, कठोर श्रम, परोपकार और कष्ट-सहिष्णुता आदि श्रेष्ठ मानवीय गुणो को जन्म देता है। यदि सार रूप मे हम यह कहे कि कर्त्तव्य-पालन की भावना ही मनुष्य मे मनुष्यता विकसित करती है तो कोई अनुचित नही होगा। कर्त्तव्य-पालन के भाव के बिना हमे मनुष्य को मनुष्य कहने मे भी सकोच ही होगा।

कर्त्तव्य-पालन का महत्त्व सामाजिक दृष्टि से और भी अधिक है। समाज की सारी व्यवस्था का यह मूल आधार है। परिवार से लेकर अन्य सभी सामाजिक एव राजनैतिक सस्थाएँ कर्त्तव्य-पालन के आधार पर ही टिकी रहती हैं। जिन परिवारो मे परिवार के मुखिया अपने परिजनो के प्रति अपने कर्त्तव्य-पालन मे उदासीनता बरतते हैं अथवा परिवार के अन्य सदस्य एक दूसरे के प्रति अपने कर्त्तव्यो का पालन नही करते, वे परिवार बर्बाद हो जाते हैं। इसी प्रकार समाज के प्रति भी व्यक्ति के कुछ कर्त्तव्य होते है और व्यक्ति के प्रति समाज के कर्त्तव्य होते है। व्यक्ति और समाज एक दूसरे के प्रति अपने कर्त्तव्यो का पालन नही करते तो समाज का स्वरूप विकृत हो जाता है तथा व्यक्ति और समाज दोनों ही परेशानी मे पड जाते है। इसके विपरीत जिन परिवारो के और समाज के सदस्य अपने कर्त्तव्य का पालन करते रहते है वह परिवार और समाज उत्तरोत्तर उन्नति करता चला जाता है। चाहे कोई सरकारी कार्यालय हो या निजी सस्थान, सामाजिक सस्था हो या राजनैतिक अथवा सास्कृतिक सगठन, सभी की उन्नति का आधार कर्त्तव्य-पालन की भावना ही है। जिस सस्था मे जितने अधिक लोग कर्त्तव्य-पालन मे दृढ और जागरूक होते हैं, वह सस्था उतनी ही अधिक उन्नत तथा अपने उद्देश्य की प्रगति मे सफल होती है। इसके लिए हम राजकीय एव निजी सस्थाओ को उदाहरण के रूप मे देख सकते है। आजकल राजकीय सस्थाओ मे कर्त्तव्य-पालन की भावना बहुत कम देखने मे आती है। इसी का यह कुपरिणाम है कि इन सस्थाओ से जनता का हित होने के स्थान पर अहित अधिक हो रहा है। प्राय सभी सस्थाएँ पूरी सुविधा मिलने के बावजूद घाटे मे चल रही

है। इसके विपरीत निजी संस्थाएँ उत्तरोत्तर उन्नति करती जा रही है। कर्त्तव्य-पालन की भावना ही इसका प्रमुख कारण है।

4 कर्त्तव्य पालन मे बाधाएँ—कर्त्तव्य-पालन मे व्यक्ति के सामने निम्नलिखित बाधाएँ आती हैं जिन्हे दूर करने पर ही वह व्यक्ति कर्त्तव्य-पालन मे सफल हो सकता है—

(1) विवेक बुद्धि का अभाव—विवेक बुद्धि के अभाव मे मनुष्य को अपने कर्त्तव्य का सही ज्ञान नही हो पाता और वह कर्त्तव्य-पालन मे असफल रहता है।

(2) भय तथा लोभ-लालच—जब मनुष्य मे भय उत्पन्न हो जाता है और उसमे लोभ-लालच की भावना प्रमुख हो जाती है तो वह अपने कर्त्तव्य से विमुख हो जाता है।

(3) उदासीनता तथा लापरवाही—मनुष्य के स्वभाव मे ये दोनो ही ऐसे दुर्गुण होते है जो उसके कर्त्तव्य-पालन मे बाधा डालते हैं।

(4) आत्म-सम्मान की भावना का अभाव—जिन मनुष्यो मे आत्म-सम्मान की भावना होती है, वे कर्त्तव्य-पालन मे शिथिलता कभी नही बरतते। इसके विपरीत आत्म-सम्मान का भाव नही रखने वाले लोग कर्त्तव्य-पालन मे ढीले ही रहते हैं चाहे लोग उन्हे किसी प्रकार भी अपमानित क्यो न करें।

इसके अतिरिक्त ईश्वर के भय का अभाव, देश प्रेम की भावना का अभाव तथा स्वजनो का दबाव आदि और भी अनेक कारण हो सकते हैं जो मनुष्य को कर्त्तव्य-पालन से विमुख करते है।

5 कुछ आदर्श कर्त्तव्य पालक—ससार के इतिहास की बात छोड भी दे तो भी हमारा भारतीय इतिहास कर्त्तव्य-पालकों की सूची से भरा पडा है। उनके त्यागपूर्ण कर्त्तव्य-पालन की गरिमा से हम आज भी प्रेरणा ले सकते है। राम, लक्ष्मण, सीता, भरत और हनुमान से लेकर पाण्डवों तक का सारा पौराणिक साहित्य कर्त्तव्य-पालन की ही महिमा बतलाता है। हरिश्चन्द्र, दधीचि और राजा शिवि तथा महाराणा प्रताप, शिवाजी, छत्र साल आदि की गाथा त्याग व कर्त्तव्य-पालन की ही महिमामय गाथा है। सदियो बाद भारत को स्वतन्त्रता दिलाने का श्रेय महात्मा गाधी, जवाहर लाल नेहरू, लाला लाजपतराय, बालगगाधर तिलक, सुभाष चन्द्र बोस, शहीद भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद आदि अनेक कर्त्तव्य-परायण देश-भक्तो को ही है।

6 उपसहार—बडे दुख और आश्चर्य की बात है कि वर्तमान समय मे हमारे देश और समाज मे कर्त्तव्य-पालन की भावना का निरन्तर ह्रास होता जा रहा है। इसी का यह कुपरिणाम है कि ससार का गुरू और सोने की चिडिया कहलाने

वाला हमारा देश भारत आज प्राय: सभी क्षेत्रों में पिछड़ रहा है। ऊपर से लेकर नीचे तक सभी तबकों के लोग कर्त्तव्य-पालन में उदासीनता बरत रहे हैं। यह स्थिति अत्यन्त गम्भीर और चिन्ताजनक है। अब भी समय है कि हम इस दिशा मे गम्भीरता से सोचें और कर्त्तव्य-पालन की भावना उत्पन्न करें ताकि व्यक्ति, समाज और राष्ट्र सभी का हित हो सके।

आज हमारे देश की स्थिति यह है कि हम में से अधिकांश लोग यह भली प्रकार जानते हैं कि उनका कर्त्तव्य क्या है और कर्त्तव्य का पालन नहीं करने के क्या परिणाम होंगे। फिर भी क्षुद्र स्वार्थों की पूर्ति के लिए अथवा उदासीनतावश जान-बूझ कर कर्त्तव्य-पालन में उपेक्षा बरतते हैं। शिक्षा का प्रसार निरन्तर हो रहा है। अब अनपढ़ो और अज्ञानियो की संख्या घटती जा रही है। शिक्षा को मनुष्य में तर्क शक्ति और विवेक के विकास का सबल साधन माना जाता है। इस दृष्टि से हम मे कर्त्तव्य-पालन की भावना का विकास अधिकाधिक होना चाहिए था, किन्तु स्थिति इसके विपरीत दिखाई दे रही है। शिक्षा से जो तर्क-शक्ति का विकास हुआ है उसने कर्त्तव्याकर्त्तव्य की जानकारी करने के मामले में भ्रमात्मक धारणाएँ उत्पन्न करने में ही सहायता की है। कर्त्तव्य निश्चित करके उसके पालन में तत्परता की प्रेरणा उत्पन्न नहीं हुई है। इसका एक प्रमुख कारण यह भी है कि आज हमारे सामने आदर्शों का अभाव है। हमारे देश और समाज के नेतृत्व को प्रेरणास्पद आदर्श उपस्थित करके देश की नयी पीढ़ी को कर्त्तव्य परायण बनाने का महान् कार्य अपने जिम्मे लेना होगा। तभी इस स्थिति मे सुधार सम्भव है।

□□□

देश-प्रेम अथवा देश भक्ति | 9

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. देश-प्रेम का आशय
3. देश-प्रेम से ही देश की उन्नति
4. देश के प्रति हमारा कर्त्तव्य
5. कतिपय देश-भक्तों के उदाहरण
6. उपसंहार

1. प्रस्तावना—देश-प्रेम मनुष्य की एक स्वाभाविक भावना है। जिस भूमि पर मनुष्य जन्म लेता है, जिसकी रज मे लोट-लोट कर वह बड़ा होता है और जिसका अन्न तथा जल ग्रहण करके अपने शरीर का पोषण करता है, उस भूमि से उसका लगाव, अपनापन और प्रेम होना स्वाभाविक है। जिस प्रकार जन्मदायी माता के प्रति उसकी सन्तान का प्रेम स्वाभाविक होता है उसी प्रकार अपनी जन्म-भूमि अथवा स्वदेश से प्रेम करना भी मनुष्य की एक स्वाभाविक मानसिक प्रक्रिया है। देश-प्रेम की भावना मनुष्य मात्र मे होना स्वाभाविक है और जिनमे इस भावना का अभाव होता है, उन्हे मनुष्यों की श्रेणी मे नही माना जा सकता। या तो वे पशु है या फिर वे जीते जी ही मुर्दों के समान हैं।

'जिसको न निज भाषा तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं, नर पशु निरा है, और मृतक समान है॥'

अपनी माता सुन्दर हो या कुरुप, दरिद्र हो या साधन-सम्पन्न, हमारे लिए वह सबसे अच्छी है। हमे मनुष्य शरीर देकर जन्म देने तथा पाल-पोष कर बडा करने मे जो कष्ट हमारी माता ने उठाये है, उतना त्याग कोई नही कर सकता। यही कारण है कि माता के प्रति सन्तान के मन मे अगाध प्रेम और श्रद्धा स्वाभाविक रूप से उत्पन्न हो जाती है। मातृ-भूमि भी माता के समान ही हमारे प्रेम और श्रद्धा की अधिकारिणी है। अत. उसके प्रति भी मनुष्य के हृदय मे प्रेम की भावना अत्यन्त स्वाभाविक होती है। जिनके हृदय में स्वदेश के प्रति प्रेम का भाव न हो, उनके हृदय को हृदय नही, कठोर पत्थर समझना चाहिए।

'जो भरा नहीं है भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं है पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।।

2 देश-प्रेम का आशय—देश-प्रेम से आशय किसी विशेष भूखण्ड मात्र से प्रेम करना नही है, बल्कि उस भूखण्ड पर निवास करने वाली जनता, पशु-पक्षी, वहाँ की प्रकृति—नदी, पहाड, समुद्र और मिट्टी, वहाँ की भाषा, सस्कृति, सभ्यता, आचार-विचार और मान्यताएँ तथा वहाँ की कला और ऐतिहासिक गौरव—इन सभी से प्रेम करना स्वदेश-प्रेम कहलाता है। स्वदेश-प्रेम का भाव गहरा हो जाने पर मनुष्य को अपना देश ससार में सबसे अच्छा लगने लगता है। उसके मन और मस्तिष्क मे स्वदेश के प्रति इतना गौरव जागृत हो जाता है कि उसकी तुलना मे उसे स्वर्ग भी तुच्छ प्रतीत होता है—

'जननी जन्म-भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'

प्रेम के दो पहलू होते हैं। एक तो यह है कि हम जिससे प्रेम करते है, वह हमे सबसे अच्छा लगता है और दूसरा यह कि हम जिससे प्रेम करते है, उससे लेना कुछ नही चाहते बल्कि उसके हित-साधन मे हम अपना सर्वस्व बलिदान करने को आतुर रहते है। देश-प्रेम मे भी यह बात पूरी तरह लागू होती है। हम अपने देश की जनता की भलाई के लिए, देश की उन्नति के लिए, देश की सभ्यता और सस्कृति की रक्षा के लिए तथा देश की अखण्डता, स्वाधीनता और मान-मर्यादा की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व बलिदान करने को आतुर रहे, तभी यह माना जा सकता है कि हमारे हृदय मे स्वदेश-प्रेम की भावना है। देश के कण-कण से प्यार करना, उसे ससार मे सर्वश्रेष्ठ मानना और उसके हित-साधन मे अपना सर्वस्व त्याग देने के लिए तत्पर रहना ही स्वदेश-प्रेम या देश-भक्ति कहलाती है।

3 देश-प्रेम से ही देश की उन्नति—देश-प्रेम की भावना से ही देश उन्नति के शिखर पर पहुँचता है। जिस देश के निवासी जितनी अधिक संख्या मे देश-भक्त होते हैं, वह देश उतनी ही अधिक उन्नति करता है। देश-भक्त नागरिक देश के कल्याण मे ही अपना कल्याण समझता है। देश पर आई विपत्ति को वह अपनी विपत्ति मानता है और उसे दूर करने के लिए जी जान से लग जाता है। देश-भक्ति की भावना से नागरिको मे एक स्वदेशाभिमान जागृत हो जाता है। फिर उनका जीवन स्वय के लिए न रहकर स्वदेश के लिए समर्पित हो जाता है। उनके मस्तिष्क मे व्यक्तिगत हानि-लाभ का विचार उत्पन्न ही नहीं होता। अपने देशवासियो के कष्ट दूर करना, देश मे व्याप्त अभावो को दूर करने के लिए निरन्तर कठोर परिश्रम करना, देश की समस्याओ से जूझना और देश के सामने आने वाली विभिन्न चुनौतियो का डटकर मुकाबला करना उसका स्वाभाविक धर्म हो जाता है। इसके लिए उसे कितना ही परिश्रम करना पडे, वह बिना थके अपने कार्य मे लगा रहता है।

इस समय हमारा देश राजनैतिक दृष्टि से तो स्वतत्र है किन्तु सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से स्वतत्र होना अभी बाकी है। हमारे देश की सामाजिक और आर्थिक उन्नति के लिए देश-वासियो का देश भक्त होना नितान्त आवश्यक है। देश मे अब भी दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा, जाति प्रथा आदि अनेक सामाजिक कुरीतियाँ प्रचलित हैं। अब भी करोडो देशवासी गरीबी की सीमा रेखा से नीचे रहकर किसी प्रकार अपना जीवन-यापन कर रहे हैं। अब भी लोग सूखे और पेय जल की समस्याओ से ग्रस्त हैं। इनके अतिरिक्त महगाई, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार जातिवाद, साम्प्रदायिकता और क्षेत्रीयता की समस्याएँ भी है। इन सब समस्याओ का समाधान नागरिकों के देश-भक्त होने से ही हो सकता है, बल्कि यदि यह कहे कि इनमे से अधिकाश समस्याएँ हमारे देश के नागरिको मे देश-भक्ति की भावना न होने से ही उत्पन्न हुई है तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी। जिन देशो के बालक युवा, वृद्ध, पुरुष तथा नारियाँ अपने स्वार्थों को राष्ट्र की वलिवेदी पर चढाकर अपना तन, मन, धन देश के हित मे न्यौछावर कर देते हैं, वे देश ससार मे महान् शक्तिशाली राष्ट्र बन जाते हैं। जापान, जर्मनी, इगलैण्ड, रूस आदि देशो के उन्नत होने का कारण इन देशो की जनता की देश-भक्ति अथवा स्वदेश की प्रेम भावना ही है। देश प्रेम की भावना ही देश की जनता को सगठन के सूत्र मे बाँधती है और जब देश की जनता सगठित होकर देश के कल्याण के लिए कमर कस लेती है तो वह देश का काया पलट कर देती है। फिर न तो देश के भीतर कोई समस्या रह पाती है और न ही बाहर से आक्रमण करने का किसी को साहस होता है। सब लोग सुख-समृद्धि का जीवन बिताते हुए मनुष्यता का विकास करते हैं—

'देश प्रेम वह पुण्य क्षेत्र है, अमल असीम त्याग से विलसित।
जिसकी दिव्य रश्मियाँ पाकर, मनुष्यता होती है विकसित।।'

4 देश के प्रति हमारा कर्त्तव्य—देश के प्रति हमारे अनेक कर्त्तव्य है। हमे अपने इन कर्त्तव्यो का पालन अपना धर्म समझ कर करना चाहिए—

(i) हमे देश-हित को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी चाहिए और अपने व्यक्तिगत लाभ-हानि की ओर ध्यान न देते हुए देश हित के कार्यों मे अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा देनी चाहिए।

(ii) देश की जनता के दुःख दर्दों को मिटाने के लिए व्यक्तिगत स्तर पर प्रयास करने के साथ-साथ समाज और सरकार के द्वारा अपनाये गये कार्यक्रमो मे पूरा सहयोग देना चाहिए।

(iii) देश मे व्याप्त अव्यवस्था को दूर करने के लिए व्यक्तिगत रूप से प्रयास करने के साथ-साथ सामूहिक रूप से भी प्रयास करने चाहिए और देश मे अव्यवस्था फैलाने वाले समाज-कण्टको तथा देश द्रोहियो को कानून के हवाले करना चाहिए।

(iv) जिस स्थान अथवा पद पर हम कार्य कर रहे हैं, वहाँ पूरी ईमानदारी

श्रौर मेहनत से कार्य करना चाहिए ताकि हमारे परिश्रम का लाभ देश को मिल सके।

(v) देश की जनता, संस्कृति श्रौर भूमि से प्रेम करना चाहिए श्रौर ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिए जिससे देश की एकता श्रौर अखण्डता के लिए खतरा उत्पन्न हो।

(vi) हमें देश-भक्तों से त्याग श्रौर बलिदान की प्रेरणा लेनी चाहिए श्रौर देश-भक्तों के प्रति आदर सम्मान का भाव अपने हृदय में गौरव के साथ धारण करना चाहिए। माखन लाल चतुर्वेदी की ये पंक्तियाँ देखिए जो पुष्प की अभिलाषा के रूप में उन्होंने लिखी हैं—

'मुझे तोड़ लेना वनमाली, उस पथ पर देना तू फेंक।
मातृ-भूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जाते वीर अनेक।।'

5 कतिपय देश-भक्तों के उदाहरण—विश्व का इतिहास देश-भक्तों की गौरव-गाथा से भरा पड़ा है। भारत में भी देश-भक्तों की परम्परा बड़ी उज्जवल रही है। चन्द्र गुप्त मौर्य के समय से ही सिकन्दर के आक्रमणों को रोकने के लिए देश के छोटे-बड़े राजाओं ने जिस वीरता का परिचय दिया, वह भारत के इतिहास में अद्वितीय है। मुगल शासन-काल में महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, छत्र साल, गुरु गोविन्द सिंह आदि वीरों ने जिस स्वदेश-प्रेम श्रौर स्वदेशाभिमान का परिचय दिया वह आज भी अनुकरणीय है। भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम में महारानी लक्ष्मी बाई का नाम सदा अमर रहेगा। इसके अतिरिक्त सुभाष चन्द्र बोस, मदन मोहन मालवीय, शहीद भगत सिंह, चन्द्र शेखर आजाद आदि अनेक ऐसे देश-भक्त हुए जिन्होंने विदेशी शासन की जड़ों को हिला दिया। महात्मा गांधी, सरदार वल्लभ भाई पटेल, डा० राजेन्द्र प्रसाद श्रौर मौलाना आजाद आदि देश-भक्तों ने ही देश को आजादी दिलवाई। इस शृंखला में प० जवाहर लाल नेहरू का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने विभिन्न समस्याओं से ग्रस्त स्वतंत्र भारत को अपने पांवों पर खड़ा होने के लिए मजबूत आधार प्रदान किया।

6. उपसंहार—देश-प्रेम एक उदात्त भाव है। यह भाव मनुष्य की संकीर्ण भावनाओं का दमन करके उसे परमार्थी श्रौर उदार बनाता है। देश-प्रेम से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है श्रौर उसमें समाज-हित की भावना जागृत होती है। देश-भक्त मनुष्य एक श्रेष्ठ व्यक्ति बन जाता है जिसमें मानवता के सभी गुणों का स्वतः समावेश हो जाता है। देश-भक्त ही मानवता को विकसित करते हैं।

बड़े खेद का विषय है कि हमारे देश के नागरिकों में देश-प्रेम की भावना लुप्त होती जा रही है। यही कारण है कि चारों श्रौर अव्यवस्था फैल रही है श्रौर अनेक जटिल समस्याएँ देश की प्रगति में बाधा डाल रही हैं। इन समस्याओं का समाधान देश-प्रेम से ही सम्भव है। हमें चाहिए कि समय रहते आत्मघाती विचार धारा का परित्याग करके देश-हित की भावना में कार्य करें ताकि एक स्वतंत्र देश के नागरिक के रूप में हम अपनी मान-मर्यादा को बनाये रख सकें।

पुस्तकालय से लाभ | 10

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना-पुस्तकालय का महत्व
2. पुस्तकालय के प्रकार
3. पुस्तकालय से लाभ
4. उपसंहार

1. प्रस्तावना—ज्ञान का क्षेत्र असीम और अनन्त है। मनुष्य अपने सीमित और थोड़े से जीवन में बहुत थोड़े ज्ञान को आत्मसात् कर पाता है। अनेक प्रकार की परिस्थितियों में रहकर वह जीवन में कुछ कटु-मधुर अनुभव करता है और उनसे ज्ञान के कुछ सूत्र ज्ञात हो पाते हैं। बहुत कम लोग ऐसे होते हैं जो अपने अर्जित ज्ञान को लिपिबद्ध करते हैं। यही ज्ञान पुस्तकों के रूप में सुरक्षित रहता है जिससे भावी पीढ़ियाँ लाभ उठाती रहती हैं। जिस स्थान पर पुस्तकों का व्यवस्थित संग्रह होता है उसे पुस्तकालय के नाम से जाना जाता है। पुस्तकालय में अनेक विषयों की पुस्तकें होती हैं। पुस्तकालय का ज्ञानार्जन की दृष्टि से विशेष महत्त्व है। हम पुस्तकों की सहायता से वह ज्ञान बड़ी सरलता से प्राप्त कर सकते हैं, जिस ज्ञान की प्राप्ति में लेखक को कठोर साधना और श्रम करना पड़ा था। पुस्तकालय में बैठकर कोई भी व्यक्ति किसी भी देश के इतिहास, भूगोल, संस्कृति, सभ्यता और आध्यात्मिक चिन्तन के स्वरूप की जानकारी बड़ी सरलता से कर सकता है। पुस्तकालय ज्ञान का एक विशाल सरोवर होता है जिसमें निमग्न होकर ज्ञानपिपासु अपनी मानसिक और बौद्धिक तृप्ति प्राप्त करता है। जंगली अवस्था से लेकर आधुनिक विकसित स्वरूप तक की पूरी कहानी पुस्तकालयों में सुरक्षित है। पुस्तकालय ही प्राचीन ज्ञान को सुरक्षित रखते हैं और चिन्तन तथा मनन की कई दिशाओं का बोध कराते हैं।

2. पुस्तकालय के प्रकार—पुस्तकालय कई प्रकार के होते हैं। जहाँ भी विभिन्न विषयों की और विभिन्न प्रकार की पुस्तकों का व्यवस्थित संग्रह हो, वही *पुस्तकालय का स्वरूप धारण कर लेता है। हमारे देश में भिन्न प्रकार के पुस्तकालय* हो पाये जाते हैं—

प्रथम प्रकार के पुस्तकालय वे हैं जो विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालयों में छोटे-बड़े रूप में होते हैं। छात्रों के बौद्धिक स्तर के अनुसार इन पुस्तकालयों

मे उनके उपयोग की पुस्तकें अधिक होती है जिससे छात्र अपने ज्ञान मे अभिवृद्धि करते रहते है। अध्यापको के स्तर के अनुसार शिक्षा और मनोविज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें भी होती है तथा कला और साहित्य से सम्बन्धित सामान्य पुस्तकें भी पर्याप्त मात्रा मे होती हैं। किन्तु फिर भी इन पुस्तकालयो का कार्य-क्षेत्र सीमित ही रहता है। प्रति वर्ष इन पुस्तकालयो मे पुस्तको की सख्या मे वृद्धि होती रहती है जिनसे छात्र, अध्यापक और उनके माध्यम से समाज के अन्य लोग भी लाभान्वित होते रहते है।

दूसरे प्रकार के पुस्तकालय राज्य-पुस्तकालय होते हैं, जिनकी व्यवस्था सरकार स्वय करती है। ये पुस्तकालय विशेष रूप से निर्मित भव्य भवनो में चलाये जाते है और इन पुस्तकालयो का लाभ सार्वजनिक रूप से सभी उठाते हैं। इनके उपयोग की दृष्टि से इन्हे सार्वजनिक पुस्तकालय भी कहा जाता है। इनकी व्यवस्था पुस्तकालय विज्ञान मे प्राशिक्षित कर्मचारियो और अधिकारियो के जिम्मे होती है। इन पुस्तकालयों मे सभी विषयों और सभी स्तरो की पुस्तकें उपलब्ध होती है। नये-पुराने स्वदेशी साहित्य के अतिरिक्त विदेशी भाषा और साहित्य का भी भण्डार इन पुस्तकालयो मे सुरक्षित रखा जाता है। प्राचीन से प्राचीन पुस्तकों से लेकर नवीनतम प्रकाशनो के उपलब्ध कराने की व्यवस्था इन पुस्तकालयो मे होती है। वास्तव में ये पुस्तकालय ज्ञान का अक्षय भण्डार होते हैं, जिनका लाभ उठाकर जिज्ञासु और ज्ञान-पिपासु अपने ज्ञान मे अभिवृद्धि करते है।

तीसरे प्रकार के पुस्तकालय विभिन्न सस्थाओ, सोसाइटियों तथा क्लबो द्वारा स्थापित और सचालित होते है। इन पुस्तकालयो का कार्यक्षेत्र छोटा और बडा दोनों ही प्रकार का होता है जो सचालक सस्था की स्थिति और सामर्थ्य पर निर्भर करता है। इन पुस्तकालयों मे सामान्य प्रकार की पुस्तकें ही होती हैं जिनका उपयोग प्रमुख रूप से उस सस्था के सदस्य ही करते है या फिर उन सदस्यो के माध्यम से समाज के अन्य वर्ग भी लाभ उठा लेते है। इन पुस्तकालयों की व्यवस्था और देख-रेख संस्था की कार्यकारणी के सदस्य ही करते हैं। इन पुस्तकालयो का कार्य-क्षेत्र छोटा और सीमित होने पर भी ये पुस्तकालय समाज मे ज्ञान का प्रकाश फैलाने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं।

चौथे प्रकार के पुस्तकालय निजी पुस्तकालय होते है। विद्या-व्यसनी धनाढ्य लोग अपनी ज्ञान-पिपासा को शान्त करने के लिए अपने घर अथवा कार्यालय मे ही पुस्तकालय स्थापित कर लेते है। इन पुस्तकालय मे सग्रहकर्त्ता की रुचि के विषय की पुस्तको की ही प्रधानता होती है। यदि सग्रहकर्त्ता आध्यात्मिक रुचि का हुआ तो आध्यात्म की विभिन्न प्रकार की पुस्तको का सग्रह उस पुस्तकालय मे हो जाता है। यद्यपि यह पुस्तकालय पूरी तरह से व्यक्तिगत उपयोग के लिए होता है किन्तु स्वामी के परिचय के दायरे के लोग भी इसका लाभ उठाते है। यदि उसका उत्तराधिकारी

उसकी ही जैसी रुचि का न हुआ तो कालान्तर मे वह पुस्तकालय भी सार्वजनिक हित-साधन के ही काम मे आता है।

3 पुस्तकालय से लाभ—पुस्तकालय से अनेक लाभ हैं जिन्हे हम निम्न लिखित शीर्षकों के अन्तर्गत समझाने का प्रयास करेंगे—

(i) ज्ञान वृद्धि—ज्ञान-वृद्धि की दृष्टि से पुस्तकालय अत्यन्त लाभकारी सिद्ध होते है। जो ज्ञान हमे अध्यापको और गुरुओ से भी नही मिल पाता वह पुस्तको से अनायास ही प्राप्त हो जाता है ? अनुभव-जन्य ज्ञान ही सच्चा ज्ञान माना जाता है और वही स्थायी रहता है। किन्तु सीमित साधनो से युक्त सीमित जीवन-काल मे सभी प्रकार के अनुभव कर लेना किसी के लिए भी सम्भव नही है। ऐसी स्थिति मे पुस्तकालय इस अभाव की पूर्ति कर देता है। स्वानुभव से अर्जित ज्ञान के आधार पर लिखी गयी टिप्पणियों से हम बडी सरलता से अपने ज्ञान का क्षेत्र विस्तृत बना लेते है। विद्यार्थी किसी विषय पर एक ही पुस्तक पढता है तो उसका उस विषय मे ज्ञान सीमित ही रहता है किन्तु यदि वह उस विषय पर अनेक पुस्तको का अध्ययन करता है तो उसे अन्य अनेक बातो की जानकारी मिलती है और फिर वह अपने स्वतन्त्र चिंतन मे अपना मौलिक आधार तैयार कर लेता है। इस कार्य मे उसे पुस्तकालय से ही सहायता मिलती है।

ज्ञान कोई ऐसी वस्तु नही है जिसे प्राप्त कर लेने के पश्चात कोई उसे गुप्त रूप से सुरक्षित रखने का प्रयास करे। यह स्वाभाविक है कि मनुष्य अपने अर्जित ज्ञान की जानकारी दूसरो को भी देता है। इस प्रकार पुस्तकालय से ज्ञान-वृद्धि के साथ-साथ ज्ञान प्रसार मे भी सहायता मिलती है।

(ii) श्रेष्ठ मनोरजन—पुस्तकालय श्रेष्ठ मनोरजन का बहुत ही सरल साधन है। काम करते रहने से थकान हो गई हो या मानसिक चिन्ताओ से मन ऊब गया हो अथवा फालतू बैठे समय न कट रहा हो तो पुस्तकालय मे जाकर अपनी रुचि की पुस्तकें पढने से भरपूर मनोरजन हो जाता है। समय का पता ही नही चलता और सब प्रकार की चिन्ताए दूर हो जाती हैं। मन मे शान्ति और हल्कापन आ जाता है। साथ ही कुछ नवीन जानकारियाँ भी अनायास ही हो जाती हैं। पुस्तकालय मनोरजन का सबसे सस्ता साधन भी है। इसके लिए कोई धन नही खर्च करना पडता।

(iii) सत्सगति—पुस्तकालय मनुष्य को सत्सगति का लाभ भी पहुँचाता है। जब हम श्रेष्ठ व्यक्तियों की जीवन-गाथाए पढते हैं तो हमारे मन पर उनका वैसा ही असर होता है जैसा श्रेष्ठ व्यक्तियो की सगति करने से होता है। हमे उनके जीवन से प्रेरणा मिलती है और हमारे सस्कार अच्छे बनते हैं धीरे धीरे हमारी रुचियो का परिष्कार होता है। बुरी आदतें छूट जाती हैं और श्रेष्ठ आचरण को अपनाकर हम अपने जीवन को उन्नत बना लेते है। पुस्तकालय हमे ऐसी सत्सगति

का लाभ देता है जिसके लिए हमें किसी विशेष व्यक्ति, स्थान अथवा समय के लिए प्रयत्न नहीं करना पड़ता। हम पुस्तकालय के माध्यम से संसार के बड़े से बड़े व्यक्ति के साथ सत्संग करने का भी लाभ उठा सकते हैं।

(iv) समाज-हित—पुस्तकालय से व्यक्तिगत हित के साथ-साथ समाज का भी बहुत हित होता है। जिन लोगों की ज्ञान-वृद्धि होती है और मस्तिष्क का विकास हो जाता है, वे अपने ज्ञान से पूरे समाज को लाभ पहुँचाते हैं। विभिन्न देशों की सामाजिक व्यवस्था, आचार-विचार और रीति-रिवाजों का तुलनात्मक अध्ययन कर लेने के पश्चात हम यह समझ जाते हैं कि हमारे समाज में कौन-कौन सी बुराइयाँ हैं और उन्हें दूर किस प्रकार किया जा सकता है। इस प्रकार मनुष्य के सोचने-समझने का तरीका बदल जाता है जिसका लाभ समाज को मिलता है। धीरे-धीरे समाज में व्याप्त बुराइयाँ, कुरीतियाँ और अन्ध-विश्वास समाप्त हो जाते हैं तथा समाज उन्नति के पथ पर अग्रसर होने लगता है।

4 उपसंहार—हमारा देश सदियों की गुलामी के बाद अब स्वतंत्र हुआ है। इसलिए प्रायः सभी क्षेत्रों में यह पिछड़ा हुआ है। देश में गरीबी और अशिक्षा अभी बनी हुई है। यही कारण है कि हमारे देश में पुस्तकालयों का बहुत अभाव है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सभी क्षेत्रों में प्रगति हो रही है। शिक्षा के क्षेत्र में भी प्रगति हुई है किन्तु देश की आवश्यकता को देखते हुए अभी इसे पर्याप्त नहीं कहा जा सकता। सरकार और समाज इस दिशा में प्रयत्न-शील हैं। आगे आने वाले वर्षों में निश्चय ही हमारे देश में पुस्तकालयों का अभाव समाप्त हो जायगा और गाँव-गाँव में अच्छे पुस्तकालय स्थापित हो जायेंगे। पुस्तकालयों की स्थापना के साथ-साथ हमें लोगों की रुचि में भी सुधार लाना होगा। इस समय लोग पुस्तकालयों से लाभ उठाने में रुचि नहीं रखते हैं। फालतू बैठ कर गप्पें लड़ाने अथवा अन्य प्रकार के कार्यों में ही समय व्यतीत करते हैं। जब स्थान-स्थान पर अच्छे पुस्तकालय स्थापित हो जायेंगे और लोगों में पुस्तकालय से लाभ उठाने की रुचि जागृति हो जायगी तब देश का सर्वतोमुखी विकास होगा और हमारे देश की गणना उन्नत देशों में की जाने लगेगी।

समाचार पत्र और उनकी उपयोगिता | 11

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2. समाचार पत्रो का विकास
3 समाचार पत्रो से लाभ
4 समाचार पत्रो से हानियाँ
5 उपसंहार

1. प्रस्तावना—जब हम किसी कारण वश कुछ दिनो के लिए अपने घर से दूर चले जाते हैं तो वहाँ रहते हुए हमे अपने घर तथा परिवार के विषय मे जानकारी करने की प्रबल इच्छा होती है। यह स्थिति मानव-मात्र की होती है। इसका कारण यह है कि मनुष्य मे जिज्ञासा और कौतुहल ये दो ऐसी स्वाभाविक वृत्तियाँ हैं कि इनसे प्रेरित होकर वह अपने घर और परिवार की ही नही, बल्कि अपने पास-पडौस, नगर-मुहल्ला और देश-विदेश के विषय मे भी जानकारी करने का प्रयत्न करता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उसकी सामाजिक आवश्यकताएं विभिन्न प्रकार की होती है। व्यापारी व्यापार के क्षेत्र की, राजनेता राजनीति के क्षेत्र की, समाज-सुधारक समाज के क्षेत्र की, साहित्यकार साहित्य के क्षेत्र की और सामान्य जन सामान्य जीवन के क्षेत्र की नवीनतम जानकारी प्राप्त करने को उत्सुक रहता है। यह उसकी एक आवश्यकता है और इसी आवश्यकता ने समाचार पत्र को जन्म दिया है। आज समाचार पत्र हमारे जीवन का एक आवश्यक अंग बन गया है। आज यदि हमे किसी दिन समाचार-पत्र पढने को नही मिलते तो हमे बहुत ही अटपटा सा लगने लगता है और हमारी दिनचर्या मे व्यवधान सा उत्पन्न हो जाता है।

2 समाचार पत्रो का विकास—आज समाचार पत्रो को हम जिस विकसित रूप मे देखते हैं, वह स्वरूप इसे अनेक वर्षों के निरन्तर विकास के पश्चात् प्राप्त हुआ है। समाचार पत्रो का उद्गम स्थान इटली है। इसका जन्म इटली के वेनिस नगर मे 13वीं शताब्दी मे हुआ था। धीरे-धीरे इसकी उपयोगिता को सभी ने स्वीकार किया और इसका प्रचार होने लगा। सत्रहवी शताब्दी मे इसका प्रचार इंग्लैंड मे हुआ और निरन्तर समाचार-पत्रो की संख्या मे वृद्धि होने लगी।

अठारहवीं शताब्दी में अंग्रेज भारत में आये और उन्होंने महसूस किया कि उन्हें अपनी बात जनता तक पहुँचाने के लिए समाचार-पत्र भारत में भी प्रारम्भ करने चाहिए। उनकी इसी इच्छा के फलस्वरूप भारत में समाचार-पत्र का श्री गणेश हुआ। इसके पश्चात् धीरे-धीरे समाचार-पत्रों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती गई। ईसाई पादरियों ने अपने धर्म का प्रचार करने के लिए 'समाचार-दर्पण' नामक पत्र निकाला तो उसी का मुँह तोड जवाब देने के लिए राजा राममोहन राय ने 'कौमुदी' नामक पत्र निकाला। ईश्वर चन्द्र विद्यासागर ने 'प्रभात' नामक समाचार-पत्र का संपादन किया।

मुद्रण कला का विकास होने पर समाचार पत्रों का तीव्र गति से विकास हुआ। आज देश की सभी भाषाओं और देश के सभी क्षेत्रों में समाचार-पत्रों का प्रकाशन होता है। बड़े नगरों की तो बात ही क्या, छोटे-छोटे कस्बों से भी अनेक समाचार-पत्र प्रकाशित होते हैं। आजकल यह एक व्यवसाय बन गया है। लाखों लोग इस व्यवसाय से अपनी आजीविका चलाते हैं और अनेक पूँजीपति इस व्यवसाय से धन बटोर रहे हैं।

3 समाचार पत्रों से लाभ—समाचार पत्र समाज के सभी वर्गों के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। समाचार पत्रों से समाज को जो लाभ प्राप्त होते हैं, वे निम्नलिखित हैं—

(i) सूचना सम्बन्धी लाभ—शिक्षित वर्ग की आवश्यकताओं की पूर्ति में समाचार-पत्र बहुत सहायक सिद्ध होते हैं। रोजगार के लिए विज्ञापन अखबारों में आये दिन छपते रहते हैं। वैवाहिक विज्ञापनों से योग्य वर-वधु को खोजने में बहुत सहायता मिलती है। किसी समाज की कोई सभा का आयोजन हो, किसी भी प्रकार का सम्मेलन अथवा गोष्ठी का आयोजन हो, किसी व्यक्ति के मर जाने पर उसकी शोक-सभा का आयोजन हो, सरकार द्वारा चलाये जाने वाले किसी विशेष कार्यक्रम की जानकारी देनी हो, विभिन्न राजनैतिक दलों द्वारा किसी विशेष अभियान की सूचना प्रसारित करनी हो तथा किसी खोये हुए व्यक्ति अथवा सामान की सूचना देनी हो – इन सब का विवरण समाचार पत्रों से प्राप्त हो जाता है जिससे आवश्यकतानुसार सम्बन्धित लोग लाभान्वित होते हैं।

(ii) जन-मानस की जागृति—समाचार-पत्र जन-मानस में जागृति उत्पन्न करने में बहुत सहायक होते हैं, समाज में व्याप्त कुरीतियों का त्याग करने के लिए वे जनमत बनाते हैं और समाज में होने वाले भ्रष्टाचार तथा सदाचारों पर अंकुश लगाने का काम करते हैं। किसी राष्ट्रीय समस्या के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालकर जनता को उस समस्या पर गम्भीरता से विचार करने और उसका सही हल खोजने की प्रेरणा देते हैं।

(iii) व्यापार की उन्नति—व्यापार की उन्नति में समाचार पत्रों की भूमिका

बहुत महत्त्वपूर्ण है। कौन सा व्यापारिक प्रतिष्ठान किस-किस वस्तु का उत्पादन करता है, उसके उत्पादनो की क्या-क्या विशेषताएँ है, अन्य उत्पादनो की तुलना मे उसके उत्पादन मे क्या-क्या श्रेष्ठताएँ है तथा उसके उत्पादनो के प्राप्ति के स्थान कहाँ-कहाँ हैं—इन सब बातो की जानकारी के विज्ञापन समाचार पत्रो मे छपते रहते हैं जिससे व्यापार मे उन्नति होती है और उत्पादक तथा उपभोक्ता दोनो को ही लाभ मिलता है। हमारे देश का फिल्म व्यवसाय तो विज्ञापन के सहारे ही फलता-फूलता है। प्राय सभी समाचार पत्रो तथा पत्र-पत्रिकाओ मे सिनेमा के बडे-बडे विज्ञापन रोज छपते रहते हैं।

(iv) **मनोरंजन**—समाचार पत्र मनोरंजन के साधन के रूप मे भी बहुत उपयोगी होते हैं। नयी-नयी कहानियाँ कविताएँ, चुटकले, कार्टून तथा अन्य रोचक घटनाओ का विवरण समाचार पत्रो मे छपा रहता है। इनके अतिरिक्त मन्त्रियो, राजनेताओ तथा अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियो के आश्चर्यजनक कारनामो को पढकर पाठकों का भरपूर मनोरंजन होता है। डाकुओ के अमानुषिक कृत्यो तथा पुलिस अथवा नागरिको के साहसिक कार्यों के समाचारो से पाठको के रोंगटे खडे हो जात हैं किन्तु मनोरंजन भी होता है। फिल्म अभिनेताओ तथा अभिनेत्रियो के आकर्षक मुद्राओ मे छपे चित्र भी हमारा खूब मनोरंजन करते हैं।

(v) **सरकार के क्रिया-कलापों का मूल्यांकन**—जनतान्त्रिक शासन-व्यवस्था मे सरकार के क्रिया-कलापो की जानकारी सामान्य जनता को होना बहुत आवश्यक है। इसी जानकारी के आधार पर जनता चुनावो मे अपने मताधिकार का प्रयोग सोच-समझकर कर सकती है। समाचार पत्र इस कार्य मे जनता और सरकार दोनो की सहायता करते हैं, समाचार पत्रो मे छपी खबरो से जनता सरकार द्वारा किये गये प्रचार का वास्तविक उपलब्धियो के आधार पर अपने स्तर पर मूल्यांकन करने मे सफल होती है।

(vi) **आत्म विश्लेषण**—वर्तमान युग बुद्धिवादी युग है। इस युग मे अनेक प्रकार की सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक विचारधाराएं प्रवाहित हो रही हैं जिन सबका अपना दर्शन है और तर्क सगत आधार है। इन विभिन्न प्रकार के वादो, मतो और विचारधाराओ से सामान्य जन का भ्रमित हो जाना स्वाभाविक है। ऐसी स्थिति मे समाचार पत्रो मे छपे लेखो, टिप्पणियो तथा साक्षात्कारो का अध्ययन करने से इन सब का तुलनात्मक स्वरूप स्पष्ट हो जाता है और जिस विचारधारा से हम प्रभावित हैं उसका सही आधार ढूँढने का प्रयास करते है। इससे हमे आत्म-विश्लेषण करने का अवसर प्राप्त होता है।

4 **समाचार पत्रो मे हानियाँ**—समाचार पत्रो मे जहाँ हमे अनेकानेक लाभ होते हैं वही कुछ हानियाँ भी होती है। समाचार पत्र जब तटस्थ नहीं रह पाते और किसी विशेष राजनैतिक दल अथवा किसी विशेष वर्ग या व्यक्ति विशेष के

हितो के पोषण का कार्य करने लग जाते हैं तो इनसे देश और समाज को बहुत हानियाँ उठानी पड जाती है। वह राजनैतिक दल अथवा विशेष वर्ग अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए दूषित विचार धारा का प्रचार करते है जिससे वर्ग संघर्ष छिड जाता है और देश मे एकता की भावना समाप्त हो जाती है। राष्ट्र में अराजकता फैल जाती है। साम्प्रदायिक उपद्रव होने लगते हैं और चारों ओर हिंसा, लूट-पाट और आगजनी की घटनाएँ घटित होने लगती हैं जिससे अपार जन-धन की हानि होती है तथा राष्ट्र कमजोर हो जाता है। इसके अतिरिक्त सवाददाताओ की निरकुशता अथवा असावधानी से असत्य एव मनगढन्त समाचारो का प्रकाशन हो जाता है जिससे बहुत मे लोग अकारण ही परेशानी मे पड जाते हैं। धन के लोभ मे समाचार पत्र अश्लील विज्ञापन तथा नग्न चित्र छाप देते हैं, इससे समाज के चरित्र का ह्रास होता है।

वास्तव मे ये हानियाँ समाचार पत्रो से नही होती बल्कि उनके दोषपूर्ण सम्पादन से होती हैं, किन्तु इसे समाचार पत्र से होने वाली हानि ही समझा जाता है।

5. उपसंहार—आज ससार के प्रायः सभी बडे-देशो ने जनतन्त्रात्मक शासन-प्रणाली को स्वीकार किया है। इस प्रणाली मे व्यक्ति की स्वतंत्रता को महत्त्व दिया जाता है। व्यक्ति को अन्य प्रकार की स्वतन्त्रताओ के साथ विचार-प्रकाशन की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। स्वतन्त्रूप से विचार प्रकट करने का सर्वोत्तम माध्यम समाचार पत्र ही है। समाचार-पत्रो के माध्यम से ही जनता सरकार की नीतियों की आलोचना करती है और स्वतन्त्ररूप से सरकार के सामने अपना मत प्रस्तुत करती है। इससे लोकप्रिय सरकार को जन-हित के कार्यों के लिए बाध्य होना पडता है।

हमारे देश में अभी जनतंत्र पूरी तरह सफल नही हो पाया है। जनतंत्र को सुदृढ बनाने तथा इसे पूरी तरह से सफल बनाने का दायित्व समाचार पत्रो का ही है। यह खेद का विषय है कि हमारे देश के अनेक समाचार-पत्र अपनी भूमिका भली प्रकार नही निभा रहे हैं। आपसी गुटबन्दी, दलीय हित तथा व्यक्तिगत स्वार्थों के घेरे मे फसकर वे राष्ट्रीय हितो को हानि पहुँचा रहे हैं। हमे आशा करनी चाहिए कि आगे आने वाले समय मे इस स्थिति मे निश्चित रूप से सुधार होगा और समाचार-पत्र देश को उन्नत एव शक्तिशाली राष्ट्र के रूप मे ऊँचा उठाने मे अपनी उपयोगी भूमिका निभायेंगे।

□□□

विज्ञान से लाभ और हानियाँ | 12

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2 विज्ञान से लाभ
3 विज्ञान से हानियाँ
4. उपसहार

1 **प्रस्तावना**—मानव-सभ्यता के विकास की कहानी विज्ञान के विकास की कहानी है। सभ्यता का सम्बन्ध मानव-जीवन के बाहरी स्वरूप से है। पहनने-ओढ़ने के वस्त्र, रहने के मकान, आवागमन के साधन, सचार-साधन भोजन जल और प्रकाश, चिकित्सा तथा प्राकृतिक प्रकोपो एव युद्ध से सुरक्षा–ये सब मानव के शरीर की रक्षा के लिए आवश्यक है। यही मानव-जीवन का बाहरी स्वरूप है तथा इनके समन्वितरूप का नाम ही मानव-सभ्यता है। जो मनुष्य जगलो मे नगा फिरता था और हिंसक पशुओं की तरह शिकार करके अपना जीवनयापन करता था, उस मनुष्य का जीवन आज कितना विकसित हो गया है। मानव-सभ्यता को विकसित करने का श्रेय विज्ञान को ही है। आवश्यकता अविष्कार की जननी है। मनुष्य को अपनी सुविधा के लिए जिन-जिन पदार्थों की आवश्यकता होती गयी, वह नये-नये अविष्कार करता गया और इसी के साथ विज्ञान का विकास होता चला गया। आज विज्ञान अपने विकास की चरम सीमा पर पहुँच गया है और वह मानव-जीवन का अभिन्न अग बन गया है। आज मनुष्य की सभी भौतिक आवश्यकताएँ वैज्ञानिक विधि से विकसित उपकरणो मे ही होती है।

2 **विज्ञान से लाभ**—विज्ञान मानव-जीवन के लिए वरदान सिद्ध हुआ है। विज्ञान ने मनुष्य की शक्ति और क्षमता मे असाधारण वृद्धि कर दी है। किसी समय असम्भव समझे जाने वाले कार्य आज विज्ञान की सहायता से पूरी तरह सम्भव हो गये हैं। अजेय प्रकृति पर मनुष्य किसी हद तक विजय प्राप्त करने मे सफल हो गया है। विज्ञान से हुए लाभो को हम निम्नलिखित बिन्दुओ के अन्तर्गत भली प्रकार समझ सकते है—

(1) **आवागमन की सुविधा**—आवागमन की सुविधा की दृष्टि से विज्ञान से मनुष्य को बहुत लाभ हुआ है। एक स्थान से दूसरे स्थान की दूरी अब कोई महत्त्व नही रखती। तेज गति से चलने वाले स्वचालित वाहनो से हम किसी भी

स्थान पर बहुत शीघ्रता से पहुँच सकते है । रेल, मोटर हवाई-जहाज और अब अन्तरिक्ष यानों के रूप में विज्ञान ने मनुष्य की यह उपयोगी सेवा की है ।

(ii) **सचार की सुविधा**—एक जमाना था जब कि कुछ ही दूरी पर बसे स्वजनों से सम्पर्क करना हमारे लिए एक अत्यन्त कठिन कार्य था । दूसरे देशों की जानकारी कर पाने की तो कोई कल्पना ही नही कर सकता था । अब विज्ञान ने सचार साधनों का विकास करके इस असम्भव समझे जाने वाले कार्य को सम्भव बना दिया है । तार, टेलीफोन वायरलैस, रेडियो और टेलीविजन के आविष्कार करके समस्त ससार को एक ही समुदाय के रूप मे आमने-सामने खडा कर दिया है । संसार के किसी भी कोने मे कोई भी घटना घटित हो, हम उसी क्षण उसकी जानकारी कर सकते हैं और यदि आवश्यक हो तो टेलीविजन के माध्यम से अपने कमरे मे बैठे-बैठे ही उस घटना को आखो के सामने घटित होते देख सकते हैं । यह महत्त्वपूर्ण देन विज्ञान की ही है ।

(iii) **चिकित्सा की सुविधा**—चिकित्सा के क्षेत्र मे विज्ञान की सेवा अत्यन्त सराहनीय है । रोग निदान के क्षेत्र मे विज्ञान ने ऐसे उपकरणों, यंत्रो तथा विधियो का आविष्कार किया है कि शरीर की अत्यन्त जटिल रचना मे रोग का ठीक-ठीक निदान करना बहुत सरल कार्य हो गया है । निदान के अतिरिक्त रोग चिकित्सा में भी वैज्ञानिक प्रयोगों से ऐसी औषधियो तथा चिकित्सा की विधियो की खोज करली गई है, जिनसे असाध्य समझी जाने वाली व्याधियो की बडी सरलता से चिकित्सा हो जाती है और रोगी स्वस्थ हो जाता है । अब कैंसर के अतिरिक्त कोई रोग ऐसा नही बचा है जिसकी चिकित्सा सम्भव न हो । शल्य-चिकित्सा के क्षेत्र में तो विज्ञान ने गजब ही कर दिया है । चीरा-फाडी करके रोगी को स्वस्थ कर देना तो कोई विशेष बात नही रही । अब तो परखनली से बच्चे को जन्म देना और हृदयारोपण कर देना भी सम्भव हो गया है ।

(iv) **दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति**—मनुष्य की दैनिक आवश्यकताओ की पूर्ति मे विज्ञान ने बहुत अधिक सहायता की है । विद्युत और विद्युत से चालित यत्रो तथा उपकरणो का आविष्कार करके विज्ञान ने मनुष्य-जीवन मे एक क्रान्ति उत्पन्न कर दी है । प्रकाश, जल तथा गैस के चूल्हे से लेकर पखा, कूलर, हीटर, फ्रिज तथा मिक्सी आदि अनेक ऐसे वैज्ञानिक उपकरण आज उपलब्ध हैं जो हमारे दैनिक जीवन की आवश्यकताओ की पूर्ति करते हैं । इसके अतिरिक्त टाइपराइटर, साइक्लो-स्टाइल, डुप्लीकेटर और मुद्रण-यत्र आदि भी हमारी दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक हैं ।

(v) **मनोरंजन की सुविधा**—विज्ञान ने मनुष्य को मनोरजन के लिए भी अनेक उपयोगी उपकरण दिये है । सिनेमा इस दिशा मे बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है । इसके अतिरिक्त रेडियो, टेपरिकार्डर, टेलीविजन और वीडियो मनोरजन तथा शिक्षा के क्षेत्र मे बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहे है।

(vi) **कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन**—विज्ञान की सहायता से कृषि के क्षेत्र में आश्चर्यजनक उन्नति हुई है। नहरों, नलकूपों, तथा पम्प सैटों से सिंचाई की सुविधा के साथ साथ जुताई, बुआई और कटाई में ट्रैक्टरों का उपयोग बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। उन्नत बीज और उन्नत खाद के प्रयोग ने कृषि उत्पादन को कई गुना बढ़ा दिया है।

स्वचालित मशीनों के प्रयोग से औद्योगिक उत्पादन में भी बहुत वृद्धि हुई है तथा इसके साथ ही नयी वैज्ञानिक तकनीकों की जानकारी होने से तथा आवश्यक यंत्रों का आविष्कार होने से खनिज-उत्पादन में भी आशातीत सफलता प्राप्त हुई है।

(vii) **सामरिक सुविधा**—युद्ध के क्षेत्र में विज्ञान ने मनुष्य को असाधारण शक्ति से सज्जित कर दिया है। रॉकेट स्वचालित मशीनगन, विमान भेदी तोपों, प्रक्षेपास्त्र, राडार, टैंक, पनडुब्बी और तारपीडो आदि के आविष्कारों से देश की स्वाधीनता की रक्षा में बहुत सहायता मिली है। अब यकायक कोई देश किसी देश की सीमा पर आक्रमण करने की बात नहीं सोचता और यदि आक्रमण करता है तो उसे विफल बना दिया जाता है।

उपर्युक्त लाभों के अतिरिक्त विज्ञान ने मानव-जाति को और भी अनेक महत्त्वपूर्ण लाभ पहुंचाये हैं जिनमें परमाणु शक्ति की खोज और उसका शान्तिपूर्ण कार्यों में उपयोग प्रमुख है। इसके अतिरिक्त गणना यंत्र कम्प्यूटर और कृत्रिम उपग्रह भी मानव जाति की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सेवा कर रहे हैं। ये सभी वैज्ञानिक-साधन हमारे सामने प्रत्यक्ष हैं और हम इनसे लाभान्वित हो रहे हैं। अतः हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं कि विज्ञान हमारे लिए वरदान सिद्ध हुआ है।

(3) **विज्ञान से हानियां**—जहाँ विज्ञान से मानव-समाज को अनेक लाभ हुए हैं वहीं उसे कुछ हानियाँ भी उठानी पड़ रही हैं जो निम्न प्रकार से हैं—

(i) **दृष्टिकोण में परिवर्तन**—विज्ञान की उन्नति से मनुष्य के दृष्टिकोण में बहुत परिवर्तन हुआ है। आज मनुष्य पूर्णरूपेण बुद्धिवादी और भौतिकवादी बन गया है। भौतिक-समृद्धि की चकाचौंध से उसकी भीतर की आंखें अन्धी बन गयी हैं। प्रेम, दया, सहानुभूति, परोपकार, सहयोग और त्याग आदि मानवीय गुणों का लोप हो गया है और वह पूर्णरूपेण स्वार्थी बनकर जीने में विश्वास करने लगा है। अनीति और भ्रष्टाचार को उसने नीति और शिष्टाचार मान लिया है। इससे मानव जाति का बहुत अहित हुआ है। सभ्यता संस्कृति पर चढ़ बैठी है और जीवन के शाश्वत मूल्य धूमिल हो गये हैं।

(ii) **अकर्मण्यता**—वैज्ञानिक साधनों ने मनुष्य को अकर्मण्य, आलसी और सुविधा भोगी बना दिया है। इससे उसकी शारीरिक और मानसिक दोनों ही शक्तियों का ह्रास हुआ है। वह पूर्णतः पराधीन बन गया है और शारीरिक श्रम से दूर हट गया है। उसमें कष्ट-सहिष्णुता की शक्ति नहीं रह गई है। थोड़ी सी भी कठिन परिस्थिति

आने पर वह घबरा जाता है। शारीरिक-श्रम के अभाव मे अजीर्ण, गैस, रक्तचाप और हृदय रोग आदि के रोगो का वह स्थायी घर बन गया है। यह बडी हानि विज्ञान की ही देन है।

(iii) अशान्त जीवन—वैज्ञानिक उपकरणों की बहुतायत से मनुष्य का जीवन अशान्त हो गया है। मशीनों और वाहनों की खट-पट तथा रेल-पेल से वायुमण्डल मे शोर-शराबा तथा व्यस्तता हमेशा बनी रहती है। वाहनो और कारखानो की चिमनियो से निकलने वाले धुंआ से वातावरण क्षुब्ध बना रहता है जिससे अनेक रोग उत्पन्न होते है। इसके अतिरिक्त तेज गति से चलने वाले वाहनों से अनेक आकस्मिक दुर्घटनाएं घटती हैं जिनमें मनुष्य कुत्ते की मौत मरने को विवश हो जाता है। मनुष्य-जीवन के लिए यह हानि-प्रद स्थिति विज्ञान की ही देन है।

(iv) सम्पूर्ण विनाश का खतरा—विज्ञान ने मनुष्य को एटम बम, हाइड्रोजन बम और इसी प्रकार के अन्य अनेक विनाशकारी अस्त्र दे दिये हैं जिनका प्रयोग होने पर सम्पूर्ण मानवता के विनाश का खतरा ससार पर मडरा रहा है। कहा नही जा सकता कि मनुष्य अपने स्वार्थ एव अह की तुष्टि के लिए कब अपना विवेक खो देगा और इन विनाशकारी अस्त्रो के प्रयोग से सर्वनाश कर देगा।

उपसंहार—विज्ञान अभिशाप है या वरदान अथवा विज्ञान से हानियाँ अधिक है या लाभ यह निश्चित रूप से बतलाना सरल नही है। वास्तविक स्थिति तो यह है कि विज्ञान मनुष्य के हाथ मे असाधारण शक्ति है। अब यह मनुष्य के विवेक पर निर्भर करता है कि वह इस शक्ति का उपयोग लाभकारी कार्यो मे करता है या विनाशकारी कार्यो मे। इसके साथ ही यह बात भी स्पष्टरूप से समझ ली जानी चाहिए कि विज्ञान अब मनुष्य जाति के लिए अपरिहार्य बन चुका है। ऐसी स्थिति मे आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य मे विवेक शक्ति को जागृत किया जाय जिससे इसके विनाशकारी प्रयोग से बचा जा सके। इसका एकमात्र उपाय यही हो सकता है कि मनुष्य की बौद्धिक उन्नति के साथ-साथ उसकी आध्यात्मिक उन्नति के भी प्रयास किये जाएं। आध्यात्मिक उन्नति से ही उसमे मानवीय गुणो का विकास होगा और तभी बुद्धि तथा हृदय मे समन्वय स्थापित हो सकेगा। उस समन्वय के अभाव में विज्ञान से प्राप्त लाभों का कोई मूल्य नही रहेगा और मानवता सदा त्रस्त, भयभीत और आतंकित ही बनी रहेगी।

चित्रपट अथवा सिनेमा | 13

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2 आविष्कार और विकास
3 समाज पर प्रभाव—लाभ एव हानियाँ
4 चित्र निर्माताओ तथा सरकार का दायित्व
5 उपसहार

1 प्रस्तावना—मनोरजन मनुष्य की एक अनिवार्य आवश्यकता है। यह आवश्यकता आदिकाल से ही बनी रही है और आज भी है। दिनभर काम करने के बाद अथवा किसी स्थिति से उकता जाने पर या जीवन की विषमताएँ से चिन्ताग्रस्त होने पर मनुष्य मन-बहलाव के लिए मनोरजन चाहता है। इससे उसकी स्थिति मे सुधार होता है और वह नयी स्फूर्ति तथा शक्ति प्राप्त करके जीवन-सघर्ष मे पुन जुट जाता है। ससार के सभी मानव-समुदायो मे मनोरजन के साधन किसी न किसी रूप मे अवश्य पाये जाते रहे हैं, जिनम नृत्य, सगीत, विचित्र वेश-भूषा और अभिनय प्रमुख हैं। भारत मे नाट्य-कला बहुत प्राचीनकाल से चली आ रही है और वह अपने पूर्ण विकसित रूप मे रही है। अन्य देशो मे भी नाट्य-कला विभिन्न रूपो मे रही है। मनुष्य की दृश्य और श्रव्य दो ज्ञानेन्द्रियो को एक साथ तुष्ट कर देने के कारण नाटक मनोरजन का एक सशक्त एव श्रेष्ठ साधन है। विज्ञान की उन्नति और फोटोग्राफी के आविष्कार ने नाटक को सिनेमा के रूप मे विकसित किया है। सिनेमा या चित्रपट आज मनोरजन का अत्यन्त प्रभावशाली साधन बना हुआ है और इसकी लोकप्रियता निरन्तर बढती जा रही है।

2 आविष्कार और विकास—जैसा हम कह चुके हैं चित्रपट का उद्गम नाटक से ही है। पूरी साज-सज्जा के साथ खेले जाने वाले ये नाटक सारी रात चलाते थे, किन्तु इनसे बहुत कम लोग मनोरजन कर पाते हैं। धीरे धीरे नाटको मे छाया-चित्रो का प्रवेश हुआ, किन्तु इन छाया चित्रो के द्वारा प्रदर्शित आकृति धुधली होती थी और साज सज्जा के अभाव मे इनमे कोई विशेष आकर्षण भी नही था। धीरे-धीरे ये छायाचित्र भी लुप्त हो गये और इनके स्थान पर आधुनिक चित्रपट प्रारम्भ हुए। चल-चित्र का आविष्कार सन् 1830 मे अमेरिका मे हुआ। इसके आविष्कारक थे मिस्टर एडीसन। एडीसन अनेक स्थिर चित्रो को एक निश्चित गति से

चलाते थे और तीव्र प्रकाश द्वारा उनकी छाया श्वेत-पत्र पर प्रक्षिप्त करते थे, जिससे छायाएँ चलती-फिरती और हाव-भाव करती आती थी। यहीं से चल-चित्र का सूत्रपात हुआ। प्रारम्भ मे चलचित्र मूक ही बनते थे, किन्तु शनैः शनैः इनमे ध्वनि का भी योग हो गया। सन् 1928 मे बोलने वाली फिल्म का श्री गणेश हुआ और सन् 1931 मे 'आलम आरा' नाम की भारत की पहली फिल्म बनी जो बम्बई की इम्पीरियल फिल्म कम्पनी ने बनाई थी। इसके साथ ही लोगो का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ और गायक, अभिनेता, निर्देशक तथा पूँजीपति फिल्म-उद्योग मे लग गये। दृश्यों की स्वाभाविकता तथा सजीवता के कारण चलचित्र अत्यन्त लोकप्रिय हुए और इनका निरन्तर विकास होता चला जा रहा है। रंगीन फिल्म के आविष्कार ने तो चलचित्र को और भी स्वभाविक बना दिया। आज चलचित्र अपने पूर्ण यौवनकाल मे है।

3 **समाज पर प्रभाव**—आज चित्रपट भारतीय समाज मे सर्वाधिक लोकप्रिय है। भारत की सभी भाषाओ मे प्रतिवर्ष सैकडो फिल्मे बनती है और फिल्म व्यवसाय मे लगे सभी लोग मालामाल हो रहे है। यह चित्रपट की लोकप्रियता का स्पष्ट प्रमाण है। भारतीय समाज पर चित्रपट का प्रभाव भी सर्वाधिक पड रहा है। नई पीढी के युवक युवतियों के आचार-विचार और रहन-सहन पर इसके प्रभाव को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। चित्रपट से समाज को अनेक लाभ होते हैं। यह मनोरंजन का सबसे सरल, सस्ता और प्रभावशाली साधन है। दिनभर का थका-माँदा व्यक्ति सिनेमा-हॉल मे जा कर फिल्म देखने मे पूरी तरह खो जाता है और तीन घटे बाद वह अपने आप को काफी हल्का महसूस करता है। मनोरंजन के साथ ही ज्ञान-विज्ञान मे भी चित्रपट बहुत सहायक है। देश-विदेश की विभिन्न जानकारियों के अतिरिक्त इतिहास, कला तथा विज्ञान की अनेकानेक जानकारियाँ चित्रपट के माध्यम से समाज को मिलती है। यह शिक्षा प्रसार का भी एक सशक्त माध्यम है। समाज सुधार और सामाजिक प्रगति का साधन आज चित्रपट से अधिक शक्तिशाली कोई दूसरा नही है। समाज मे व्याप्त अनेक कुरीतियों और अन्धविश्वासो से मुक्ति दिलाने का कार्य चित्रपट के द्वारा बडी सरलता से किया जाना सम्भव है। राष्ट्रीय एकता, सम्प्रदायिक सद्भाव और देश-प्रेम तथा समाज-सेवा का कार्य चित्रपट बडी सफलतापूर्वक सम्पन्न कर सकता है। अछूतोद्धार और नारी को समाज मे उचित स्थान दिलाने मे चित्रपट की भूमिका अत्यन्त सराहनीय रही है।

चित्रपट से जहाँ इतने लाभ हैं वहीं इससे समाज को अनेक हानियाँ भी उठानी पड़ती हैं। यदि हम यह कहे कि लाभ की अपेक्षा हानियाँ ही अधिक हैं तो कोई अनुचित बात नहीं होगी। अधिकाश फिल्म निर्माता नयी पीढी की भावनाओ का का लाभ उठाकर ऐसी फिल्मे बनाते हैं जो कामोत्तेजक होती है। अपरिपक्वावस्था के युवक-युवतियो पर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है और समाज दूषित होता है।

अधिकांश फिल्मों में चोरी, डकैती, तस्करी व गुंडा-गर्दी के ऐसे दृश्य दिखलाये जाते हैं जिनसे प्रभावित होकर नयी पीढ़ी वैसा ही आचरण करने लग जाती है। भद्दे गाने, अश्लील भाषा, बेहूदी पोशाक और अमर्यादित व्यवहार आज चित्रपट की ही देन हैं। ऐसी फिल्मों से ही फिल्म निर्माताओं को अधिक लाभ होता है। वे धन बटोर कर अपनी तिजोरियाँ भर रहे हैं और समाज तथा देश पतन की ओर बढ़ता जा रहा है।

हमारे समाज पर चित्रपट का इतना अधिक प्रभाव पड रहा है कि समाज में एक नयी सभ्यता और संस्कृति पनप रही है। इसे यदि *'फिल्म-सभ्यता'* या 'फिल्म-संस्कृति' कहा जाय तो अनुचित नहीं होगा। हमारे समाज की रहन-सहन, वेश-भूषा और बोल-चाल इस नयी सभ्यता से बहुत अधिक प्रभावित है। इसी प्रकार हमारे आचार विचार, रीति-रीवाज और मान्यताओं पर इस नयी संस्कृति का प्रभाव स्पष्टरूप से देखा जा सकता है। कितना अच्छा होता कि इस नई सभ्यता और संस्कृति से हमारी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति में कोई मेल या समन्वय हो पाता।

(क) चित्र निर्माताओं का दायित्व—भारतीय समाज पर चित्रपट का अत्यधिक प्रभाव होने के कारण चित्र-निर्माताओं को इस विषय में गम्भीरतापूर्वक सोचना चाहिए। उन्हें ऐसे चित्रों का निर्माण करना चाहिए जो समाज और देश की प्रगति में सहायक हों। प्रत्येक फिल्म का एक विशिष्ट उद्देश्य होना चाहिए जिससे प्रेरणा लेकर समाज एक नयी दिशा में आगे बढ़ सके। देश-प्रेम, समाज-सुधार, राष्ट्रीय एकता तथा राष्ट्रीय समृद्धि फिल्मों में प्रमुख होनी चाहिए। यह सही है कि आज सामान्य जनता की रुचि फिल्मों में कामोत्तेजना और मार-धाड के दृश्य ही देखने में अधिक है, किन्तु इस रुचि का निर्माण फिल्म-निर्माताओं ने ही किया है और वे इसे बदल भी सकते हैं। पूरे देश और समाज को पतन के गर्त में ढकेल कर धन बटोरने की प्रवृत्ति देश-द्रोह है, समाज द्रोह है और महापाप है। फिल्म निर्माता यदि अपनी इस प्रवृत्ति पर थोडा भी अंकुश लगा सकें तो वे समाज-सेवा और देश-सेवा का बहुत बडा कार्य कर सकते हैं। वे बडी कुशलता से हमारी प्राचीन आदर्श संस्कृति की रक्षा करते हुए उसका नये रूप में विकास कर सकते हैं। यह उनका एक सामाजिक और राष्ट्रीय दायित्व है।

(ख) सरकार का दायित्व—हमें यह कहने में संकोच नहीं है कि हमारी राष्ट्रीय सरकार भी इस दिशा में पूर्ण जागरूक प्रतीत नहीं होती। सरकार ने सेंसर बोर्ड स्थापित कर रखा है, जिसका प्रमाण-पत्र मिलने पर ही फिल्म प्रदर्शित होती है। किन्तु सेंसर बोर्ड इस दिशा में पूर्ण जागरूक होकर कार्य नहीं कर रहा है। अनेक आपत्तिजनक दृश्यों के रहते भी फिल्म को सेंसर बोर्ड का प्रमाण-पत्र प्राप्त हो जाता है। सेंसर बोर्ड को चाहिए वह कुछ नीति निर्देशक सिद्धान्त तैयार करे और फिल्म निर्माताओं से उनका कठोरता से पालन करवाये। यदि फिल्म निर्माता सहयोग न करें तो सरकार को चाहिए कि वह फिल्म-उद्योग का

राष्ट्रीयकरण कर दे जिससे फिल्मों के माध्यम से राष्ट्रीय और सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए विशेष अभियान चलाया जा सके। स्वार्थी फिल्म निर्माताओं के हाथों समाज और देश का पतन होते देखना लोकप्रिय सरकार के लिए उचित नहीं है।

5 उपसंहार—चित्रपट हमारे जीवन का आज एक अभिन्न अंग बन गया है। यद्यपि यह समाज के लिए अनर्थकारी सिद्ध हो रहा है तथापि इसको सामाजिक जीवन से अलग कर देना सम्भव नहीं है। समाज पर इसकी प्रभावशालिता चिन्ता का विषय नहीं है। चिन्ता का विषय तो चित्रपट का घटिया स्तर है। यदि हम इसके स्तर मे सुधार कर सकें तो यह हमारे लिए एक वरदान सिद्ध हो सकता है। राष्ट्र और समाज में नयी चेतना, नयी जागृति और चरित्र-निर्माण के जो महान् कार्य राष्ट्र के नेता अथवा समाज-सुधारक वर्षों तक कठोर परिश्रम करके भी पूरा नहीं कर सकते, वह कार्य चित्रपट द्वारा बड़ी शीघ्रता से और सरलता से किया जा सकता है। हमें चित्रपट की इस लोकप्रियता का लाभ उठाना चाहिए और इसे समाज की प्रगति का प्रमुख आधार बनाना चाहिए।

वर्तमान भारत की प्रमुख समस्याएँ | 14

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. प्रमुख समस्याएँ
   (क) सामाजिक
   (ख) आर्थिक
   (ग) राजनैतिक
3. उपसंहार

1 प्रस्तावना—सदियों की पराधीनता के पश्चात् हमारा देश भारत 15 अगस्त 1947 को स्वतन्त्र हुआ है। अंग्रेजों ने अपने शासनकाल में अनेक ऐसे तरीके अपनाये जिनसे भारत की जनता में एकता की भावना समाप्त हो, अशिक्षित और गरीब बनी रहकर उनकी गुलामी करती रहे। देश के भौतिक विकास की ओर उन्होंने बिलकुल ध्यान नहीं दिया। स्वदेशी उद्योग-धन्धों को जानबूझ कर चौपट कर दिया ताकि भारत आत्मनिर्भर न बन सके और हर बात में वह अंग्रेजों का मोहताज बना रहे। हमारी प्राचीन वर्ण-व्यवस्था को विकृत रूप देकर जाति-गत भेदों को उभारा गया तथा धर्म और सम्प्रदाय के नाम पर भोली जनता की भावनाओं को उभार कर फूट डालने का पूरा-पूरा प्रयास किया। सामाजिक कुरीतियों और अंध-विश्वासों को बनाये रखने का उनकी ओर से पूरा प्रयास किया गया। इन सब प्रयासों के बावजूद जब भारतीय जनता ने स्वातन्त्र-आन्दोलन छेड़ दिया तो उन्हें अपने बोरिया-बिस्तर समेट कर जाना पड़ा, किन्तु जिन समस्याओं को उन्होंने अपने शासनकाल में उत्पन्न करके पनपाया था, वे आज भी विद्यमान हैं। इनके अतिरिक्त स्वतन्त्र भारत में कुछ नई समस्याएँ और भी उत्पन्न हुई हैं।

2 प्रमुख समस्याएँ—आज भारत अनेक समस्याओं से ग्रस्त है जिनमें सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक समस्याएँ प्रमुख हैं। इन समस्याओं के कारण भारतीय जनता आज भी दुःखी है और देश के विकास में अनेक बाधाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। इन समस्याओं के विषय में हम पृथक्-पृथक् चर्चा करेंगे—

(क) सामाजिक समस्याएँ—

(1) नारी की दासता—हमारे समाज में सबसे प्रधान समस्या स्त्रियों की

है। यद्यपि हमारे संविधान में स्त्री को समान अधिकार दिये हैं, किन्तु व्यवहार में आज भी उसे कोई अधिकार नहीं है। वह पुरुष की इच्छानुसार चलने को बाध्य है। आज भी वह पुरुष के मनोविनोद और विलास का साधन मात्र ही है। पति के द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों को वह मूक-पशु की तरह सहन करने को विवश है। बाल-विवाह, अनमेल-विवाह, वृद्ध-विवाह, विवाह-विच्छेद, विवाह-निषेध आदि ने उसकी दुर्दशा बना रखी है नारी समाज का आधा अंग है जब आधा अंग अविकसित, निष्क्रिय, रुग्ण और पीड़ित रहे तो विकास करना सम्भव ही नहीं है। अतः इस समस्या का समाधान करना हमारे लिए परमावश्यक है। यद्यपि यह समस्या बहुत व्यापक और पुरानी है तथा इस समस्या का समाधान कुछ अंशों में हुआ भी है तो भी सरकार और समाज दोनों को इस दिशा में निरन्तर प्रभावशाली उपाय करते रहना चाहिए।

(ii) जातिगत भेद-भाव—हमारे देश में जातिगत भेद-भाव आज भी एक समस्या है। पूरा समाज जातियों के आधार पर विभाजित है। कुछ बहु-संख्यक जातियों में तो इतनी जातिगत कठोरता है कि वे समाज के सामूहिक हित का बिल्कुल ध्यान न रखते हुए जातिगत हितों का पोषण करने में ही लगी हैं। इस जातिगत संकीर्णता से सामाजिक एकता को भारी क्षति होती है। समाज का पिछड़ापन दूर नहीं हो पाता तथा देश और समाज की उन्नति में बाधा पहुँचती है। हमें इस सम्बन्ध में उदार दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और सम्पूर्ण देश की एक ही जाति 'भारतीय जाति' का अपने आप को सदस्य मानकर समाज के हित को सर्वोपरि महत्त्व देना चाहिए।

(iii) सामाजिक कुरीतियाँ—हमारा समाज अनेक कुरीतियों से ग्रस्त है जिससे वह उन्नति के पथ पर अग्रसर नहीं हो पा रहा है। पर्दा-प्रथा, दहेज, सामूहिक भोज, कन्या-पक्ष की तुलना में वर-पक्ष को अधिक महत्त्व देना आदि अनेक कुरीतियाँ हमारे समाज में प्रचलित हैं। इनमें दहेज-प्रथा तो एक विषम समस्या का रूप धारण कर चुकी है। लड़की के पिता को अपनी कन्याओं के विवाह में इतना धन खर्च करना पड़ता है कि वह आजीवन कर्जदार बना रहता है। इस पर भी वर-पक्ष यदि सन्तुष्ट न हो तो विवाह के पश्चात् लड़की का जीवन नर्क बन जाता है। या तो वह आत्म-हत्या कर लेती है या फिर उसकी हत्या कर दी जाती है। इस प्रकार की घटनाओं के समाचार रोज अखबारों में छपते हैं। सरकार कानून के जरिये इस समस्या के समाधान का प्रयास कर रही है। समाज को और विशेष रूप से नई पीढ़ी के युवकों को भी इस दिशा में प्रयत्न करने चाहिए।

(iv) स्वार्थपरता एवं भ्रष्टाचार—आज हमारे समाज में स्वार्थ की भावना और भ्रष्टाचार इतना अधिक बढ़ गया है कि यह एक राष्ट्रीय समस्या

बन गई है। भौतिकवादी दृष्टिकोण ने हमारे देश के प्रत्येक व्यक्ति अथवा वर्ग को घोर स्वार्थी बना दिया है। आज हमारे देश में लोगों की ऐसी मनोवृत्ति बन गई है कि वे अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति के लिए देश और समाज का बड़े से बड़ा अहित करने में भी नहीं हिचकिचाते। भ्रष्टाचार पनपने और फैलने का भी मुख्य कारण यह स्वार्थ-वृत्ति ही है। भ्रष्टाचार आज एक प्रकार का शिष्टाचार बन गया है। बिना रिश्वत दिये किसी सरकारी कार्यालय से कोई काम निकलवा लेना आसमान के तारे-तोड़ने जैसा है। भ्रष्टाचार के कारण हमारे राष्ट्रीय हितों को भारी नुकसान उठाना पड़ रहा है। इस समस्या के समाधान के लिए सरकार तथा समाज दोनों को ही गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए।

(v) सामाजिक-जागृति का अभाव—हमारे समाज में सामाजिक एवं राजनैतिक जागृति का पूर्ण अभाव है। देश में कहाँ क्या हो रहा है क्या हो रहा है इसका हम पर क्या प्रभाव पड़ेगा और इसमें हमारा क्या दायित्व है-यह सब सोचने समझने का भाव किसी में नहीं है। सब लोग अपनी अपनी ढफली अपना अपना राग वाली कहावत चरितार्थ करते हैं। न हमें अपने देश का ध्यान है, न अपने नगर अथवा गाँव का और न पड़ौस का। सब ओर से उदासीन होकर हम केवल अपने पर आधारित रहते हैं। यह संकुचित दृष्टिकोण और समाज के प्रति उदासीनता की भावना भी हमारे देश की एक व्यापक समस्या है। समाज और देश के प्रति भी हमारे मुख्य कर्त्तव्य है हमें यह बात समझनी चाहिए। हमें सदा जागरूक रहकर अपने दायित्वों का निर्वाह करना चाहिए।

(vi) अशिक्षा—अशिक्षा किसी भी देश अथवा समाज के लिए अभिशाप है। शिक्षा के अभाव में नागरिकों को अपने कर्त्तव्यों और अधिकारों का ज्ञान ही नहीं होता। न उनका पिछड़ापन दूर हो पाता है और न वे आगे बढ़ने के लिए उत्सुक होते हैं। सरकार द्वारा किये जाने वाले विकास के सभी उपाय निष्फल हो जाते हैं। हमारे देश में अशिक्षितों का प्रतिशत बहुत है। इस समस्या का समाधान करने के लिए गाँव-गाँव में स्कूल खोले जा रहे हैं। प्रौढ़ शिक्षा के केन्द्र खोले जा रहे हैं, किन्तु जनता अब भी इस दिशा में विशेष उत्साहित दिखाई नहीं पड़ती। यही कारण है कि हमारे देश में अशिक्षा एक समस्या बनी हुई है।

(vii) अनुशासनहीनता—स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारे देश में अनुशासनहीनता एक नई समस्या उत्पन्न हुई है। यह समस्या राष्ट्रीय स्तर पर है और बहुत व्यापक है। समाज की सबसे छोटी इकाई परिवार से लेकर समाज की सभी छोटी बड़ी संस्थाओं में अनुशासन हीनता व्याप्त हो रही है। छात्रों कर्मचारियों, अध्यापकों, व्यवसायियों, श्रमिकों, अधिकारियों तथा राजनेताओं सहित सामान्य जनता के लोगों में अनुशासनहीनता देखी जा सकती है। अनुशा-

सन के बिना कोई भी समाज अथवा देश उन्नति नही कर सकता। अतः इस समस्या के समाधान के कार्य को हमे सर्वोच्च प्राथमिकता देनी चाहिए। ऊपर से एक आदर्श प्रस्तुत किया जाना चाहिए तथा अनुशासनहीनता करने वालो से सख्ती से निपटना चाहिए।

(ख) आर्थिक समस्याएँ—(i) बेरोजगारी की समस्या—हमारे देश मे इस समय बेकारी एक समस्या बनी हुई है। देश के करोडो लोग रोजगार की तलाश में दर-दर भटकते हैं, किन्तु उन्हे रोजगार नहीं मिलता। इससे देश की जन-शक्ति या तो व्यर्थ ही नष्ट हो जाती है या फिर उसका दुरुपयोग होता है। जीवन से निराश होकर अनेक युवक असामाजिक कार्यों मे लिप्त हो जाते हैं। चोरी, डकैती, राहजनी, गुण्डागर्दी और हत्या जैसे अपराधो की सख्या मे निरन्तर वृद्धि होने का एक प्रमुख कारण बेरोजगारी की समस्या ही है। इस समस्या का शीघ्र समाधान खोजना देश की सरकार और समाज दोनो का दायित्व है। शिक्षा-पद्धति में परिवर्तन करके और छोटे-छोटे उद्योग-धंधो को प्रोत्साहन देकर ही इस समस्या का समाधान करना सम्भव हो सकता है।

(ii) मूल्य-वृद्धि की समस्या—मूल्य-वृद्धि भी हमारे देश की एक समस्या है। जीवन की आवश्यकता की वस्तुओं के दाम आये दिन बढते जा रहे हैं जिससे जनता को बहुत कठिनाइयां उठानी पड रही हैं। इसके लिए जिम्मेदार चाहे सरकार की नीतियां हो, चाहे व्यापारियो और उत्पादकों की मनमानी अथवा वस्तुओं का अभाव। इसका सीधा प्रभाव गरीब जनता पर पडता है। जनता का जीवन स्तर उठने के बजाय गिरता जा रहा है। गरीब और गरीब होता जा रहा है तथा अमीर और अमीर। समाज मे यह आर्थिक विषमता विद्रोह और अराजकता को जन्म देती है। अत इस समस्या का उचित समाधान शीघ्र खोजा जाना चाहिए।

(ग) राजनैतिक समस्याएँ (i) क्षेत्रीयवाद—इस समय भारत मे क्षेत्रीय-वाद जोर पकडता जा रहा है और राज्यो के पुनर्गठन, नदी-जल विवाद तथा राज्यो को और अधिक स्वतन्त्रता की माँग को लेकर राष्ट्रीय एकता को चुनौती दी जा रही है। इस क्षेत्रीयवाद की भावना से प्रेरित होकर जन-आन्दोलन होते है, तोड-फोड और हिंसा की कार्यवाहियाँ भी होती हैं। यह एक राजनैतिक समस्या है। इसे केन्द्रीय सरकार को बडी सूझ-बूझ और सतर्कता से हल करने का प्रयत्न करना चाहिए जिससे राष्ट्रीय एकता सुरक्षित रह सके और देश की प्रगति मे बाधा उत्पन्न न हो।

(ii) साम्प्रदायिक-कटुता—हमारे देश मे अनेक धर्म और सम्प्रदायो के लोग निवास करते हैं। राजनैतिक लोग अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए लोगो मे साम्प्रदायिकता की भावना को भडकाते हैं जिससे देश मे हिंसक उपद्रव होने लगते हैं। चारो ओर अशांति व्याप्त हो जाती है और कानून तथा व्यवस्था की समस्या

उत्पन्न हो जाती है। साम्प्रदायिक कटुता देश और समाज के लिए बहुत घातक है। यह एक सामाजिक तथा राजनैतिक दोनो ही प्रकार की समस्या है। इस समस्या के समाधान के लिए भी सामाजिक और राजनैतिक दोनो ही स्तरो पर उपाय किये जाने चाहिए।

3 उपसहार—हमारा देश बहुत बडा है जिसमे अनेक जातियो, धर्मो और भाषाओं के लोग निवास करते है। सदियो की गुलामी के बाद यह आजाद हुआ है। इसमे बहुत सी समस्याएँ पहले से ही चली आ रही हैं और कुछ नयी उत्पन्न हो गई हैं। इतने बडे देश मे नयी समस्याओ का उत्पन्न होना कोई अस्वाभाविक बात नही है। हमारी सरकार समस्याओ के समाधान के लिए जूझ रही है और धीरे-धीरे सफल भी होती जा रही है। स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात् समस्याओ के बावजूद भी देश आगे बढा है। हमें चाहिए कि हम केवल आलोचक बने रह कर तटस्थ द्रष्टा ही न रहें बल्कि देश की समस्याओ के समाधान के लिए सरकार के प्रयत्नो में सहयोग देते हुए अपने स्तर पर भी कार्य करते रहे। देश हम सब का है और ये समस्याएँ केवल सरकार की ही नही, हम सब की है। यदि हम इस भावना से कार्य करेंगे तो शीघ्र ही सब समस्याएँ समाप्त हो जायेंगी और देश उन्नति के शिखर पर पहुँच जायगा।

□□□

15 | भारत में बेकारी की समस्या

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—देश में बेकारी की स्थिति।
2. बेकारी के कारण
   (i) दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणाली (ii) छोटे उद्योग-धन्धों का अभाव एवं मशीनीकरण (iii) जन-संख्या में वृद्धि (iv) झूठा आत्म-सम्मान (v) श्रम की उपेक्षा (vi) पूँजी का अभाव।
3. बेकारी का प्रभाव
4. बेकारी दूर करने के उपाय
   (i) शिक्षा-पद्धति में सुधार (ii) कुटीर-उद्योगों की स्थापना (iii) जन संख्या-वृद्धि पर रोक (iv) श्रम के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन (v) ग्राम-सुधार।
5. उपसंहार

1 प्रस्तावना—हमारे देश में बेकारी की समस्या दिन प्रतिदिन जटिल होती चली जा रही है। देश के लाखों-करोड़ों युवक रोजगार की तलाश में इधर-उधर भटकते फिरते हैं। किसी दफ्तर में एक क्लर्क या विद्यालय में अध्यापक के पद का विज्ञापन निकाल दीजिये तो आवेदन-पत्रों का ढेर लग जायेगा और साक्षात्कार के लिए उम्मीदवारों की भीड़ लग जायेगी। बेकारी की समस्या शिक्षित युवकों के सामने अधिक है। प्रतिवर्ष स्कूलों, कालेजों और विश्वविद्यालयों से डिग्रियाँ लेकर लाखों युवक निकलते हैं और बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि कर देते हैं। बेकारी की यह स्थिति देश के लिए बहुत घातक है। एक ओर तो हम युवा-शक्ति का उपयोग नहीं कर पा रहे हैं और दूसरी ओर युवा-पीढ़ी में चिन्ता, निराशा और आक्रोश बढ़ता जा रहा है। इस समस्या का सम्बन्ध व्यक्ति, समाज और राष्ट्र सभी से है। अत: इसका समाधान खोजना हम सब का दायित्व है।

2 बेकारी के कारण—(i) दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणाली—इस बेकारी का प्रमुख कारण हमारी दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणाली है। लार्ड मैकाले द्वारा चलाई गई शिक्षा-प्रणाली से नौकरी करने योग्य युवक ही तैयार होते हैं। वे नौकरी के अतिरिक्त अन्य किसी व्यवसाय में आजीविका नहीं चला सकते। स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा का प्रसार तो खूब हुआ, किन्तु शिक्षा-प्रणाली में कोई सुधार नहीं हुआ।

जिस परिमाण मे शिक्षितो की सख्या मे वृद्धि हुई, उस परिमाण मे नौकरियो के अवसर सुलभ नही हो सके। इसका परिणाम बेकारी की समस्या के रूप मे हमारे सामने आ रहा है।

(ii) **छोटे उद्योग धन्धो का अभाव और मशीनीकरण**—अंग्रेजो के शासन-काल से ही मशीनीकरण प्रारम्भ हो गया था जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् आज भी जारी है। देश मे बडे-बडे उद्योग और कल-कारखाने स्थापित हो रहे हैं जिनमे मशीनो की सहायता से सभी चीजो का उत्पादन होता है। जिस काम को करने के लिए दो सौ आदमियो की जरूरत पडती थी उसे स्वचालित मशीनो की सहायता से केवल दो आदमी पूरा कर देते हैं। इसके अतिरिक्त छोटे उद्योग धन्धो पर भी इसका प्रभाव पडता है। देश के कुटीर-उद्योग मशीनीकरण के कारण चौपट हो गये हैं। ऐसी स्थिति मे बेकारी बढना स्वाभाविक है।

(iii) **जनसख्या मे वृद्धि**—देश की दिन प्रतिदिन बढती जनसख्या बेकारी की समस्या को और भी जटिल बना रही है। देश के साधन और रोजगार के अवसर तो प्राय वही हैं, किन्तु रोजगार चाहने वालो की सख्या मे निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। 1951 की जनगणना मे देश की जनसख्या 36 करोड थी जो 1981 की जनगणना मे 68 करोड हो गई। इससे बेकारी की समस्या के समाधान मे बाधा उत्पन्न होती है और समस्या गम्भीर रूप धारण करती जा रही है।

(iv) **झूठा आत्म-सम्मान**—रोजगार के विषय मे हमारे देश-वासियो मे झूठे आत्म-सम्मान की भावना भी बेरोजगारी का एक कारण है। समाज के उच्च-वर्ग के प्रतिष्ठित परिवारो के लोग अपनी आजीविका के लिए ऐसा कोई व्यवसाय नही करना चाहते जिसमे उन्हे अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा की हानि दिखाई पडती हो। प्रतिष्ठापूर्ण आजीविका के अवसर सुलभ नही होते और बेकारी से उन्हे मुक्ति नही मिल पाती। यह भ्रान्त धारणा बेकारी बढाने मे सहायक हो रही है।

(v) **श्रम की उपेक्षा**—हमारे देश के युवक स्वभाव से अकर्मण्य, आलसी और परमुखापेक्षी बन गये हैं। श्रम से वे कतराते हैं। वे कोई ऐसी आजीविका प्राप्त करने को इच्छुक रहते हैं, जिसमे कम से कम काम करना पडे और अधिक से अधिक लाभ हो। ऐसा व्यवसाय सरकारी नौकरी के सिवा दूसरा नही हो सकता। इसके अतिरिक्त वे शारीरिक श्रम को हेय दृष्टि से देखते हैं। किसी ऐसे व्यवसाय की तलाश मे वे रहते हैं, जिसमे उनके कपडो पर धूल न लगे। श्रम के प्रति इस अनादर के भाव ने भी बेकारी की समास्या को बढाने मे सहायता दी है।

(vi) **पूंजी का अभाव**—अनेक युवक शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् अपना निजी व्यवसाय करने मे रुचि रखते हैं, किन्तु पूंजी के अभाव मे वे ऐसा नही कर पाते। बहुत से तकनीकी और औद्योगिक शिक्षा प्राप्त युवक भी पूंजी के अभाव मे नौकरियाँ तलाश करते हैं और बेरोजगारो की फौज मे शामिल हो जाते हैं।

3 बेकारी का प्रभाव—बेकारी का हमारे देश की सामाजिक स्थिति पर बहुत बुरा प्रभाव पड रहा है। युवकों मे चिन्ता, निराशा और आक्रोश की भावना फैलती जा रही है। जिससे देश मे अनुशासनहीनता बढ रही है और चारो ओर अव्यवस्था तथा अराजकता की स्थिति उत्पन्न होती जा रही है। युवक असामाजिक तथा अपराध-वृत्ति को अपनाने पर मजबूर हो रहे हैं—

'बुभुक्षितं किं न करोति पापं'

भूखा आदमी क्या नही करता ? बेकारी के कारण ही देश मे गरीबी बनी हुई है। अभिभावक अपनी गाढी कमाई बालकों की शिक्षा पर खर्च कर देते हैं, किन्तु शिक्षा पूर्ण करने पर उन्हे रोजगार ही नही मिलता और उसका बोझ यथावत् बना रहता है। ऐसी स्थिति मे गरीबी दूर हो तो कैसे ? कुल मिलाकर बेकारी के कारण समाज और देश की स्थिति चिन्ताजनक बनी हुई है।

4 बेकारी दूर करने के उपाय—(i) शिक्षा-प्रणाली में सुधार—शिक्षा-प्रणाली को रोजगारोन्मुख बनाकर बेकारी की समस्या के समाधान मे बहुत अधिक सफलता प्राप्त की जा सकती है। शिक्षा-प्रणाली ऐसी तैयार की जानी चाहिए जिसमे सामान्य शिक्षा के साथ ही अपनी रुचि के किसी व्यवसाय की शिक्षा भी वह प्राप्त कर सके और शिक्षा पूर्ण करने पर उसे नौकरियाँ तलाश करने की आवश्यकता न रहे। यह कार्य आसान नही है, किन्तु शिक्षा-प्रणाली मे आमूल-चूल परिवर्तन किये बिना बेकारी की समस्या का समाधान भी सम्भव नही है।

(ii) कुटीर उद्योगों की स्थापना—गांधीजी ने कुटीर उद्योगो को हमारे देश की अर्थ-व्यवस्था की धुरी माना था। हमे अब बडे उद्योगों की बजाय छोटे-छोटे कुटीर उद्योगों की स्थापना पर बल देना चाहिए। इससे लोगो को अपने घर अथवा गांव मे ही रोजगार के अवसर सुलभ हो जायेंगे और बेकारी की समस्या के समाधान मे सहायता मिलेगी।

(iii) जनसंख्या-वृद्धि पर रोक—जनसंख्या-वृद्धि पर रोक लगाना हमारे लिए अनेक दृष्टियो से आवश्यक है। बेकारी की समस्या के समाधान मे भी इससे बहुत सहायता मिलेगी। इस दिशा मे सरकार अपनी ओर से खूब प्रयास कर रही है। हमें स्वयं भी इस दिशा मे प्रयास करने चाहिए। हमारे सहयोग के बिना इस दिशा मे सरकार को सफलता नही मिल सकती।

(iv) श्रम के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन—कैसे आश्चर्य की बात है कि बाबूजी को मेहनत-मजदूरी का काम करने में तो शर्म आती है, किन्तु रात को चोरी करने, डाका डालने या जेब काटने मे शर्म नही आती। यह श्रम के प्रति हमारे अनुचित दृष्टिकोण का ही फल है। इस दृष्टिकोण मे परिवर्तन लाने का प्रयास हम सबको करना चाहिए। शारीरिक श्रम के प्रति हमारी धारणा मे परिवर्तन आने से बेकारी की समस्या पर बहुत अनुकूल प्रभाव पड सकता है।

(५) ग्राम-सुधार—बेकारी की समस्या को ग्रामों की जनता के शहरों की ओर आकर्षण ने और भी जटिल बना दिया है। शहरों की चमक-दमक, सिनेमा और बाजारों की अफरा-तफरी के आकर्षण से गाँवों के युवक शहरों में ही रोजगार की तलाश करने का प्रयास करते है। वे अपने पैतृक व्यवसायों को छोडकर ऐसे व्यवसायों की तलाश करते है जो उन्हे शहरों मे उपलब्ध हो सकें। शहरों की ओर आकर्षण का कारण अनेक प्रकार की सुविधाओं का मिलना भी है। अत ग्राम-सुधार का कार्य करके इस समस्या का समाधान किया जा सकता है। गाँवो मे सब प्रकार की सुविधाओं का प्रबन्ध हो जाय, नल, विद्युत् और बाजारो की सुविधा मिल जाय तथा मनोरजन के आधुनिक साधन भी सुलभ हो जायें तो ग्रामीणों मे शहरो के प्रति आकर्षण समाप्त हो सकता है और उन्हें अपने ग्राम मे ही रोजगार के अवसर सुलभ हो सकते है।

5 उपसंहार—बेकारी की समस्या से हमारी सरकार पूर्णतया परिचित है और इसके समाधान के लिए प्रयत्नशील भी है। पचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से देश के विकास का प्रयत्न कर रही है जिनमे अधिकाधिक लोगों को आजीविका के साधन उपलब्ध होते है। अनेक व्यवसायों का राष्ट्रीयकरण करके भी अधिक लोगों को व्यवसाय देने का प्रयास किया गया है। बैंको का राष्ट्रीयकरण करके छोटे तथा मझले उद्योगों की स्थापना के प्रयास किये जा रहे हैं। बेरोजगारो को अपना रोजगार चलाने के लिए बैंकों से बहुत कम ब्याज की दर पर ऋण भी उपलब्ध कराये जा रहे हैं। ग्राम-सुधार और ग्राम-विकास को प्राथमिकता दी जा रही है। ग्रामो मे नल-योजना और विद्युत की व्यवस्था के अलावा अन्य सुविधाएँ भी उपलब्ध कराई जा रही हैं। धीरे-धीरे देश और समाज आगे बढ भी रहा है किन्तु प्रगति की रफ्तार काफी धीमी है। इसका प्रमुख कारण सदियो पुरानी हमारी अनेक समस्याएँ हैं। हम सरकार के कार्यों मे हाथ बँटाकर इन समस्याओं का समाधान करने मे सहायता कर सकते है।

16 | जनसंख्या : समस्या और समाधान

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2 जनसंख्या-वृद्धि के कारण— (i) अशिक्षा (ii) भ्रान्त धारणाएँ (iii) निम्न जीवन-स्तर (iv) संयम का अभाव (v) शरणार्थियों का आव्रजन
3 जनसंख्या-वृद्धि का प्रभाव
4 जनसंख्या-नियंत्रण के उपाय—(i) शिक्षा का प्रचार (ii) राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास (iii) जीवन-स्तर में सुधार (iv) शरणार्थियों के प्रवेश पर रोक
5 उपसंहार

1 प्रस्तावना—आज हमारा देश अनेक जटिल समस्याओं से घिरा हुआ है। इन समस्याओं में एक अत्यन्त जटिल समस्या जनसंख्या-वृद्धि की है। 1951 की जन-गणना में भारत की जनसंख्या 36 करोड़ थी जो 1981 की जन-गणना में 68 करोड़ तक पहुँच गई है। ये आँकड़े चौंका देने वाले हैं और इनमें समस्या की भीषणता का पता चलता है। जिस गति से हमारे देश में जनसंख्या में वृद्धि हो रही है, उससे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि बीसवीं सदी के अन्त तक हमारे देश की जनसंख्या एक अरब तक पहुँच जायगी। जनसंख्या में हो रही निरन्तर वृद्धि से हमारे सामने अनेक नयी समस्याएँ उत्पन्न होती जा रही हैं। पहले से चली आ रही समस्याओं का समाधान होने के बदले उनमें और अधिक जटिलता आती जा रही है। हम यदि यह कहें कि हमारे देश की अनेक समस्याओं की जन्मदात्री जनसंख्या-वृद्धि की समस्या ही है तो कोई असंगत बात नहीं है।

2 जनसंख्या-वृद्धि के कारण—जनसंख्या-वृद्धि के अनेक कारण हैं, जिन पर हम बिन्दुवार प्रकाश डालने का प्रयत्न करेंगे।

(i) **अशिक्षा**—जनसंख्या-वृद्धि का मूल कारण अशिक्षा है। देश की अधिकांश जनता अशिक्षित है, जिनमें स्त्रियों का प्रतिशत और भी अधिक है। शिक्षा के अभाव में जनता अन्ध-विश्वासी बनी हुई है। संतान को ईश्वर की देन मानकर अधिक संतान होने पर अपने आप को भाग्यशाली मानते हैं। अधिक संतान होने पर उनके पालन-पोषण में आने वाली कठिनाइयों से परेशान भी बहुत हैं, किन्तु अशिक्षा के कारण जनता के समझ में यह बात नहीं आती कि इन परेशानियों का कारण वे

स्वय ही हैं । अशिक्षा के कारण ही सरकार द्वारा किये जाने वाले प्रयास भी सफल नही हो पाते है और परिणाम जनसख्या-वृद्धि के रूप में सामने आ रहा है ।

(ii) भ्रान्त धारणाएँ—हमारे समाज में व्याप्त भ्रान्त धारणाएँ भी जनसख्या-वृद्धि में सहायक हो रही हैं , 'पुत्र से ही वश चलेगा और पुत्र से ही मोक्ष होगी' इस धारणा के कारण वे दम्पति सन्तानोत्पत्ति पर रोक नही लगाते, जिनके केवल कन्याएँ ही हुई है चाहे उनकी सख्या कितनी ही हो गई हो । इसके विपरीत जिनके केवल पुत्र ही पुत्र उत्पन्न होते हैं, वे भविष्य की चिन्ता से मुक्त रहकर स्वय को भाग्यशाली मानते हुए अपने सौभाग्य को बढाने में लगे रहते हैं । कुछ अल्पसख्यक जातियो की यह धारणा है कि उन्हे जातीय अस्तित्व की रक्षा के लिए यथा सम्भव अधिकाधिक सन्तान उत्पन्न करनी चाहिए । इस सब भ्रान्त धारणाओ के परिणाम स्वरूप जनसख्या मे निरन्तर वृद्धि हो रही है ।

(iii) निम्न जीवन-स्तर—यह बात स्पष्ट देखी जाती है कि उच्च जीवन स्तर के लोगों की तुलना मे निम्न जीवन-स्तर के लोगो के अधिक सन्ताने होती है । निम्न-स्तर के लोगो का कार्य क्षेत्र बहुत सीमित होता है । अपने आप को व्यस्त रखने के अवसरो तथा आमोद प्रमोद के साधनो का उनके पास अभाव होता है । इसके अतिरिक्त न तो उन्हे अपने जीवन-स्तर के सुधार की चिन्ता होती है और न ही बालको की शिक्षा-दीक्षा अथवा पालन-पोषण के लिए विशेष व्यवस्था करने की वे परवाह करते हैं । अपनी सन्तान के लिए आजीविका की व्यवस्था करने की भी उन्हे चिन्ता नही होती । अत वे सन्तान-वृद्धि पर रोक लगाने की बात सोचते ही नही हैं ।

(iv) सयम का अभाव—आधुनिक भौतिकतावादी सामाजिक व्यवस्था मे सयम और आत्म नियत्रण के लिए कोई स्थान ही नही बचा है । सिनेमा के कामोत्तेजक दृश्य, रेडियो पर कामोत्तेजक गाने, अश्लील विज्ञापन, अश्लील साहित्य और अर्द्ध-नग्न वस्त्रो म अगो का खुला प्रदर्शन सयम को स्थिर नही रहने देता । इसमे भी बढकर यह बात है कि सयम के विचार को अब दकियानूसी विचार कहा जाने लगा है । युवक-युवतियो के खुले सम्पर्क की हिमायत भी सुनने को मिल जाती है । ऐसी स्थिति म जनसख्या-वृद्धि होना स्वाभाविक है ।

(v) शरणार्थियों का आव्रजन—हमारे पडौसी देशो से शरणार्थी बहुत बडी सख्या मे भारत मे आकर बस गये हैं और अब भी आते जा रहे हैं । इससे हमारे देश की जनसख्या मे यकायक वृद्धि होती जा रही है ।

3 जनसख्या वृद्धि का प्रभाव—जनसख्या-वृद्धि का हमारी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थिति पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव पड रहा है । पचवर्षीय योजनाओ से कृषि तथा औद्योगिक उत्पादनो मे अत्यधिक वृद्धि हुई है, किन्तु जनसख्या-वृद्धि ने इसे नगण्य बना दिया है । अब भी हमे खाद्यान्नो और अन्य अनेक

वस्तुओं का विदेशों से आयात करना पड़ता है। जनसंख्या-वृद्धि से बेकारी की समस्या जटिल हो रही है तथा मूल्य-वृद्धि पर रोक लगा पाना सम्भव नहीं हो रहा है। खेत और जंगल उजाड़ हो गये हैं जिन पर आवासीय मकान बन गये हैं, किन्तु फिर भी आवास-समस्या जटिल बनी हुई है। रेलों और बसों में खड़े रहने को स्थान नहीं मिलता। बाजारों में पैदल चलने वालों को चलने के लिए जगह नहीं मिलती। स्कूल, कालेज और अस्पतालों की हालत हम रोज देखते हैं। अपराधों और जन-आन्दोलनों में निरन्तर वृद्धि हो रही है और सरकार के लिए कानून-व्यवस्था बनाये रखना कठिन हो रहा है। जनसंख्या वृद्धि से सब लोग त्रस्त हैं किन्तु निरुपाय होकर कठिनाइयाँ भोग रहे हैं। सरकार भी इस समस्या का तुरत-फुरत समाधान करने में अपने आपको असहाय महसूस करती है।

4 जनसंख्या-नियंत्रण के उपाय—जनसंख्या-वृद्धि पर रोक लगाने के लिए हमें निम्नलिखित उपाय अपनाने होंगे—

(i) शिक्षा का प्रचार—शिक्षा अनेक रोगों की एक ही रामबाण औषधि है। शिक्षा से मनुष्य में विवेक उत्पन्न होता है, अन्धविश्वास और भ्रान्त धारणाएँ समाप्त हो जाती है। वह अपने तथा अपने परिवार के विषय में ठीक प्रकार से सोचने के साथ-साथ समाज और देश के विषय में सोचने में समर्थ होता है। सरकार द्वारा चलाये जा रहे परिवार-कल्याण कार्यक्रम का हमारी जनता पर तभी प्रभाव पड़ेगा जबकि वह शिक्षित होगी। अतः हमें शिक्षा के प्रचार और प्रसार के कार्य को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी चाहिए।

(ii) राष्ट्रीय-दृष्टिकोण का विकास—हमारे देश की जनता में राष्ट्रीय-दृष्टिकोण का अभाव है। हम लोग केवल अपने और अपने परिवार के विषय में ही अधिक सोचते हैं। हमारी भूल का प्रभाव राष्ट्रीय-जीवन पर क्या पड़ेगा और उस प्रभाव से हम कैसे बचे रह सकेंगे, यह सोचने वालों की हमारे देश में बहुत कमी है। हम अपने जातीय और वर्ग हितों का ही ध्यान रखते हैं। राष्ट्रीय-दृष्टिकोण का विकास हमारी जनता में अभी नहीं हो पाया है। हमारी राष्ट्रीय एवं प्रान्तीय सरकारें, जन-प्रतिनिधि, समाज-सेवी संस्थाएँ, समाज-सुधारक तथा स्वयं-सेवी संस्थाओं को पूरी शक्ति के साथ देश की जनता में राष्ट्रीय-दृष्टिकोण का विकास करने का प्रयत्न करना चाहिए। इसके लिए उन्हें अपना आदर्श भी प्रस्तुत करना चाहिए। राष्ट्रीय-दृष्टिकोण का विकास होने पर अनेक समस्याओं के समाधान के साथ ही जनसंख्या-वृद्धि पर भी रोक अवश्य लगेगी।

(iii) जीवन-स्तर में सुधार—सरकार को निम्न-स्तर के लोगों के जीवन-स्तर में सुधार करने का प्रयास करना चाहिए। उन्हें शिक्षा, रोजगार, स्वच्छ आवास, स्वास्थ्य सुविधाएँ तथा आमोद-प्रमोद के विकसित साधन उपलब्ध कराकर उनके जीवन-स्तर में सुधार किया जा सकता है। इन साधनों को उपलब्ध कराने के साथ

ही उनमे अच्छा जीवन-स्तर प्राप्त करने की ललक भी उत्पन्न करना आवश्यक है। इस कार्य मे सरकार के अतिरिक्त समाज-सेवी सस्थाएँ भी बहुत योगदान कर सकती हैं। जीवन-स्तर में सुधार की प्रबल इच्छा जागृत होने मात्र से ही जनसख्या-वृद्धि पर रोक लगना प्रारम्भ हो जायगा। स्तर मे सुधार के पश्चात तो यह समस्या ही नही रहेगी।

(iv) शरणार्थियो के प्रवेश पर रोक—शरणार्थियो के प्रवेश पर रोक लगाना नितान्त आवश्यक है। यह कार्य केवल हमारी राष्ट्रीय सरकार के ही जिम्मे है। सरकार को दृढ इच्छा-शक्ति के साथ देश की सीमाओ पर कठोर नियत्रण स्थापित करना चाहिए और शरणार्थियो के प्रवेश पर रोक लगा देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त जो शरणार्थी अनाधिकृत रूप से भारत मे आकर बस गये है उन्हे भारतीय नागरिकता नही देनी चाहिए तथा सम्बन्धित देशो से विचार विमर्श करके उन्हे अपने देश मे लौट जाने के लिए बाध्य करना चाहिए। सरकार की इन कार्यवाहियो से जनसख्या पर नियत्रण रखने मे बहुत सहायता मिलेगी।

5 उपसहार—जनसख्या-वृद्धि की समस्या की जटिलता को हमारी सरकार ने गम्भीरता से समझा है। इस समस्या के समाधान हेतु परिवार-नियोजन अथवा परिवार-कल्याण नाम से एक सघन अभियान चलाया जा रहा है। राष्ट्रीय-स्तर पर परिवार-कल्याण के लिए अलग से मत्रालय भी स्थापित किया गया है। भाषणो, अखबारो, पोस्टरो, रेडियो तथा टेलीविजन के माध्यम से परिवार-कल्याण के लिए भरपूर प्रचार किया जा रहा है। नसबन्दी और अन्य अनेक प्रकार के सन्तति-निरोध के उपाय निकाले गये हैं तथा सन्तति निरोध के स्थायी साधन अपनाने वाले स्त्री-पुरुषो को विशेष अनुग्रह राशि के साथ-साथ अन्य अनेक सुविधाएँ भी उपलब्ध करवाई जा रही हैं। बहुत बडी तादाद मे लोग परिवार-कल्याण कार्यक्रम अपना भी रहे हैं, किन्तु फिर भी इस समस्या की जटिलता अभी बनी हुई है। इसका मूल कारण सामान्य जनता का इस कार्यक्रम की ओर आकर्षित न होना ही है। जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, यह समस्या एक राष्ट्रीय-समस्या है और अनेक अन्य समस्याओ की जननी है। अत इसके समाधान के लिए परिवार-कल्याण कार्यक्रम के साथ ही अन्य उपाय भी अपनाये जाने चाहिए। इस कार्य मे सरकार के साथ हम सबको भी सहयोग करना चाहिए।

17 | दहेज-प्रथा

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2. दहेज-प्रथा का प्रारंभिक स्वरूप
3. दहेज-प्रथा का वर्तमान स्वरूप
4. दहेज-प्रथा से हानियाँ
5. दहेज-प्रथा को समाप्त करने के उपाय
6. उपसंहार

1. प्रस्तावना—" पुत्रीति जाता महतीह चिन्ता, कस्मै प्रदेयेति महान्, वितर्क. ।
दत्वा सुखं प्राप्स्यति वा नवेति, कन्या पितृत्वं खलुनाम कष्टम् ॥

नर और नारी दोनों के मेल से ही समाज का अस्तित्व है। दोनों का ही समाजिक जीवन में समान महत्त्व है। ये दोनों एक-दूसरे के पूरक है। एक के अभाव में दूसरे का जीवन अधूरा है। गृहस्थ की गाडी के ये दोनों दो पहिए है। इतना होते हुए भी समाज में कन्या का जन्म लेना अभिशाप माना जाता है। पुत्र-जन्म पर उत्सव मनाया जाता है। नाच-गाने होते हैं, मिठाइयाँ बटती हैं और बधाइयाँ ली-दी जाती हैं। इसके विपरीत कन्या के जन्म लेने पर सबके चेहरे उदास हो जाते हैं। घर में शोक हो जाता है और अपने दुर्भाग्य का रोना रोते हुए भगवान की मर्जी समझ कर किसी प्रकार सन्तोष लिया जाता है। कैसी है यह विडम्बना ? क्यो है इतना अन्तर? ये प्रश्न किसी भी विचारशील प्राणी को सोचने के लिए वाध्य कर देते हैं। गम्भीरता-पूर्वक विचार करने पर अनेक कारण समझ में आते हैं, जिनमें प्रमुख कारण है—दहेज-प्रथा। लड़की पराया-धन है। एक रोज चली जायगी और अपने साथ घर की सम्पत्ति भी ले जायगी—

"लड़की वालो की यही बदहाली ।
पेट भी खाली और घर भी खाली ।"

वास्तव में दहेज-प्रथा एक ऐसी कुप्रथा है जिसने विवाह जैसे पवित्र-बन्धन को अपवित्र बना दिया है और सामाजिक जीवन में विष घोल दिया है। कन्या अपने जन्म से ही हीन-भावना से ग्रसित रहती है और माता-पिता उसे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में अपने सिर का बोझ समझ कर ही उसका पालन-पोषण करते हैं।

2 दहेज प्रथा का प्रारम्भिक स्वरूप—दहेज का अस्तित्व आदिकाल से ही है। हमारे समाज के व्यवस्थापकों ने ब्राह्म विवाह, गान्धर्व विवाह, राक्षस विवाह आदि आठ प्रकार के विवाह बतलाये हैं। इन व्यवस्थापकों में महर्षि याज्ञवल्क्य और मनु प्रमुख हैं। इन विवाहों में ब्राह्म विवाह सर्वश्रेष्ठ माना गया है जिसमें कन्या का पिता वर को अपने घर बुलाकर अग्नि की साक्षी में उसे अपनी कन्या समर्पित करता है और उसी के साथ यथा शक्ति उसे भेंट भी देता है। इस भेंट के प्रावधान ने ही कालान्तर में दहेज का रूप धारण किया है। इसी यथा शक्ति की भावना के साथ भेंट के रूप में यह दहेज एक आदर्श व्यवस्था थी। पिता की सम्पत्ति पर पुत्री का भी अधिकार है। अत पिता अपनी सम्पत्ति का कुछ अश स्वेच्छा से उसे इस रूप में दे देता था जिससे भाई बहिन के स्नेहपूर्ण व्यवहार में कोई व्यवधान उत्पन्न नही होता था। यह एक प्रकार का आधुनिक हिन्दू कोड बिल' ही था। कालान्तर में स्वेच्छा और यथा शक्ति' इन दोनो शब्दों म निहित भावना का रूप बदल गया और इच्छा के विपरीत शक्ति से अधिक देने की विवशता कन्या के पिता के सामने उपस्थित हो गई *यहीं से इस प्रथा ने विकृत रूप धारण कर लिया जो आज अत्यन्त घिनौने रूप म* हमारे सामने है और जिसने विवाह के पवित्र बन्धन को एक सौदा बना दिया है।

3 दहेज का वर्तमान स्वरूप—दहेज का वर्तमान स्वरूप बहुत घिनौना है। *आज यह एक व्यापार बन गया है। लडके वाले इतने निर्लज्ज हो गये है कि खुल्लम-*खुल्ला लेन-देन का सौदा तय करते हैं। यह सौदा यद्यपि अलिखित रूप में ही तय होता है, किन्तु शर्तों के अनुसार थोडी भी कमी रह जाने पर कन्या और कन्या के पिता के सामने अनेक समस्याए उत्पन्न हो जाती है। दहेज प्रथा के इस विकृत रूप के कारण घर में कन्या का जन्म होना एक अभिशाप और परम दुर्भाग्य माना जाने लगा है। आजकल दहेज अनेक रूपों में प्रचलित है नकदी, सोना चादी, बर्तन, कपडे तथा आधुनिक सुविधा की मूल्यवान सामग्री जैसे फ्रिज, टेलीविजन, स्कूटर और मोटर से लेकर मकान एव जमीन जायदाद तक दहेज में लिए व दिये जाते है। अच्छा दहेज प्राप्त करने पर वर पक्ष के लोग अपने आप को गौरवान्वित महसूस करते हैं। अब यह स्वार्थ सिद्धि के साथ सामाजिक प्रतिष्ठा का भी एक आधार बन गया है। जो लोग लडकी का विवाह तय करते समय दहेज की माग करने वाले की आलोचना करते हैं वे ही लडके का विवाह तय करते समय नि सकोच होकर दहेज का सौदा तय करते देखे जाते है।

4 दहेज प्रथा से हानियाँ— आज दहेज प्रथा एक अभिशाप बन चुकी है। यह व्यक्ति और समाज दोनो ही के लिए हानिकारक बनी हुई है। दहेज के कारण अनेक कन्याए अविवाहित ही रह जाती है जो या तो आत्म-हत्या कर लेती हैं या पथ भ्रष्ट हो जाती हैं अथवा आजीवन कठोर यातनाए सहती हैं। अनेक योग्य लडकिया अयोग्य रोगी अथवा वृद्ध वर को सौंप दी जाती हैं जिनसे उनका जीवन नर्क बन जाता

है। दहेज न देने अथवा कम देने के कारण वर-पक्ष के लोग नव-वधु को अनेक यातनाएँ देते है। उसे अनेक प्रकार से लाछित और अपमानित किया जाता है। इन सब का परिणाम यह होता है कि या तो विवाह-सम्बन्ध का विच्छेद होता है या वह आत्म-हत्या करके अपने जीवन का अन्त करने पर मजबूर हो जाती है या फिर उसको किसी न किसी बहाने हत्या कर दी जाती है। इस प्रकार की रोमाचक घटनाओं के समाचार हम अपने समाज मे आये दिन सुनते रहते हैं और समाचार पत्रों मे पढते रहते है। दहेज के दानव ने नारी जाति को इस प्रकार अपने चगुल में जकड लिया है कि वह अपने मान-सम्मान और जीवन की रक्षा करने में भी असमर्थ हो रही है। दर्शक समाज भी सब कुछ देख सुन रहा है, किन्तु इस दानव का मुकाबला करने का साहस नही कर पाता।

दहेज-प्रथा से समाज को भी अनेक हानियाँ उठानी पड रही हैं। माता-पिता वर की तलाश में दर-दर भटकते रहते है और फिर कर्ज के बोझ से इतने दब जाते हैं कि जमीन–जायदाद बेचने तक को मजबूर हो जाते हैं। अपनी कन्या को योग्य वर के हाथों सौंपने की चाह मे उसका पिता दहेज का प्रबन्ध करने के लिए रिश्वत, बेईमानी, धोखा-धडी तथा चोरी आदि की बुराइयो में लिप्त हो जाता है। इसमे समाज का नैतिक पतन होता है और समाज में अन्य अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। जिनके बुरे परिणाम पूरे देश और समाज को भोगने पड रहे हैं। दहेज-प्रथा की क्रूरता से क्षुब्ध होकर महात्मा गाधी ने कहा था—

"दहेज की पातकी प्रथा के खिलाफ जबर्दस्त लोकमत बनाया जाना चाहिए। जो नौजवान इस प्रकार गलत ढग से लिए गये धन से अपने हाथ अपवित्र करें, उन्हें जाति से बहिष्कृत कर देना चाहिए। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि यह एक हृदय-हीन बुराई है।"

दहेज-प्रथा के कारण वर-पक्ष के लोगो और विशेषकर युवको में लालच की ऐसी भावना उत्पन्न हो गई है कि वे मन-भावन पत्नी के साथ ही वैवाहिक जीवन की समस्त सुविधाओ को प्राप्त करने को आतुर रहते हैं। इससे उनमें सच्चे आत्म-सम्मान की भावना लोप हो गयी है और अकर्मण्य बनकर पुरुषार्थ से जी चुराने वाले बनते जा रहे हैं। युवा-वर्ग की यह स्थिति देश और समाज के लिए बहुत हानिकारक है।

5 दहेज-प्रथा को समाप्त करने के उपाय—यद्यपि इस कुप्रथा को समाप्त करने के लिए बहुत पहले से ही प्रयास किये जा रहे हैं। अंग्रेजों के शासन-काल से ही राष्ट्रीय जन-जागृति के साथ सामाजिक जागृति के लिए हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने इस बुराई की ओर समाज का ध्यान आकर्षित किया था। कानूनी तौर पर इस कुप्रथा को समाप्त करने के लिए सर्वप्रथम *1961* में हमारी केन्द्रीय सरकार ने दहेज-विरोधी अधिनियम बनाया, जिसमें दहेज के अपराधी को *5,000* रु० तक का

जुर्माना और छ माह तक की कैद का प्रावधान रखा गया, किन्तु जनता के सहयोग के अभाव में यह कानून किताबों में ही पड़ा रह गया। इसके पश्चात् अनेक संस्थाओं ने इस बुराई के खिलाफ अपनी आवाज उठायी है और वर्तमान केन्द्रीय सरकार ने दहेज विरोधी अधिनियम में कुछ संशोधन भी किये है तथा सजा के प्रावधान को और अधिक कठोर बनाया जा रहा है, लेकिन इस समस्या का समाधान अकेली सरकार कानून के जरिये करने में सफल नहीं हो सकती।

इस कुप्रथा के उन्मूलन के लिए देश के युवा-वर्ग मे जागृति उत्पन्न होना परमावश्यक है। इसके लिए युवक-युवतियो को साहस के साथ आगे आना चाहिए और उन्हे दहेज प्रथा का डटकर विरोध करना चाहिए। उन्हे उस विवाह सम्बन्ध का इन्कार कर देना चाहिए जिसमें उनके माता पिता ने दहेज का कोई सौदा तय किया हो। दहेज का सौदा निरस्त होने पर ही विवाह के लिए सहमत होना चाहिए। अभिभावको को अपनी कन्याओ की शिक्षा पर विशेष ध्यान देना चाहिए और उन्हे आत्म निर्भर बनाकर ही विवाह करना चाहिए। प्रेम विवाह और अन्तर्जातीय विवाहो को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। अपनी झूठी प्रतिष्ठा के मोह का त्याग करके सामूहिक विवाहो के आयोजनो से लाभ उठाना चाहिए।

सरकार को चाहिए कि दहेज विरोधी कानून का सख्ती से पालन करवावे। जो समृद्ध लोग विवाह के अवसर पर दहेज के रूप मे अपने वैभव का खुला प्रदर्शन करते हैं उनके विरुद्ध कठोर कार्यवाही करे ताकि निर्धन लोग हीन-भावना से ग्रसित होने से बच सके। अपने सभी प्रचार माध्यमो से दहेज विरोधी प्रचार का कार्य तेज कर दे। समाज-सेवी संस्थाओ तथा युवा संगठनो को भी इस कार्य को सर्वाधिक महत्त्व देना चाहिए और नगर नगर, गाव गाव घूम घूम कर दहेज विरोधी जनमत तैयार करने मे विभिन्न राजनैतिक दल भी बहुत योगदान कर सकते हैं।

6 उपसंहार— निर्दोष कन्याओ के जीवन और जीवन की मधुर आशाओं को चाट जाने वाला, कन्याओ के माता पिताओ की सुख शान्ति को एक ही झटके से समाप्त कर देने वाला, चोरी, बेईमानी, रिश्वतखोरी और राष्ट्र की प्रगति मे बाधा उत्पन्न करने वाला दहेज का दानव अपनी भयानक और घिनौनी सूरत लिए हमारे सामने खडा है। यह हमारी देश की सरकार, समाज-सेवी संगठनो, समाज-सुधारको और नौजवानो को ललकार रहा है। उनके पुरुषार्थ को खुली चुनौती दे रहा है। समय का तकाजा है और वक्त की माँग है कि इस चुनौती को स्वीकार किया जाय और अपने विवेक, साहस तथा त्याग की शक्ति से इस दानव को परास्त किया जाय। देखना है, कौन पहल बाजी मारता है।

□□□

18 | मंहगाई की मार

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. मूल्य-वृद्धि के कारण
3. मूल्य-वृद्धि का प्रभाव
4. मूल्य-वृद्धि रोकने के उपाय
5. उपसंहार

1. प्रस्तावना— हमारे देश की अनेकानेक समस्याओं में सबसे अधिक कष्ट-दायक समस्या मूल्य-वृद्धि की समस्या है। महगाई का स्वरूप तो सुरसा की मुख की भांति बना हुआ है जो निरन्तर बढता ही जा रहा है। जनसाधारण इस महगाई की मार से अत्यन्त चिन्तित और व्यथित है। बढी हुई मजदूरी और बढा हुआ वेतन इस महगाई रूपी सुरसा के मुंह में इस तरह समा जाता है, जैसे उसका कोई अस्तित्व ही न हो। जनता को अपनी मूल आवश्यकता की पूर्ति के लिए अपनी आय का बहुत बडा हिस्सा खर्च करना पड जाता है और वह खाली हाथ ही रह जाती है। बहुत से लोग तो अपनी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति करने में भी असमर्थ रहते हैं। इससे लोगों का जीवन अस्त-व्यस्त हो रहा है और वे यह निश्चय नहीं कर पाते कि अपना जीवन-निर्वाह किस प्रकार करें। उत्तरोत्तर हो रही मूल्य-वृद्धि के कारण गरीब और मध्यम श्रेणी के लोगों के सामने जीवन-निर्वाह एक समस्या बनी हुई है। वे कभी सरकार को, कभी व्यापारियों को और कभी अपने भाग्य को कोसते हैं और चिन्ता, व्यथा तथा निराशा से पूर्ण अपने जीवन की गाडी को किसी प्रकार घसीटते रहते हैं।

2 मूल्य-वृद्धि के कारण—मूल्य-वृद्धि के अनेक कारण हैं, जिन पर हम बिन्दुवार चर्चा करेंगे —

(1) समाज का नैतिक पतन—स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् लोगों ने स्वतंत्रता का अर्थ स्वच्छन्दता समझ लिया है और सब लोग मनमानी करने में लगे हैं। नीति, कानून और व्यवस्था नाम की कोई चीज नहीं रही है। मूल्य-वृद्धि का यह प्रमुख कारण है। अर्थशास्त्र के सिद्धान्तानुसार किसी वस्तु का उत्पादन बढने पर उसका मूल्य कम हो जाता है। हमारे देश में अनाज, कपडा, सीमेण्ट, कोयला और लोहा आदि वस्तुओं का उत्पादन खूब बढा है। देश में किसी वस्तु

का अभाव नहीं है, किन्तु मूल्य घटने के स्थान पर कई गुना अधिक बढ गये हैं। इसका कारण उत्पादकों और व्यापारियों की मनमानी है। वे जब चाहते है वस्तुओं का कृत्रिम अभाव बना देते हैं। मनचाहा माल खरीद कर गोदामों में भर लेते हैं और जब चाहते हैं, महंगे भावो में बेचना प्रारम्भ कर देते हैं। काले धन की समानान्तर अर्थ-व्यवस्था भी हमारे देश में चल रही है। सरकार किसी वस्तु पर नियंत्रण करती है और सार्वजनिक-व्यवस्था स्थापित करके उचित मूल्य की दुकानों से आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध कराने का प्रयास करती है तो व्यापारी और सरकारी कर्मचारी मिलकर इस व्यवस्था को असफल बना देते हैं। सरकार इस समस्या के समाधान के लिए अनेक प्रयत्न करती है, किन्तु समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार और सरकारी अधिकारियों तथा कर्मचारियों की कर्त्तव्य-पालन में शिथिलता के कारण सरकार के सब प्रयत्न विफल हो जाते हैं। देश में व्याप्त अनेकानेक समस्याओं में घिरी सरकार इस ओर पूरा ध्यान नहीं दे पाती। परिणामस्वरूप मूल्यों पर नियंत्रण नहीं हो पा रहा है और मूल्य-वृद्धि निरन्तर होती जा रही है।

(ii) सरकारी खर्च में वृद्धि—सरकार देश के विकास के लिए अनेक नयी योजनाएँ प्रारम्भ करती है। कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि करती है, विदेशों से प्राप्त ऋणों का भुगतान करती है, सूखा, अकाल और बाढ जैसी प्राकृतिक विपदाओं के लिए आर्थिक सहायता करती है तथा देश की सुरक्षा को मजबूत बनाने के लिए सैनिक शक्ति में वृद्धि भी करती है। इन सब कार्यों में सरकार को बहुत बडी राशि खर्च करनी पडती है। मजबूर हो कर सरकार को घाटे का बजट बनाना पडता है और उस घाटे की पूर्ति के लिए नये कर लगाने पडते हैं जिसका सीधा प्रभाव मूल्यों पर पडता है और मूल्य-वृद्धि होती है।

(iii) जनसंख्या में वृद्धि—अर्थशास्त्र के माँग और पूर्ति के सिद्धान्तानुसार जब किसी वस्तु की माँग बढ जाती है तो उसका मूल्य भी बढ जाता है। निरन्तर तीव्र गति में हो रही जनसंख्या-वृद्धि के कारण हर वस्तु की माँग बढती जा रही है। खपत के अनुपात में कुछ वस्तुओं का उत्पादन भी कम है। इसका परिणाम मूल्य-वृद्धि के रूप में ही हमारे सामने आ रहा है।

(iv) प्राकृतिक विपदाएँ—बाढ, अकाल तथा सूखा जैसी प्राकृतिक विपदाओं के कारण भी मूल्य वृद्धि होती है। बाढ और अकाल में फसलें नष्ट हो जाती हैं और कृषि-उत्पादन में कमी आ जाती है। पानी के अभाव में सिंचाई की सुविधाएँ कम हो जाती हैं तथा विद्युत-उत्पादन भी ठप्प पड जाता है। विद्युत के अभाव में उद्योग धन्धे बन्द हो जाते हैं और उत्पादन रुक जाता है। इन सबके परिणामस्वरूप मूल्यों में वृद्धि होती जाती है।

3 **मूल्य वृद्धि का प्रभाव**—मूल्य-वृद्धि का हमारे समाज पर और विशेष रूप से अल्प-वेतन भोगी कर्मचारियों तथा श्रमिकों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है। उनकी आय निश्चित होती है और कीमतें इतनी अधिक बढ़ जाती है कि वे अपने दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति भी नही कर पाते। कभी-कभी वे इतने परेशान हो जाते है कि अपने कष्टमय जीवन से छुटकारा पाने के लिए आत्म-हत्या तक कर कर लेते है।

मूल्य-वृद्धि से बढ रहे जन-असन्तोष का राजनैतिक दल तथा अराजकतावादी लोग अनुचित लाभ उठा रहे हैं। आये दिन होने वाली हड़तालें, तोड़-फोड तथा हिंसा की कार्यवाहियाँ इसी का परिणाम है।

मूल्य-वृद्धि लोगो मे भ्रष्टाचार, बेईमानी, मिलावट, चोरी और डकैती जैसी बुराइयो के पनपने मे भी सहायक हो रही है। जब मेहनत और ईमानदारी से काम नही चलता तो बहुत मे लोग पथ-भ्रष्ट हो जाते हैं और इन बुराइयों मे फँस जाते हैं।

4. **मूल्य-वृद्धि रोकने के उपाय**—मूल्यो पर नियन्त्रण रखना हमारे लिए नितान्त आवश्यक हो गया है। इसके लिए हमें निम्नलिखित उपाय काम में लेने चाहिए—

(i) **नैतिक उत्थान**—मूल्य-वृद्धि पर रोक लगाने के लिए हमे अपने देश की जनता के नैतिक-स्तर को ऊँचा उठाना होगा। हमें देश के प्रत्येक नागरिक को ऐसी नैतिक शिक्षा देनी चाहिए कि वह अपने हित के साथ-साथ देश और समाज के हित की बात भी सोचे। उसमे सामाजिकता का भाव और मानवीय गुणों का विकास होने से इस समस्या के समाधान मे बहुत अधिक सहायता मिलेगी। अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए दूसरो का गला घोटने और रक्त चूसने की राक्षसी वृत्ति से छुटकारा मिले बिना इस समस्या का समाधान सम्भव नही है। नैतिक शिक्षा मे हृदय-परिवर्तन होने पर ही इस विषम स्थिति मे अपेक्षित सुधार हो सकता है। अकारण ही होती रहने वाली मूल्य-वृद्धि पर रोक लगाने का कोई दूसरा उपाय नही है। इसके लिए आदर्श उपस्थित करने चाहिए।

(ii) **कठोर नियन्त्रण**—सरकार को अपनी प्रशासनिक व्यवस्थाओं पर कठोर नियन्त्रण स्थापित करना चाहिए। जमाखोरो और काला बाजारियो के साथ सख्ती से पेश आना चाहिए। इसके लिए अपनी सरकारी मशीनरी को पूर्ण स्वच्छ, कर्त्तव्यनिष्ठ और संवेदनशील बनाना होगा। जो अधिकारी और कर्मचारी रिश्वत लें अथवा अन्य किसी कारण से अपने कर्त्तव्य-पालन में शिथिलता बरतें, उनके साथ भी अपराधियो जैसा ही कठोर बर्ताव करना चाहिए। बिना कठोर नियन्त्रण के इस समस्या का समाधान सम्भव नही है। हृदय-परिवर्तन मे तो फिर भी समय लग सकता है और वर्त्तमान स्थिति मे यह कार्य बहुत कठिन

प्रतीत होता है, किन्तु शासकीय कठोरता तो शासन का एक स्वाभाविक कर्म है। इसमें देरी करना या शिथिलता बरतने का न कोई अवसर है और न औचित्य।

(ii) जनसंख्या पर नियंत्रण—जनसंख्या को नियंत्रित करके भी हम मूल्य-वृद्धि पर नियंत्रण स्थापित कर सकते हैं। सरकार और समाज दोनों को ही इसमें अपना योगदान करना चाहिए। हमें परिवार-कल्याण तथा अन्य सम्बन्धित उपायों का जनता में खूब प्रचार करना चाहिए तथा जनसंख्या-वृद्धि के विरुद्ध जनमत बनाना चाहिए। यदि हम जनसंख्या-वृद्धि पर नियंत्रण करने में सफल हो जाते हैं तो अन्य अनेक समस्याओं के समाधान के साथ मूल्य-वृद्धि की समस्या का भी किसी हद तक समाधान कर पाने में सफल हो सकते हैं।

उपसंहार—हमारे देश में लोकप्रिय सरकार स्थापित है। लोकप्रिय सरकार के लिए यह एक लज्जा की बात है कि उसके शासन में जनता अपने जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी परेशान हो। गरीबों की हिमायत करने वाली सरकार उनकी गरीबी और बेबसी के प्रति उदासीन बनी रहे। भ्रष्टाचार चोर बाजारी, काला बाजारी और जमाखोरी करने वाले लोग ऐशो-आराम की जिन्दगी बिताये और कठोर श्रम तथा ईमानदारी से काम करने वाले लोग भूखों मरें, परेशान हों और आत्महत्या कर लें। मूल्य-वृद्धि की समस्या कोई व्यक्तिगत समस्या नहीं है। यह एक सामाजिक और राष्ट्रीय समस्या है। इसका शीघ्र समाधान खोजना आवश्यक है। यद्यपि सरकार मूल्यों पर नियंत्रण करने के लिए अनेक कानून बनाती है और अनेक कार्यक्रमों की घोषणाएँ भी करती है किन्तु उन पर दृढ़ता से अमल नहीं होता। इससे मूल्यों में वृद्धि पर कोई नियंत्रण नहीं हो पाता। यह भुलावे में रखने की प्रक्रिया अधिक समय तक चलने वाली नहीं है। यदि सरकार ने इस दिशा में कुछ कारगर कदम नहीं उठाये तो भीतर ही भीतर सुलगने वाला जन असन्तोष भीषण ज्वालामुखी के रूप में फट पड़ेगा और फिर उस स्थिति पर काबू पाना किसी के वश में नहीं होगा। अब भी समय है कि स्थिति की गम्भीरता को सरकार तथा व्यापारी दोनों ही समझ लें और अपनी रीति नीति में आवश्यक सुधार करलें अन्यथा सम्भावित परिणाम भोगने के लिए तैयार रहें।

□□□

19 | राष्ट्रीय एकता

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. राष्ट्रीय-एकता की आवश्यकता
3. राष्ट्रीय-एकता के पोषक तत्व
4. राष्ट्रीय-एकता के विघटनकारी तत्व
5. उपसंहार

1. प्रस्तावना — 'अनेकता में एकता,
यह हिन्द की विशेषता।

हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने अपने भाषण में एक बार कहा था कि-"भारतीय-संस्कृति एक ऐसा कागज है, जिस पर अनेक संस्कृतियों ने अपनी छाप छोड़ी है और यह विभिन्न प्रकार के अभिलेखों को आत्मसात् करते हुए अपने मूल स्वरूप को स्पष्ट, उज्ज्वल और सुरक्षित बनाये हुए है।" वास्तव में भारतीय-संस्कृति अपने आप में निराली है। इस देश ने उत्थान और पतन के अनेक उतार-चढ़ाव देखे हैं। आर्यों के समय से लेकर आज तक अनेक जातियाँ इस भूखण्ड पर आयी और हमेशा के लिए बस गयीं। अनेक धर्मों के उद्गम स्थल भारत ही रहा है। अनेक भाषा-भाषी लोग इस भूखण्ड पर सदियों से निवास कर रहे हैं। हमारे देश की मूल-संस्कृति इतनी उदार और आदर्श रही है कि यह सबको अपने में समाहित करके अपने मूलस्वरूप को आज तक अक्षुण्ण बनाये हुए है। भारतीय-संस्कृति की यह उदारता ही राष्ट्रीय-एकता का मूल आधार है। हमें अपनी संस्कृति के इस आदर्श स्वरूप पर गर्व है।

2. राष्ट्रीय-एकता की आवश्यकता—हमारा देश बहुत बड़ा देश है। इसे संसार में भारतीय उपमहाद्वीप के नाम से जाना जाता है। हमारा पुराना अनुभव यह बतलाता है कि जब-जब इसकी राष्ट्रीय-एकता कमजोर हुई, तब-तब इस पर विपत्तियाँ आयी हैं। विशाल भारत छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित हुआ है और विदेशी आक्रान्ताओं को सफलता मिली है। अत्यन्त समृद्ध और शक्तिशाली होते हुए भी यह देश सदियों तक विदेशियों का गुलाम रहा है। विदेशियों की दासता में हमने कितने कष्ट सहे हैं, इसका साक्षी इतिहास है।

आज हमारा देश पुन स्वतन्त्र होकर एक विशाल देश के रूप मे ससार के सामने अपना मस्तक ऊँचा किये खडा है, किन्तु ससार के तथा कथित बड़े देश नही चाहते कि भारत समृद्ध और शक्तिशाली बने। अपनी इसी इच्छा की पूर्ति के लिए वे कूटनीति का सहारा ले रहे हैं और देश की राष्ट्रीय एकता को खडित करने का प्रयास कर रहे हैं। वे कभी जातिवाद को उकसाते हैं और कभी साम्प्रदायिकता की आग भडकाते हैं। कभी भाषा और धर्म के नाम पर देश म विद्रोह फैलाते हैं तो कभी प्रान्तीयता और क्षेत्रीयवाद को प्रोत्साहन देकर हमारी राष्ट्रीय एकता को कमजोर करने का प्रयास कर रहे हैं। हमारे पडौसी देश पाकिस्तान और चीन हमारी सीमाओं पर आक्रमण करन के लिए घात लगाये बैठे हैं। देश की आन्तरिक स्थिति भी अच्छी नही है। अनेक सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक समस्याएँ जन-जीवन को त्रस्त एव आन्दोलित कर रही हैं। ऐसी स्थिति म यदि हमारी राष्ट्रीय-एकता कमजोर होती है तो देश कमजोर हो जायेगा और विदेशी आक्रमणकारियो को सफलता मिल जायगी तथा हम पुन पराधीन हो जायेंगे। अत आज देश की सबसे बडी आवश्यकता राष्ट्रीय एकता की है। राष्ट्रीय एकता मे वह शक्ति है कि हम शत्रुओ के दाँत खट्टे कर सकते हैं, अपनी समस्याओ का समाधान कर सकते हैं और देश को समृद्ध, विकसित तथा उन्नत बना सकते हैं।

3 राष्ट्रीय एकता के पोषण तत्व—राष्ट्रीय-एकता को मजबूत बनाने के लिए हमे निम्नलिखित पोषक तत्वो को प्रोत्साहन देना चाहिए—

(i) राष्ट्र प्रेम की भावना—हमे अपने देशवासियो म देश प्रेम और राष्ट्र प्रेम की भावना जागृत करनी चाहिए। यह देश हमारा है इसकी भूमि हमारी मातृ भूमि है। इस देश के समस्त निवासी हमारे भाई-बहिन हैं। इस देश की उन्नति मे हाथ बँटाना और इसकी रक्षा के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर देना हमारा कर्तव्य है। ऐसी देश प्रेम की भावना बच्चे-बच्चे म जागृत की जानी चाहिए। राष्ट्र प्रेम की भावना जागृत हो जाने पर अन्य सब भेद गौण हो जाते हैं। राष्ट्र और राष्ट्रीय-एकता का भाव ही प्रमुख हो जाता है।

(ii) समानता—समानता का व्यवहार करने से ही एकता मजबूत होती है। हमारे देश म विभिन्न जाति, धर्म, भाषा और सम्प्रदाय के लोग निवास करते हैं जिनकी सभ्यता और संस्कृति भी एक दूसरे से भिन्न है, किन्तु इन सब भिन्नताओ के बावजूद वे एक-दूसरे से भिन्न नहीं हैं। ये भिन्नताएँ उनके व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्ध रखती हैं। राष्ट्रीय-जीवन मे तो हम सब एक हैं। हमें प्रत्येक देशवासी के साथ समानता का व्यवहार करना चाहिए। सरकार और समाज के स्तर पर समानता का यह भाव जितना ही सच्चा और अधिक होगा, हमारी राष्ट्रीय-एकता उतनी ही मजबूत होगी।

(iii) उदारता एव सहिष्णुता—हमारा अनुभव यह बतलाता है कि बहुत

छोटे समाज में भी अनेक अवसर ऐसे आते हैं जबकि समाज के कुछ सदस्य उग्र हो जाते हैं और हठ पकड़ लेते है। ऐसे अवसरो पर समाज के अन्य सदस्य यदि सहिष्णु और उदार बने रहते हैं तो स्थिति बिगड़ने से बच जाती है और एकता बनी रहती है राष्ट्रीय-स्तर पर हमारा समाज बहुत बड़ा है और उसमे अनेक मौलिक भिन्नताएँ भी हैं। ऐसी स्थिति मे कभी-कभी किसी वर्ग विशेष मे उग्रता आ जाना एक स्वाभाविक बात है। शेष समाज का कर्त्तव्य है कि वह ऐसे अवसरो पर सहिष्णु और उदार बना रहे। कुछ समय बाद उग्रता स्वतः समाप्त हो जाती है और स्थिति पुन सामान्य हो जाती है। अतः समाज के सभी वर्गों को चाहिए कि वे एक-दूसरे की भावनाओं का सम्मान करें तथा टकराव की स्थिति उत्पन्न होने पर सहिष्णुता एवं उदारता से काम लें। ऐसी समझ और तदनुकूल आचरण से राष्ट्रीय-एकता को बल मिलता है।

(iv) **साम्प्रदायिक सद्भाव और भाई चारे की भावना**—हमे हर कीमत पर साम्प्रदायिक सद्भाव बनाये रखना चाहिए। देश का प्रत्येक नागरिक चाहे वह किसी भी जाति अथवा सम्प्रदाय का हो,देश के नाते हमारा सगा भाई है। देश की सम्पत्ति मे प्रत्येक देशवासी का समान अधिकार है और देश की विपत्ति से प्रत्येक देशवासी को कष्ट होता है। प्राकृतिक विपदा हो या विदेशी आक्रमण सभी जातियो और सम्प्रदायो के लोग समान रूप से प्रभावित होते हैं। सम्प्रदाय और जातिगत भेद तो बाह्य हैं। भीतर से तो हम सब एक ही हैं। अत हमे एक दूसरे के प्रति साम्प्रदायिक सद्भाव बनाये रखना चाहिए। त्योहारो, उत्सवो और समारोहो के अवसरो पर हमे एक दूसरे से मिलना-जुलना चाहिए। इससे भाई-चारे की भावना बढ़ती है और राष्ट्रीय एकता सुदृढ होती है।

(v) **एक देश एक राष्ट्र**—हम देश के किसी भी कोने मे निवास करते हो। हमारा प्रान्त कोई भी हो, किन्तु एक देश और एक राष्ट्र के नागरिक हैं। हमारा सविधान एक है। हमारा झंडा एक है। हमारा राष्ट्र-गान एक है और राष्ट्रीय सरकार एक है। इस भावना के जागृत होने से भी राष्ट्रीय-एकता को बहुत बल मिलता है।

4. राष्ट्रीय-एकता के विघटनकारी तत्त्व—नीचे हम उन प्रमुख तत्त्वों का उल्लेख करेंगे जो राष्ट्रीय एकता को कमजोर बनाते हैं। इनसे हमें सावधान रहना चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर इन्हे सख्ती से कुचल देना चाहिए।

(i) **प्रान्तीयता**—प्रान्तीयता की भावना राष्ट्रीय-एकता के लिए बहुत घातक है। इस भावना से प्रेरित होकर लोग अपने-अपने प्रान्तों की खुशहाली चाहते है, राष्ट्र की खुशहाली का ध्यान ही नही रखते। राज्यो के पुनर्सीमाकन की माँग, राज्यो को अधिक स्वायत्तता देने की माँग, नदी जल-विवाद आदि माँगे प्रान्तीयता का ही परिणाम है। इस समय प्रान्तीयता यही तक सीमित नही है, बल्कि स्वतत्र खालिस्तान और कश्मीर लिबरेशन मूवमैंट की सीमा तक पहुँच चुकी है।

जनता को इसका विरोध करना चाहिए और सरकार को ऐसे तत्त्वों को कुचल देना चाहिए।

(ii) भाषाई दुराग्रह—भाषा के नाम पर दक्षिण भारत में बहुत उपद्रव हो चुके हैं और अब भी होते हैं। ये उपद्रव राष्ट्रीय एकता को विघटित करते है। भाषाई दुराग्रह के कारण लोगों में इतना उन्माद छा जाता है कि राष्ट्र-गीत तक का खुला विरोध करने लग जाते हैं। सरकार को इस विषय में स्पष्ट नीति अपनानी चाहिए। राष्ट्रभाषा एक ही रह सकती है और एक ही रहेगी--'हिन्दी'। शेष भाषाएँ अपना विकास करने को स्वतंत्र रहे। भाषाई राष्ट्रीय नीति का विरोध करने वाली शक्तियों को सख्ती से दाब देना चाहिए।

(iii) साम्प्रदायिक कट्टरता – देश में आये दिन साम्प्रदायिक दंगे होते रहते है। ये दंगे उन तत्त्वों की प्रेरणा से होते है जो विदेशी शक्तियों के इशारों पर भोले-भाले लोगों की भावनाओं को उभारते हैं। इससे राष्ट्रीय एकता को बहुत नुकसान पहुँचता है। सरकार को चाहिए कि ऐसे तत्त्वों की खोज करे और उन्हें दण्ड दे। राष्ट्रीय एकता के लिए साम्प्रदायिक सद्भाव नितान्त आवश्यक है।

(iv) राष्ट्र प्रेम का अभाव—राष्ट्र-प्रेम का अभाव भी राष्ट्रीय-एकता में बाधक है। राष्ट्र के प्रति हमारे कुछ कर्त्तव्य हैं। राष्ट्र की हानि हमारी हानि है और राष्ट्र की उन्नति हमारी उन्नति है-इस भाव का हमारे देशवासियों में अभाव होता जा रहा है। हम राजस्थानी है, पंजाबी हैं, गुजराती है और बंगाली है—यह बात कहने वाले काफी लोग मिल सकते हैं किंतु हम भारतीय हैं और भारत हमारा है-यह कहने वालों का अभाव होता जा रहा है। इस राष्ट्र-प्रेम के अभाव से राष्ट्रीय-एकता को क्षति पहुँचती है।

(v) संकीर्ण मनोवृत्ति—हमारे देशवासियों की संकीर्ण मनोवृत्ति भी राष्ट्रीय-एकता में बाधा उत्पन्न कर रही है। सब लोग अपने हित को ही सर्वोपरि मानने लगे हैं। उनके थोड़े से लाभ के लिए राष्ट्र को कितनी भारी क्षति होती है, इसकी चिन्ता कोई नहीं करता। संकीर्ण मनोवृत्ति के कारण ही देश अनेक बार गुलाम बन चुका है। इस खतरनाक मनोवृत्ति पर अंकुश लगाया ही जाना चाहिए।

5 उपसंहार—राष्ट्रीय-एकता आज देश की सबसे बड़ी आवश्यकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश ने अनेक क्षेत्रों में प्रगति की है और आज भी प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा है। देश के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य है कि वह राष्ट्रीय एकता के लिए कार्य करे, सभी राजनैतिक दलों, समाज-सेवियों और बुद्धि-जीवियों को चाहिए कि वे राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाने के लिए कार्य करें और ऐसा कोई कार्य न करें, जिससे राष्ट्रीय एकता कमजोर होती हो। राष्ट्रीय एकता के बल पर ही हमारा देश स्वतंत्र रह सकेगा और प्रगति कर सकेगा। देश की अखण्डता और स्वाधीनता की हर कीमत पर रक्षा करना हमारा धर्म है।

□□□

20 | भारत में प्रजातंत्र का भविष्य

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. प्रजातंत्र का प्राशय
3. भारत में प्रजातंत्र की वर्तमान स्थिति
4. प्रजातंत्र की प्रसफलता के कारण
5. भारत मे प्रजातंत्र का भविष्य
6. उपसंहार

1 प्रस्तावना—26 जनवरी 1950 को स्वतंत्र भारत में हमारा नया सविधान लागू हुआ जिसमें भारत को लोकतन्त्रात्मक गणराज्य घोषित किया गया। स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् हमारे देश के नेताओ ने यही निश्चय किया कि स्वतंत्र भारत मे जनतन्त्रात्मक शासन-प्रणाली लागू की जाये क्योंकि मानवाधिकार को सुरक्षा प्रदान करने वाली यही सर्वश्रेष्ठ प्रणाली है और भारत की सामाजिक, धार्मिक तथा राजनैतिक परिस्थितियो के परिप्रेक्ष्य मे यही प्रणाली सर्वथा उपयुक्त है। नि सन्देह हमारे राष्ट्र के कर्णधारो ने बहुत सही निर्णय लिया और आज हम विश्व के सबसे बड़े जनतन्त्रात्मक देश के रूप में गौरव से अपना मस्तक ऊँचा किये खड़े हैं। हमारे देश मे धीरे-धीरे जनतन्त्र मजबूत होता जा रहा है और भविष्य में यह और भी मजबूत बनेगा।

2 प्रजातंत्र का प्राशय—प्रजातत्र की सबसे सरल और सर्वमान्य परिभाषा यह दी जाती है कि—**'प्रजातंत्र प्रणाली मे जनता के लिए, जनता के द्वारा, जनता का शासन होता है।'** इस प्रणाली की सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इसमें व्यक्ति के महत्त्व को स्वीकार किया गया है। सामान्य से सामान्य व्यक्ति से भी राय ली जाती है और उसकी राय को महत्त्व दिया जाता है। वास्तव मे जनतन्त्रात्मक प्रणाली एक शासन-प्रणाली ही नहीं है, बल्कि यह एक जीवन-दर्शन है। शासन-व्यवस्था के अतिरिक्त जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में और प्रत्येक स्तर पर जब हम इस प्रणाली से कार्य करने लगते हैं, इस प्रणाली से सोचने लगते हैं और इस प्रणाली से ही समस्याओं का समाधान खोजते हैं तभी हम कह सकते हैं कि हमारी जनतत्र मे आस्था है और तभी जनतंत्र सफल होता है।

3 भारत में जनतंत्र की वर्तमान स्थिति—यद्यपि हमारे देश में जनतन्त्रात्मक शासन-प्रणाली चल रही है और हम बड़ी शान से इसकी सफलता के दावे

भी करते हैं, किन्तु वास्तविकता इसके विपरीत है। हमारे देश मे वर्तमान समय मे जनतत्र का स्वरूप काफी बिगडा हुआ है। हमने जनतत्र के दर्शन को अपने जीवन मे नही उतारा है। केवल शासन-प्रणाली के रूप मे ही हमने इसे अपनाया है। प्रति पाँच वर्ष बाद आम चुनाव होते हैं और सत्ता प्राप्ति के लिए तथा सत्ता मे मे बने रहने के लिए राजनैतिक दल ओछे से ओछे हथकण्डे अपनाते है। चुनावो मे जातिवाद, क्षेत्रीयवाद और सम्प्रदायवाद का खुला प्रचार किया जाता है तथा प्रलोभन, अनुचित दबाव और अनेक अनुचित तरीके अपनाकर मतदाताओ को गुमराह किया जाता है। सत्ता मे बैठे लोगो का और निर्वाचित जन-प्रतिनिधियो का जनता के के साथ कोई सीधा सम्पर्क नही है। सत्ताधारी लोग भोग-विलास मे डूबे हुए है। उन्हे आम जनता के दु ख-दर्द की कोई चिन्ता नही है। प्रशासनिक व्यवस्था एक दम शिथिल पड गई है। चारो ओर भ्रष्टाचार, बेईमानी, काला बाजारी, जमाखोरी, पक्षपात और अन्य अनेक अनैतिक आचरणो के दृश्य सामने आते हैं। महगाई और बेरोजगारी की समस्या दिन-प्रतिदिन जटिल होती चली जा रही है। देश मे चारो ओर चोरी, डकैती और हिंसा की घटनाएँ बढती जा रही है जिससे अराजकता की सी स्थिति उत्पन्न हो गई है। जन-जीवन अस्त-व्यस्त और असुरक्षित बनता जा रहा है। इस स्थिति के लिए लोग जनतत्र प्रणाली को ही दोष देते हैं। यहाँ तक की लोगो का इस प्रणाली पर से विश्वास ही उठता जा रहा है, किन्तु यदि गम्भीरता से सोचा जाय तो इस अव्यवस्था के लिए जनतत्र प्रणाली उत्तरदायी नही है। इसके लिए तो उत्तरदायी वे लोग हैं जिन्होने जनतत्र प्रणाली को सत्ता प्राप्त करने और प्राप्त कर लेने के पश्चात् सत्ता मे बने रहने के लिए एक साधन के रूप मे अपनाया है। जनतत्र को एक जीवन दर्शन के रूप मे स्वीकार नही किया है। वास्तव मे यह असफलता जनतत्र प्रणाली की नही है, बल्कि सरकार के कार्यों की है।

4 **प्रजातत्र की असफलता के कारण**—बात को चाहे किसी ढग से भी कहा जाय, किन्तु यह तो स्वीकार करना ही पडेगा कि भारत मे अभी प्रजातत्र पूरी तरह सफल नही हो पाया है। इसके अनेक कारण हैं—

(i) **अशिक्षा**—भारतीय जनता अशिक्षित है। शिक्षा के अभाव मे वह चालाक राजनीतिज्ञो के बहकावे मे आ जाती है। जातिवाद, क्षेत्रीयवाद, भाषावाद और साम्प्रदायिकता की भावना को उभार कर अयोग्य व्यक्ति उनके मत प्राप्त करने मे सफल हो जाते है। उन्हे मताधिकार तो प्राप्त है, किन्तु अशिक्षित होने के कारण वे अपने इस अमूल्य अधिकार का सही प्रयोग नही कर पाते।

(ii) **निर्धनता**—हमारे देश मे सदियो से चली आ रही गरीबी भी जनतत्र की सफलता मे बाधक है। चुनाव के समय या अन्य अवसरो पर लोग प्रलोभन

में आ जाते हैं और अपना मत उन लोगों को बेच देते हैं जो सर्वथा अयोग्य और भ्रष्ट होते हैं।

(iii) राजनैतिक जागृति का अभाव—जनतंत्र की सफलता के लिए यह बहुत आवश्यक है कि देश की जनता में राजनैतिक जागृति हो। "कोउ नृप होउ हमें का हानी, चेरी छांड़ि के होबै की न रानी।' यह भावना जनतंत्र की सफलता में बहुत बड़ी बाधा है। हमारे देश की जनता में इस भावना की प्रबलता है। 'कोई जीते, कोई हारे, किसी की भी सरकार बने, हमें इससे कोई लेना-देना नहीं है। जो सब में होगा सो हम भी भोगेंगे।' ऐसी उदासीनता और ऐसा उपेक्षा भाव जनतंत्र को सफल नहीं बना सकती। इस उदासीनता के कारण ही लगभग चालीस प्रतिशत लोग तो मताधिकार का प्रयोग ही नहीं करते। अन्य अवसरों पर तो उपेक्षा बरतें तो आश्चर्य ही क्या?

(iv) राजनैतिक दलों की बहुलता—हमारे देश में अनेक राजनैतिक दल हैं और इनकी संख्या निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। सत्ता-प्राप्ति के मोह में तथा अपनी व्यक्तिगत अहम् भाव की तुष्टि के लिए प्रभावशाली लोगों ने अपने-अपने दल बना रखे हैं। इन दलों के प्रभाव क्षेत्र बहुत सीमित हैं इसलिए इनको बहुमत नहीं मिल पाता। ये दल एक दूसरे के वोटों का विभाजन कर देते हैं जिससे एक विशेष दल को लाभ मिल जाता है। इसके अतिरिक्त बहुत अधिक संख्या में उम्मीदवार होने के कारण सामान्य मतदाता भ्रमित हो जाता है और जागरूक तथा समझदार मतदाता के सामने सही विकल्प चुनने की समस्या उत्पन्न हो जाती है। परिणाम होता है—गलत और अयोग्य प्रतिनिधि का चयन। दलों की संख्या अधिक होने के कारण ही संसद अथवा विधान सभाओं के भीतर और बाहर सशक्त विरोधी दल नहीं बन पाता जो सरकार की मनमानी पर अंकुश लगा सके।

(v) दोषपूर्ण चुनाव-प्रणाली—हमारी चुनाव-प्रणाली भी बहुत दोषपूर्ण है। माना तो यह जाता है कि बहुमत प्राप्त उम्मीदवार ही विजयी घोषित किया जाता है, किन्तु वास्तव में उस बहुमत की बनावट दोषपूर्ण है। कुल दिये गये मतों के बहुमत को ही बहुमत मान लिया जाता है, जबकि होना यह चाहिए कि जो उम्मीदवार पचास प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त करे, उसे ही निर्वाचित माना जाय। वर्तमान प्रणाली में अनेक दलों में मत-विभाजन के आधार पर जो दल पैंतीस प्रतिशत के लगभग मत प्राप्त कर लेता है, वह विजयी हो जाता है। यह चुनाव-प्रणाली का ही दोष है।

इसके अतिरिक्त चुनाव-प्रणाली खर्चीली भी बहुत है। जो लोग लाखों रुपया खर्च करने की सामर्थ्य रखते हैं, वे ही चुनाव में भाग लेते हैं। इसमें योग्य और ईमानदार लोग वंचित रह जाते हैं। जो लोग पैसा खर्च करके चुनाव जीतते

है, वे अनेक तरीकों से पैसा वसूल करते हैं जिसके कुपरिणाम जनता को ही भोगने पड़ते हैं।

(vi) **दल-बदल की राजनीति**—जब किसी सत्ताधारी दल के बहुमत में कमी पड़ती दिखलाई देती है या किसी नीति सम्बन्धी मामले में दल में विद्रोह हो जाता है तो वह अन्य दलों के निर्वाचित प्रतिनिधियों से दल बदलवा कर अपना बहुमत बना लेता है और शासन में अनीति में जारी रहती है।

5 **भारत में प्रजातंत्र का भविष्य**—यद्यपि यह सही है कि वर्तमान समय में भारत में प्रजातन्त्र सफल नहीं हो पा रहा है। शासन जनता के दुःख-दर्द कम करने में विफल हो रहा है। अनेक नयी समस्याएँ भी उत्पन्न हो रही हैं फिर भी हमें यह कहने में कोई हिचक नहीं है कि हमारे देश में जनतंत्र की जड़ें मजबूत हो रही हैं और इसका भविष्य निश्चय ही उज्ज्वल है। इंग्लैण्ड और अमेरिका में जनतंत्र को पूर्ण सफल माना जाता है किन्तु इन देशों के जनतन्त्र से हमारे देश के जनतन्त्र की तुलना करना उचित नहीं है। वहाँ और यहाँ की स्थितियों में बहुत अन्तर है। एक लम्बे समय के अनुभव का लाभ उन्हें मिल चुका है। हम जिन परिस्थितियों से निकले हैं, उनको देखते हुए हमारी उपलब्धियाँ बहुत महत्त्वपूर्ण है।

गत 35 वर्षों में शिक्षा का व्यापक प्रसार हुआ है, गरीबी कम हुई है और जनता में राजनैतिक जागृति भी उत्पन्न हुई है। अब निर्वाचन में किसी भी दल अथवा उम्मीदवार का विजयी होना आसान काम नहीं रह गया है। मतदाता का मानस किस ओर है, यह भाँप लेना भी सरल नहीं है। यद्यपि जातिवाद तथा अन्य तत्त्व मतदाता पर अब भी हावी है, किन्तु यदि सही विकल्प मिले तो अपने मताधिकार का प्रयोग सही ढंग से करने की क्षमता उसमें उत्पन्न हो गई है। आपातकाल के अत्याचारों से पीड़ित होने पर जनता पार्टी को शासनारूढ़ करना तथा आपसी खींचतान से क्षुब्ध होकर पुनः कांग्रेस को सत्ता सौंप देना भारतीय मतदाता की परिपक्व समझ का ही परिणाम है। दक्षिण भारत में क्षेत्रीय दलों की विजय और बंगाल में साम्यवादी दल की बार-बार विजय से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है कि मतदाता स्वतंत्र और निर्भीक होकर अपने मताधिकार का प्रयोग करना सीख गया है। यह जनतंत्र की सफलता का लक्षण है और भविष्य की सफलता का संकेत है।

विभिन्न विरोधी दलों ने भी अपनी भूल को समझ लिया है और उनमें एकीकरण की प्रक्रिया जारी है। भविष्य में बहुदलीय व्यवस्था स्वतः समाप्त हो जायेगी और अन्य जनतांत्रिक देशों की भाँति भारत में भी कुछ दल ही रह जायेंगे और सत्तारूढ़ दल की वर्तमान में चल रही मनमानी समाप्त हो जायेगी।

जैसे-जैसे समय व्यतीत होगा और हमारे अनुभव बढते जायेंगे, वैसे ही चुनाव-प्रणाली भी विकसित होगी और उसमें व्याप्त दोष समाप्त हो जायेंगे। सभी दृष्टियों से भारत में प्रजातंत्र का भविष्य उज्जवल है।

6. उपसंहार—भारत अनेकता से सम्पन्न देश है। अनेक जाति, धर्म, सम्प्रदाय, भाषा, रीति-रिवाज, रहन-सहन और आचार-विचार के लोग इस देश में रहते हैं। सब को अपनी सभ्यता और संस्कृति का स्वतंत्ररूप से विकास करने का अवसर प्रजातंत्र शासन-प्रणाली में ही प्राप्त हो सकता है। इतनी विभिन्नता के होते हुए एक देश-एक राष्ट्र की भावना प्रजातंत्र के माध्यम से ही सम्भव है। अतः हमारे देश के लिए जनतंत्र के अतिरिक्त दूसरा कोई विकल्प भी नहीं है। प्रजातंत्र व्यक्ति और समाज के विकास का सर्वोत्तम साधन है। आवश्यकता इस साधन को सही रूप में काम में लेने की है। हम भूलें कर-कर के एक दिन इस साधन का सही प्रयोग सीख जायेंगे और हमारी उन्नति तथा विकास का यही माध्यम बनेगा।

□□□

संगति का फल | 21

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2 संगति का आशय
3 संगति का प्रभाव
4 सत्संगति से लाभ
5 कुसंगति से हानियाँ
6 उपसंहार

1 प्रस्तावना—एक अत्यन्त साधारण परिवार में जन्म लेने वाले तथा अत्यन्त अभावों से ग्रस्त अपना प्रारम्भिक जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति को कालान्तर में जब हम सब प्रकार से सम्पन्न, सुखी और महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में देखते हैं और उससे अपनी तुलना करने पर जब उसे अपने से कई गुना श्रेष्ठ स्थिति में पाते हैं, तो हम बड़े सहज भाव से कह देते हैं कि 'संसार में भाग्य ही सबसे बड़ी चीज है। बचपन में हमने उसे दाने-दाने को मोहताज देखा है, लेकिन यह उसका भाग्य ही है कि आज वह एक बहुत बड़ा आदमी बन गया है।' ठीक इसके विपरीत स्थिति सामने आने पर अर्थात् एक समृद्ध तथा सुसम्पन्न व्यक्ति को दर-दर की ठोकरें खाते देखकर भी प्रायः हम उसके भाग्य को ही दोष देते हैं। हमारी यह मान्यता सर्वथा उचित नहीं है। यदि हम उन व्यक्तियों के जीवन-क्रम के घटना-चक्रों की जानकारी करें तो हम पायेंगे कि उनके उत्थान अथवा पतन का प्रमुख कारण उनकी संगति ही था। जिसका उत्थान हुआ उसे संयोग से अथवा उसके प्रयत्न से सत्संगति मिली थी और जिसका अधःपतन हुआ उसे कुसंगति मिली थी। संगति का मानव-जीवन में अत्यधिक महत्त्व होता है। जीवन की दिशा बदलने में अथवा मनुष्य को एक विशेष दिशा में चलने की प्रेरणा देने में संगति का जितना प्रभाव पड़ता है, उतना कठोर नियन्त्रण, उपदेश, भय और प्रलोभन का भी नहीं पड़ता।

2. संगति का आशय—संगति शब्द 'सम्+गति' इन दो के योग से बना है। जिसमें गति प्रमुख शब्द है और सम् उपसर्ग है। 'सम्' उपसर्ग समानता,

पूर्णता और अनुकूलता का अर्थ प्रकट करता है। 'गति' शब्द चाल, प्रवाह अथवा एक विशेष प्रकार की स्थिति के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इस प्रकार संगति का अर्थ होता है—समान गति, अनुकूल प्रवाह अथवा समान स्थिति। जब हम किसी विशेष प्रकार की रुचि, विचार और आचरण वाले लोगों से अधिक मिलते-जुलते हैं, उनके साथ अपना समय सबसे अधिकाधिक बिताते हैं और उनके कार्यों में भाग लेते हैं तो हमारा यह आचरण उनकी संगति करना माना जाता है क्योंकि हम उनके साथ समान गति, अनुकूल प्रवाह और समान स्थिति में सम्मिलित हो जाते हैं। सामान्यरूप में संगति का अर्थ होता है—अधिकाधिक साथ रहना, मिलना-जुलना, साथ उठना-बैठना, साथ खाना-पीना, साथ आना-जाना और साथ कार्य करना। हम जिनके साथ अधिक रहते हैं, उठते-बैठते हैं और कार्य करते हैं, वे यदि अच्छे लोग हैं तो हमारी यह संगति सत्संगति मानी जायेगी और यदि वे लोग बुरे हैं तो हमारी उनके साथ यह संगति कुसंगति कहलायेगी। अच्छे लोगों की संगति का अच्छा फल और बुरे लोगों की संगति का बुरा फल हमें अवश्य मिलेगा।

3. **संगति का प्रभाव**—संगति के प्रभाव को सिद्ध करने के लिए गोस्वामी तुलसीदास ने एक बहुत अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया है—

"गगन चढ़हिं रज पवन प्रसंगा
कीचहिं मिलइ नीच जल संगा"

वायु की संगति पाकर रज (मिट्टी) आकाश में चढ़ जाती है और पानी की संगति पाकर कीचड़ में मिल जाती है। यह है संगति का प्रभाव। वायु की स्वाभाविक गति ऊपर की ओर उठने तथा बहने की है, इसलिए उसकी संगति पाने पर मिट्टी ऊँची ही उठती है। इसके विपरीत जल की स्वाभाविक गति नीचे की ओर बहने की होती है, इसलिए उसकी संगति मिलने पर उसी मिट्टी को दुर्गन्ध-युक्त कीचड़ में मिलना पड़ जाता है।

संगति का प्रभाव हमारे जीवन में बहुत अधिक पड़ता है। यहाँ हमें यह और समझ लेना चाहिए कि यह प्रभाव सोच-समझकर और जान-बूझकर प्रत्यक्ष रूप में नहीं पड़ता। हम चाहें या न चाहें जिन लोगों की संगति में हम रहते हैं, उनके आचार-विचारों और कार्य-कलापों का हम पर अप्रत्यक्ष रूप से स्वतः प्रभाव पड़ता रहता है और कालान्तर में हम भी वैसे ही बन जाते हैं। हमें पता ही नहीं चलता कि हममें यह परिवर्तन कब और कैसे हो जाता है। जब हम पूरी तरह रंग जाते हैं और कभी अपने पिछले जीवन से वर्तमान जीवन की तुलना करते हैं तो हमें पता चलता है कि हम कुछ के कुछ हो गये हैं। यदि हमारा खुद का विवेक काम करता है तो हम स्वयं भी इसके कारण को समझ लेते हैं और यदि हमारा विवेक

कुंठित हो जाता है तो अन्य लोग यह बात भली प्रकार जान जाते हैं कि हममें यह परिवर्तन हमारी संगति के कारण ही हुआ है।

रहीम ने भी समझाया है—

'जैसी संगति बैठिये, तैसो ही फल लीन।'

एक बहुत ही भद्र पुरुष के मुँह से अपशब्द सुनकर लोगों को आश्चर्य हुआ। इसका कारण खोजने पर पता चला कि उनके नौकर को गाली देने की आदत है। वह अपनी घरवाली और बच्चों से गाली-गलौच में ही बात करता है। वह नौकर सपरिवार ही साहब के बंगले में रहता है। उसी के मुँह से निकलने वाली गाली साहब के मुँह से निकल गई। साहब और नौकर की कोई समानता नहीं, कोई घनिष्ठ सम्पर्क नहीं, किन्तु फिर भी उसकी वाणी और साहब के कानों की संगति का फल यह हुआ कि उनके मुँह से भी अनायास ही अपशब्द निकल पड़े। जब इतनी प्रच्छन्न संगति का भी मनुष्य के जीवन पर प्रभाव पड़ता है तो घनिष्ठ सम्पर्क का कितना प्रभाव पड़ सकता है, यह बात स्वतः सिद्ध हो जाती है। संगति के प्रभाव से अच्छे भले घर के बालक चोर, जुआरी, शराबी और डाकू बन जाते हैं और इसी प्रकार दलित, नीच तथा अपराधी लोगों की सन्तान भी संगति के ही प्रभाव से श्रेष्ठ, उन्नत, सच्चरित्र और शालीनता का व्यवहार करने वाली बन जाती हैं। पान, जर्दा, बीड़ी, सिगरेट, शराब और जुआ आदि जितने भी दुर्व्यसन हैं, इनकी आदत संगति से ही पड़ती है अन्यथा ये मनुष्य की जन्मजात स्वाभाविक प्रवृत्ति नहीं है। संगति से मनुष्य ही नहीं, जीव मात्र प्रभावित होते हैं। इसके लिए भी गोस्वामी तुलसीदास ने प्रमाण दिया है—

'साधु-असाधु सदन सुक सारी।
सुमिरहिं राम देहिं गिनि गारी॥

सज्जन लोगों के घरों में पाले जाने वाले पक्षी 'तोता-मैना' राम-राम बोलते हैं और दुष्ट लोगों के घरों में रहने वाले वे ही पक्षी गिन-गिन कर गालियां देते हैं। कैसी विचित्र बात है। कैसा है यह संगति का प्रभाव!

4 सत्संगति से लाभ—संगति के प्रभाव को समझ लेने के पश्चात् हमारा यह कर्तव्य हो जाता है कि यदि हमें जीवन में अच्छा बनना है, बुराइयों से बचना है तो हम सत्संगति करें—अच्छे लोगों के साथ ही बैठें-उठें और उन्हीं से अधिकाधिक सम्पर्क बनायें। सत्संगति के प्रभाव से हममें अच्छे गुणों का विकास होता है और हमारे दुर्गुण हम से स्वतः दूर हो जाते हैं। नीच, पापी, दुष्ट और धूर्त व्यक्ति भी यदि सत्संगति में पड़ जाता है तो वह सुधर जाता है—

'सठ सुधरहिं सत संगति पाये'

जब सत्संगति का प्रभाव मैले को भी उजला बना देता है तो निर्मल को

कितना देदिप्यमान बना सकता है, इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है। सत्संगति से मनुष्य मे विवेक जागृत हो जाता है और जिस व्यक्ति में विवेक हो वह कभी अपने जीवन को बिगड़ने नही देता। जिसमें विवेक होता है, वह अपना ही नहीं, दूसरों का भी जीवन सुधार देता है। विवेक प्राप्त करेने का एक ही मार्ग है—सत्संगति।

'बिनु सतसंग विवेक न होई।'

सत्संगति के मनुष्य के ज्ञान में वृद्धि होती है और उसका दृष्टिकोण उदार तथा विस्तृत हो जाता है। वह अपने साथ-साथ दूसरे के हित भी सोचने लगता है। उसकी यह वृत्ति उसे ऊँचा उठाती है और वह महान् बन जाता है। मनुष्य के आचरण मे यदि कोई बुराई है तो वह सत्संगति से दूर हो जाती है। जिस समाज मे कोई भी व्यक्ति धूम्रपान न करता हो, उस समाज में यदि कोई धूम्रपान करने की आदत वाला व्यक्ति रहने लगे तो उसे आत्म-ग्लानि होने लगती है और कालान्तर में वह भी इस आदत से मुक्त हो जाता है। सत्संगति से मनुष्य को सम्मान भी मिलता है। उस व्यक्ति मे सम्मान-प्राप्ति के गुण हैं या नहीं, इस बात का विचार किये बिना ही लोग उसकी संगति देखकर ही उसे सम्मान देने लगते है और कालान्तर मे उसमें भी ऐसे गुण उत्पन्न हो जाते हैं कि वह भी सम्माननीय बन जाता है। गुलाब, जुही, केवड़ा और मोगरा के लगातार सम्पर्क मे रहने वाली मिट्टी और हवा पुष्पों की सुगन्ध से स्वयं भी सुगन्धित हो जाती है।

सत्संगति से मनुष्य में अनेक उदात्त गुणों का विकास हो जाता है। दया, प्रेम, सहानुभूति, परोपकार और पर-सेवा के गुण उसमें स्वतः उत्पन्न हो जाते हैं। धैर्य, साहस, सन्तोष और कष्ट सहिष्णुता से उसका जीवन सुखी हो जाता है। उसमे सत्संगति के प्रभाव से इतना विवेक उत्पन्न हो जाता है कि वह भयानक से भयानक परिस्थिति मे भी धैर्य और साहस नहीं खोता। निराशा उसके जीवन को कभी असहाय नही बना पाती। वह दुःख-सुख और हर्ष-शोक मे सदा समान ही बना रहता है। सत्संगति के लाभ इतने अधिक हैं कि उनका वर्णन नही किया जा सकता। गोस्वामी तुलसीदास जैसे महान् सन्त ने भी सत्संगति की महिमा का वर्णन करते हुए यह कहकर ही सन्तोष लिया कि—

'सकल स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला एक अंग।
तुले न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सत्संग।

5 कुसंगति से हानियाँ—जिस प्रकार सत्संगति से अनेक लाभ होते हैं, उसी प्रकार कुसंगति से अनेक हानियाँ होती हैं। मनुष्य मे जितने भी दुर्गुण, दुराचार, पापाचार, दुर्व्यसन और दुश्चरित्रता की वृत्ति उत्पन्न होती है, वह सब कुसंगति का परिणाम होता है। श्रेष्ठ आचरण करने वाले, सदा नम्रता का व्यवहार करने वाले और अच्छे नम्बरों से परीक्षा में पास होने वाले विद्यार्थी

कुसगति मे पडकर दुर्व्यसनी तथा उदण्ड होते देखे गये हैं। हर बार फेल होकर उनका जीवन बर्वाद होते देखा गया है। कुसगति के प्रभाव से बडे-बडे सम्पन्न घराने नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं। कैसा भी समझदार और बुद्धिमान मनुष्य हो, कुसगति मे पडकर बर्वाद हुए बिना नही रहता। एक अनुभवी तथा नीति कुशल व्यक्ति कहा करता था—'यदि तुम्हे किसी से दुश्मनी निकालनी हो तो तुम उस व्यक्ति का कुछ भी अहित मत करो, उसकी सन्तान को किसी प्रकार की कुसगति मे डाल दो, वह अपने आप बरबाद हो जायगा।' दुष्ट और दुराचारी की सगति भले लोगो के लिए कष्टकारक होती है। कल, किस बात पर अकारण ही वे झगडा उत्पन्न कर देंगे, यह आशका हमेशा बनी रहती है। जितनी देर भले लोग बुरे लोगो की सगति मे रहते हैं, उतनी देर उनका चित्त अशान्त ही बना रहता है। इसके अतिरिक्त उनके साथ रहने मात्र से ही लोग भले आदमियो के आचरण पर भी सन्देह करने लग जाते हैं। रहीम ने स्पष्ट कहा है—

'दूध कलारन हाथ लखि, मद समुझैं सब ताहि।'

कुसगति तो इतनी कष्टकारिणी होती है कि इसका ठीक-ठीक अनुमान वे ही लगा सकते हैं, जो कभी दुर्भाग्य से दुष्टो की सगति मे पड चुके हो, अथवा जिन्होंने कभी किसी से उसकी कष्ट-कथा सुनी हो। तुलसीदास जी ने तो दुष्ट-सग को नर्क से भी बुरा माना है—

'बरु भलवास नरक कर ताता, दुष्ट सग जनि देइ विधाता।'

6. उपसहार—सगति के प्रभाव को ठीक से समझ लेने के बाद हमारा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि हम बुरी सगति का त्याग करें और सत्सगति मे लगने का प्रयास करें। इतना ही नहीं, हमारा यह भी कर्त्तव्य है कि हम हमारे मित्रो, सगे-सम्बन्धियो और परिजनो को भी यदि कुसग मे पडते देखे तो उन्हे उससे बचाने और सत्सगति मे डालने का प्रयास करें। जीवन के उत्थान और पतन, लाभ और हानि अथवा सुख और दुख का सबसे सरल और महत्वपूर्ण यदि कोई साधन है तो वह सगति ही है। जो जैसा फल चाहे प्राप्त कर सकता है।

22 | मनोबल

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. मनोबल का आशय
3. मनोबल की महत्ता
4. मनोबल में वृद्धि के उपाय
5. उपसंहार

1. प्रस्तावना—

'मन के हारे हार है और मन के जीते जीत'

*कितनी सच्ची और सार्थक उक्ति है यह ! जिसका मन हार गया, वह परा*जित ही होता है और जिसके मन में विजय की दृढ़ कामना है, वह विजयी होकर ही रहता है। हम अपने दैनिक जीवन में अनेक ऐसी घटनाएं प्रत्यक्ष देखते हैं। एक व्यक्ति शारीरिक दृष्टि से अत्यन्त निर्बल, आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त निर्धन और और सामाजिक दृष्टि से अत्यन्त उपेक्षित होने पर भी मनोबल के सहारे निरन्तर प्रगति के मार्ग पर आगे ही बढ़ता चला जाता है और एक दिन वह समाज का महत्वपूर्ण, प्रतिष्ठित और महान व्यक्ति बनकर सम्माननीय बन जाता है। इसके विपरीत ऐसे व्यक्ति भी है जो सब प्रकार से शक्तिशाली, सु-सम्पन्न और समर्थ होते हुए भी मनोबल के अभाव में अपने जीवन में सदा असफल ही होते रहते हैं और निरन्तर पतन के मार्ग पर चलते हुए एक दिन घोर अपमानजनक जीवन व्यतीत करने को विवश हो जाते है। यह स्थिति निश्चय ही गम्भीरतापूर्वक विचार करने योग्य है। इससे मनोबल का महत्त्व सिद्ध होता है। जिसमे जितना अधिक मनोबल है, वह जीवन मे उतना ही सफल होता है और जिसमें जितना मनोबल क्षीण है वह उतना ही असफल होता है। शारीरिक शक्ति और भौतिक साधन मनोबल के अभाव में कुछ भी सहायता नही कर पाते। मनोबल के सामने ये बाह्य शक्तियां सदा पस्त और परास्त होती देखी गई हैं।

2. मनोबल का आशय—सीधे और सरल शब्दो मे हम यह कह सकते हैं कि मन की शक्ति का नाम ही मनोबल है। मन की शक्ति एक यौगिक भाव है दृढ़ता, जिसमें साहस, उत्साह, उमंग, विश्वास, इच्छा, आशा, निश्चितता और कर्म-तत्परता

का मेल रहता है। मन के ये सब भाव अलग अलग रहने पर भी बहुत शक्तिशाली होते हैं। इनमे से किसी एक भाव के मन मे स्थायी होते ही मनुष्य का जीवन सफल हो जाता है। और जब ये सब भाव सगठित होकर मन मे स्थायी रूप से निवास करते हैं तो इनकी शक्ति का सम्मिलित रूप ही मनोबल कहलाता है। मनोबल की शक्ति और सामर्थ्य की तुलना ससार की किसी भी शक्ति से नही की जा सकती। ससार की सभी शक्तियाँ मनोबल के आगे तुच्छ और नगण्य हैं।

3 मनोबल की महत्ता—ससार में चार प्रकार के बल होते हैं—1 शारीरिक बल, 2 धन बल अथवा शस्त्र बल, 3 बुद्धि बल और 4 मनोबल। मनोबल इन सब मे श्रेष्ठ तथा सर्वाधिक शक्ति सम्पन्न होता है। इतना ही नही इन प्रथम तीन बलो को प्रयोग मे लाने वाला भी मनोबल ही होता है। शरीर खूब हृष्ट-पुष्ट और शक्तिशाली है, किन्तु मनोबल के अभाव मे वह अपने से कमजोर व्यक्ति से भी मार खा लेता है। इसके विपरीत यदि मनोबल है तो सीकिया पहलवान (अत्यन्त कमजोर व्यक्ति) भी एक मोटे-ताजे आदमी को पछाड लगा देता है। शरीर थककर चूर हो जाता है, किन्तु यदि मनोबल बना हुआ रहता है तो वह निरन्तर कार्य करता रहता है। इसी प्रकार 'धन बल' और 'बुद्धि बल' भी मनोबल के सहारे ही सफल होते हैं। पास मे धन है किन्तु यदि उसे खर्च करने का जोखिम नही उठा सकते तो उससे हम कोई लाभ प्राप्त नही कर सकते। यह जोखिम उठाने की शक्ति मनोबल से ही प्राप्त होती है। बुद्धि म उठने वाले अनेक विचार हम सफलता के उपाय सुझाते हैं और कठिनाइयो से बचने के मार्ग भी बतला देते है, किन्तु हमारी बुद्धि ठीक प्रकार से काम ही तब करती है जबकि हममे कोई कठिन कार्य करने की अथवा आगे बढने की प्रबल इच्छा होती है और हम सब प्रकार की चिन्ताओ से मुक्त होकर कार्य करने का दृढ निश्चय कर लेते हैं। हमारे मन की यह स्थिति मनोबल से ही बनती है। मनोबल ही मस्तिष्क को किसी विशेष दिशा मे सोचने विचारने की प्रेरणा देता है। मनोबल के अभाव मे मनुष्य की सारी शक्तियाँ निरर्थक सिद्ध होती है और बेकार पडी रहती हैं।

महापुरुषो के जीवन की घटनाओ की जानकारी करने पर हमे मनोबल की असाधारण शक्ति का पता चल जाता है। कुछ गिनती के से मरहठो की एक छोटी सी फौजी टुकडी बनाकर शिवाजी ने विशाल और अत्यन्त शक्तिशाली मुगल साम्राज्य के दाँत खट्टे कर दिये थे। मुट्ठीभर हड्डियो का एक दुबला पतला ढाँचा लेकर गाधीजी ने वह सब कर दिखाया जो आज तक कोई नही कर सका। गुरु गोविन्दसिंह ने चिडियो को बाज बनाकर दिखला दिया। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस अत्यन्त सजग और सावधान ब्रिटिश पुलिस के घेरे में से चिडिया की तरह फुर्र हो गये और उन्होंने आजाद हिन्द फौज का गठन कर ग्रेट ब्रिटेन के शक्तिशाली शासन को चुनौती दे डाली। नेपोलियन बोनापार्ट का उदाहरण ससार मे प्रसिद्ध है जिसने आल्प्स पर्वत

के अस्तित्व को ही नकार दिया और सेना को पर्वत के उस पार इस प्रकार ले जाकर खड़ा कर दिया जैसे वे किसी पुल पर चढ़ के आ गये हो। मनोबल के सहारे चमत्कार कर दिखाने वाले लोगों के असंख्य उदाहरण संसार के इतिहास में भरे पड़े है।

मनोबल से मनुष्य में धैर्य, साहस और उत्साह के भाव उत्पन्न हो जाते हैं। वह कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी घबड़ाता नहीं है और हिम्मत नहीं हारता है। जिसमें हिम्मत बनी रहती है उसी की तो संसार में कीमत होती ही है—

"हिम्मत किम्मत होय, बिन हिम्मत किम्मत नहीं।
कर न आदर कोय, रद कागद ज्यूं राजिया॥"

जिसकी हिम्मत टूट जाती है उसका मस्तिष्क भी कुंठित हो जाता है और शरीर निष्क्रिय होकर अशक्त बन जाता है।

मनोबल से मनुष्य में प्रबल इच्छा शक्ति जागृत हो जाती है जिसे अंग्रेजी में Will power कहते है। इच्छा शक्ति से मनुष्य को आगे बढ़ने की राह स्वतः दिख जाती है—'जहाँ चाह, वहाँ राह।' अंग्रेजी में इसे यों समझाया गया है—'If there is a will there is a way'

इच्छा शक्ति के द्वारा मनुष्य अपने आप में एक दैवी शक्ति को प्राप्त कर लेता है। इस शक्ति के प्राप्त हो जाने पर संसार में उसके लिए कुछ भी असम्भव नहीं रहता। मनुष्य अपनी दृढ इच्छा-शक्ति के बल पर मृत्यु के क्षणों को भी टाल सकता है। भीष्म पितामह ने बाणों की शैया पर पड़े-पड़े ही अपनी इच्छा शक्ति से सूर्य के उत्तरायण होने तक मृत्यु को पास नहीं फटकने दिया था। बड़े-बड़े सन्त और महात्मा आज भी अपनी इच्छा शक्ति के बल पर ऐसे-ऐसे महान् कार्य कर दिखलाते है कि लोग आश्चर्यचकित हो जाते हैं और उनके चरणों में खड़े-खड़े तख्त और ताज भी नत मस्तक हो जाते हैं।

मनोबल से मनुष्य के मन में आशा का संचार हो जाता है। आशावान मनुष्य कभी दुखी नहीं होता और सदा कर्म-तत्पर बना रहता है। मनोबल से ही मनुष्य में निर्भयता और निश्चितता का भाव उत्पन्न होता है। वह भविष्य की चिन्ता में वर्तमान का सुख छोड़ना स्वीकार नहीं करता। इस प्रकार मनोबल की महिमा अपार है। इसके महत्त्व के विषय में जितना कहा जाय, थोड़ा है।

4 मनोबल में वृद्धि के उपाय—जैसाकि हम मनोबल की व्याख्या करते समय देख चुके हैं कि मनोबल मन की दृढ़ता, साहस, उत्साह, उमंग, विश्वास, आशा, इच्छा, निश्चिन्तता और कर्म-तत्परता के मेल से बनता है। अतः मन की इन्हीं भावनाओं के विकास से मनोबल में वृद्धि की जा सकती है। हमारे सामने कैसी भी परिस्थिति आवे, किन्तु हम अपने निश्चय पर दृढ बने रहें। जीवन में जब

कोई कठिनाई आवे, हम धैर्य और साहस से उसका मुकाबला करें। यदि हम कभी असफल हो जावें या हमारी पराजय भी हो जाय, तब भी हम निराश न होवें। अपनी असफलता और पराजय से हम शिक्षा लें और जिन कारणों से हमें असफलता मिली है उन्हें दूर करके पुन सफलता प्राप्ति के लिए प्रयत्न करें और उस समय तक प्रयत्न करते रहें जब तक हम विजयी नहीं हो जाते। उत्साह और उमग कार्य की सफलता के लिए नितान्त आवश्यक है। जिस कार्य को प्रारम्भ करने में मन में उमग नहीं होती और जिसे आगे बढाने में उत्साह नहीं होता या बीच में ही उत्साह भग हो जाता है, वह कार्य कभी पूरा नहीं होता। उत्साह वीरता का स्थायी भाव है। उत्साह के बिना मनुष्य कठिन कार्य करने में कभी सफल नहीं हो सकता। उत्साह के कारण ही वह पग-पग पर आने वाली कठिनाइयों का प्रसन्नता से मुकाबला करता रहता है और लक्ष्य के निकट पहुँचता चला जाता है। अत हमें अपने मन में उमग और उत्साह को बनाये रखना चाहिए। विश्वास और आशा ये दोनों मन की ऐसी शक्तियाँ हैं जो असम्भव को भी सम्भव बना देती हैं। विश्वास के लिए हमारे शास्त्रों में स्पष्टरूप से बतलाया गया है—'विश्वासो फल दायक' अर्थात् विश्वास निश्चित रूप से फल देने वाला होता। हम देखते हैं कि हजारों-लाखों लोग ईश्वर पर विश्वास रखते हैं, नियमित रूप से सेवा-पूजा और प्रार्थना करते हैं और हर प्रकार के सकटों से अपने आप को उबारते हुए इच्छित फल की प्राप्ति भी कर लेते हैं। यह उनके विश्वास का ही फल होता। हमारा विश्वास जीवन के हर क्षेत्र में हमें सफलता प्रदान करता है। आशा के लिए भी नीतिकारों ने लिखा है—'आशा बलवती राजन्' अर्थात् आशा मन की बहुत बडी शक्ति होती है। जीवन में सफलता-असफलता, सुख-दुख और हानि-लाभ की स्थितियाँ आती ही रहती हैं, किन्तु यदि हमारे मन में आशा बनी ही रहती है तो जीवन में सरसता भी बनी रहती है और एक न एक दिन वह पूर्ण भी हो जाती है। इसके अतिरिक्त निश्चितता, इच्छा-शक्ति और कर्म-तत्परता को बनाये रहकर भी हम अपने मनोबल को बढा सकते हैं।

5. **उपसंहार**—उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि जीवन में सफलता का मूल आधार मनोबल ही होता है। मनोबल के अभाव में मनुष्य का जीवन नाविकविहीन एक नौका की तरह होता है जो हवा के वेग से कभी इधर और कभी उधर बहती रहती है। आँधी तूफान के थपेडों से विचलित होकर डूबती-तैरती रहती है और अन्ततोगत्वा अपने भीतर भर आये पानी के भार से एक दिन डूब जाती है। मनोबल जीवन-नौका को एक निश्चित दिशा में पूर्ण दृढता के साथ आगे बढाता है। वह आँधी-तूफानों का डटकर मुकाबला करता है और एक न एक दिन उसे अपनी मजिल पर पहुँचा देता है।

□□□

23 | मित्रता

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—मित्र की आवश्यकता
2. मित्रता का अर्थ
3. मित्र के कर्त्तव्य—(i) सन्मार्ग पर चलाना (ii) समानता का व्यवहार करना। (iii) प्रत्येक कार्य मे सहयोग करना (iv) विपत्ति मे सहायता करना। (v) नि स्वार्थ हित-चिन्तन करना
4. आधुनिक मित्र
5. उपसहार

1. प्रस्तावना—'तनहा न कट सकेंगे जीवन के रास्ते,
पेश आयेगी जरूरत हमारी कभी-कभी।'

यह किसी ऐसे व्यक्ति का कथन प्रतीत होता है जिसको उसके मित्र ने ठुकरा दिया है। इसीलिए उसने अपनी आवश्यकता कभी-कभी महसूस होने की बात कही है, अन्यथा जीवन मे मित्र की तो कदम-कदम पर आवश्यकता अनुभव होती है। यह ससार बहुत बडा है और मनुष्य का जीवन बहुत छोटा है। उसकी शक्ति और सामर्थ्य भी बहुत कम है तथा उसे जीवन में बडे-बडे कार्य करने होते हैं। वह अकेला रहकर जीवन के भारी बोझ को सहन नही कर सकता। उसे जीवन मे आने वाली कठिनाइयो का सामना करने के लिए, उचित सलाह लेने के लिए, किसी भी प्रकार का सहयोग प्राप्त करने के लिए और अपने मन की बात नि सकोच तथा निर्भीक होकर प्रकट करने के लिए किसी ऐसे साथी की आवश्यकता होती है जो उसे पूर्णरूपेण अपना समझे और उसकी सच्चे दिल से सहायता करे। ऐसा साथी यदि कोई हो सकता है तो वह मित्र ही हो सकता है। माता, पिता, भाई, बहन, पति अथवा पत्नि—ये सभी अपने होते हैं, किन्तु इसमे से कोई भी मित्र का स्थान नही ले सकता। इनके साथ अपनापन होते हुए भी मनुष्य इनके सामने अपने मन का भेद प्रकट नही कर सकता। इसके अतिरिक्त इनसे उसे कुछ निश्चित स्थानो पर, निश्चित क्षेत्रो मे और निश्चित सीमा तक ही सहायता मिल सकती है, किन्तु मित्र तो एक ऐसा साथी है जो मनुष्य के साथ प्रत्येक स्थान पर उपस्थित रह सकता है। उसे हर क्षेत्र मे किसी भी सीमा तक सहायता कर सकता है। इसलिए जीवन मे मित्र की आवश्यकता अनिवार्य होती है। वे लोग परम सौभाग्यशाली होते हैं, जिन्हे अच्छे मित्र सुलभ होते है।

2. मित्रता का अर्थ—मित्रता जान-पहचान अथवा घनिष्ट परिचय का नाम नही है। मित्रता तो एक ऐसा भाव है जिसमे दो व्यक्तियो के दिल और दिमाग मे एक-दूसरे के प्रति इतना अपनापन होता है कि वे एक-दूसरे से अपने आपको भिन्न ही नही मानते। एक का कार्य दूसरे का काय, एक की कठिनाई दूसरे की कठिनाई, एक का हित दूसरे का हित और एक की हानि दूसरे की हानि बन जाती है। उनमे भेद का कोई पर्दा नही होता। सदा साथ रहना, साथ जीना और साथ मरना-यह भाव स्थायी हो जाता है। किसी के साथ ऐसा भाव बन जाने पर ही यह मानना चाहिए कि वह मेरा मित्र है।

मित्रता क्यो और कैसे होती है इसके लिए नीतिकारो ने एक वाक्य मे ही सारी स्थिति और प्रक्रिया स्पष्ट कर दी है—

'समानशील व्यसनेषु मित्रता'

अर्थात् जिन लोगो के शील और व्यसन समान होते हैं उनमे मित्रता स्वत हो जाती है। मित्र बनाये नही जाते, बन जाते हैं। लम्बे समय तक साथ रहने एक-दूसरे के विचारो, गुणो, भावो और रुचियो अथवा व्यसनो मे एक रूपता होने पर निकटता बढती जाती है और उनमे सदा साथ रहने तथा एक दूसरे के लिए मर-मिटने का भाव उत्पन्न हो जाता है। यही मित्रता का लक्षण है।

3 मित्र के कर्त्तव्य—जैसा हम पहले कह चुके हैं, मित्र मनुष्य का सच्चा साथी होता है। वह अपने मित्र की स्थिति से पूर्ण परिचित होता है और हर स्थिति मे वह उसके साथ रहता है। अत उसके अपने मित्र के प्रति कुछ कर्त्तव्य होते हैं जिनको निभाने पर ही वह सच्चा मित्र कहलाने का अधिकारी हो सकता है।

(i) सन्मार्ग पर चलाना—सच्चा मित्र वही है जो अपने मित्र को बुरे मार्ग से हटाकर अच्छे मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करे। यह कार्य केवल मित्र ही कर सकता है और उसके लिए ऐसा करना कठिन भी नही होता। दूसरे लोग सारी स्थिति को जान ही नही सकते और सदा उसके साथ रह भी नहीं सकते। मित्र से कुछ भी छिपा नही रहता। जो कुछ होता है, उसके सामने ही होता है। उसे यह अनुभव करना चाहिए कि मित्र की बुराई उसकी बुराई है। उसका कुफल उसे ही नही उसके मित्र को भी भोगना पडेगा। उन दोनो का हित-अहित भिन्न है ही नही। इसलिए सच्चा मित्र अपने मित्र को बुरे मार्ग से हटाकर अच्छे मार्ग पर चलाता है—

'कुपथ निवारि सुपन्थ चलावा।'

(ii) समानता का व्यवहार करना—दो मित्रों की आर्थिक, सामाजिक और पारिवारिक स्थिति मे अन्तर हो सकता है और कभी-कभी यह अन्तर बहुत बडा भी होता है, किन्तु सच्चे मित्र का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने मित्र के साथ समानता का व्यवहार करे। उसे किसी प्रकार से हीन अथवा छोटा न माने क्योंकि

मित्रता का धरातल तो समान ही होता है। इतना समान कि जिस पर कार और साइकिल दोनों समान गति से साथ-साथ दौड़ सकती हैं। भगवान श्री कृष्ण सुदामा के साथ अपनी मित्रता का निर्वाह करके हमारे सामने मित्रता का आदर्श प्रस्तुत कर चुके हैं। ऐसे उदाहरण और भी अनेक मिल सकते हैं जिनसे यह सिद्ध होता है कि ऊँच-नीच और छोटे-बड़े का कोई भेद-भाव नहीं होता।

(iii) प्रत्येक कार्य में सहयोग करना—सच्चे मित्र का कर्त्तव्य है कि वह अपने मित्र के हर कार्य में सहयोग करे। जब वह हर स्थिति में उसके साथ रहना चाहता है और रहता है तो यह स्वाभाविक ही है कि वह उसे उसके प्रत्येक कार्य में सहयोग करे क्योंकि सहयोग करने में ही मित्रता की सार्थकता है। जब एक का कार्य दूसरे का भी अपना ही कार्य है तो सहयोग न करने का प्रश्न ही नहीं उठता। फिर भी यदि कोई सहयोग करने से कतराता है तो उसे मित्र नहीं कहा जा सकता।

(iv) विपत्ति में सहायता करना—गोस्वामी तुलसीदास जी ने मित्रता की कसौटी 'विपत्ति में सहायता' करने को ही माना है—

'धीरज, धर्म, मित्र अरु नारी, आपतकाल परखिये चारी।'

सच्चा मित्र वही है जो अपने मित्र की विपत्ति में सहायता करे। सुख और सम्पत्ति के समय तो हमारे अनेक लोग अपने सगे और घनिष्ठ मित्र बन जाते हैं किन्तु जो विपत्ति में साथ देता है वही हमारा मित्र कहलाने का अधिकारी है। कवि रहीम की उक्ति देखिए—

'कह रहीम सम्पति सगे, बनत बहुत बहु रीत।
विपति कसौटी जे कसे, तेई सांचे मीत।'

मित्रता पानी और दूध की जैसी होनी चाहिए। दूध पानी के साथ मिलकर उसे पूर्णरूप से अपना ही जैसा बना लेता है। दूध और पानी में कोई अन्तर ही नहीं रह जाता। और जब पानी मिले दूध में से पानी को भाप बनाकर उड़ाने के लिए आग पर रखा जाता है तो अपने मित्र पर आई विपत्ति से दूध विचलित हो जाता है। वह पानी से पहले स्वयं बाहर आकर अपने मित्र के शत्रु अग्नि पर आक्रमण करके उसे बुझाने का प्रयास करता है। अपने इस प्रयास में वह स्वयं जल मरता है।

(v) निःस्वार्थ हित-चिन्तन करना—संसार के सभी लोग स्वार्थ से बँधे हैं। माता, पिता, भाई, बहन, पति, पत्नि, पुत्र और पुत्री सभी का व्यक्ति के साथ अपना हित जुड़ा होता है और एक प्रकार से उनका सम्बन्ध स्वार्थ का ही सम्बन्ध होता है, किन्तु मित्र का सम्बन्ध पूर्णतया निःस्वार्थ होता है। वह तो अपने मित्र की भलाई में ही अपनी भलाई समझता है। उसकी इच्छा यही रहती है कि वह अपने मित्र के किसी काम आवे। इसके बदले वह मित्र से अपने लिए कुछ नहीं चाहता। जहाँ स्वार्थ है वहाँ मित्रता हो ही नहीं सकती। मित्रता तो त्याग और बलिदान का क्षेत्र है।

मित्रता का आधार तो निःस्वार्थ प्रेम होता है और प्रेम का आधार त्याग और बलिदान ही है। देखिए कबीर के शब्दों मे—

'कबीर यह घर प्रेम का, खाला का घर नाँहि।
सीस उतारै भुँई धरै, सो पैसे घर माँहि॥'

ससार के इतिहास मे अनेक ऐसे उदाहरण भरे पड़े हैं, जिनमे मित्रों ने अपने मित्र के हित मे निःस्वार्थ भाव से अपने प्राणों की आहुति दी है।

4. आधुनिक मित्र—मित्रता का वास्तविक स्वरूप समझ लेने के बाद हमें ऐसा लगता है, जैसे आधुनिक मित्र हमारे मित्र न होकर शत्रु हो। ऐसा भी प्रतीत होता है, जैसे मित्रता के परम्परागत मानदड उलटे हो गये हैं। धूम्रपान, मदिरापान तथा और अन्य अनेक प्रकार की बुराइयाँ हमें मित्रों की कृपा से प्राप्त होती है। पढाई-लिखाई तथा अन्य प्रकार के जीवन-निर्माण के कार्यों से विरत होने की प्रेरणा हमे आधुनिक मित्र ही देते हैं। छल, कपट और धोखे का अनुभव हमे मित्र ही कराते हैं। जब तक हमारी जेब मे पैसा होता है, वे हमारे साथ-साथ बड़ी आत्मीयता के भाव से रहते हैं किन्तु जब पैसा समाप्त हो जाता है या किसी अन्य प्रकार की विपत्ति मे हम फँस जाते हैं तो वे हमारे साथ ऐसा बर्ताव करते हैं, जैसे उनकी और हमारी कभी जान-पहचान ही नही थी। मित्र की सम्पत्ति और पत्नी पर कुदृष्टि रखने वाले मित्रों की आज कमी नही है। जब तक स्वार्थ की पूर्ति की आशा रहती है वे हमारे अपने बने रहते हैं और हमारी खूब प्रशसा भी करते रहते हैं, किन्तु यदि उन्हे यह विश्वास हो जाए कि उन्हे उनकी स्वार्थ-सिद्धि मे हमसे कोई सहायता नही मिलेगी तो वे हमारी निन्दा के काम मे लग जाते हैं। ऐसे भी अनेक उदाहरण हमारे सामने है जिनमे मित्रों ने ही अपने मित्रो को धोखा दिया है। अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए उन्होंने अपने मित्र को फाँसी के तख्ते पर पहुँचाने मे भी कोई सकोच नही किया।

5. उपसंहार—यह वर्तमान युग का ही प्रभाव है कि आजकल सच्चा मित्र मिलना बहुत दुर्लभ हो गया है, किन्तु सौभाग्य से यदि किसी को अच्छा मित्र मिल जाता है तो उसे ससार की एक बहुमूल्य निधि प्राप्त हो जाती है। सच्चा मित्र मिल गया तो समझना चाहिए कि जीवन-सघर्ष के लिए एक सच्चा साथी मिल गया। सच्चा मित्र प्राप्त कर लेने के बाद मनुष्य को अन्य कुछ भी प्राप्त करना शेष नहीं रह जाता। उसे मित्र के रूप मे पथ-प्रदर्शक, सहायक, रक्षक, प्रेरक, शक्ति-दायक और उद्धारक आदि सभी मिल जाते हैं। उसका जीवन सुखी और सफल हो जाता है।

□□□

भारतीय समाज में नारी की स्थिति | 24

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. प्राचीनकाल मे नारी की स्थिति
3. नारी की स्थिति मे परिवर्तन
4. वर्तमानकाल में नारी
5. आधुनिक युग मे नारी की समस्याएँ
6. समाधान के सुझाव
7. उपसंहार

1. प्रस्तावना—हमारी भारतीय संस्कृति मे नारी को पुरुष की अर्द्धांगिनी माना गया है। यह मान्यता कितनी सटीक और सार्थक है। पुरुष और नारी दोनों मिलकर ही पूर्ण होते हैं। एक के अभाव में दूसरा आधा ही रहता है। इस दृष्टि से नारी को पुरुष की अर्द्धांगिनी मानना सर्वथा उपयुक्त है। नारी और पुरुष के रूप में ईश्वर की रचना ही कुछ इस प्रकार की है कि ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। एक के अभाव में दूसरे का जीवन अपूर्ण ही बना रहता है। सृष्टि का अस्तित्व ही दोनों के मेल से है। इस दृष्टि से दोनों का महत्त्व समान है। नारी या पुरुष में से किसी का भी महत्त्व किसी से कम नहीं है। समस्त ब्रह्माण्ड में और सृष्टि के कण-कण में स्त्री-पुरुष के युग्म का अस्तित्व और महत्त्व दिखाई पड़ता है। ब्रह्म और माया, शिव और शक्ति, पुरुष और प्रकृति के रूप में सृष्टि के रचयिता स्वयं ईश्वर का रूप भी हम स्त्री-पुरुष के युग्मरूप में ही देखते हैं।

नारी का स्वरूप पुरुष के अनिवार्य अंग के रूप में होते हुए भी पुरुष की तुलना में नारी का महत्त्व कम देकर इस विषय में गम्भीरता से सोचने की आवश्यकता का अनुभव होना स्वाभाविक है। अतः हम इस विषय पर तटस्थ होकर समग्र दृष्टि से विचार करने का प्रयास करेंगे।

2. प्राचीन काल में नारी की स्थिति—प्राचीन काल में भारतीय समाज में नारी को उचित महत्त्व और सम्मान का स्थान प्राप्त था। यद्यपि उसका कार्य-क्षेत्र प्रमुखरूप से ही घर ही था, किन्तु आवश्यकता होने पर वह घर से बाहर भी

कार्य करके पुरुष को अपना पूरा सहयोग देती थी। यहाँ तक कि युद्ध में भी वह पुरुष के साथ रहती थी और स्वयं भी शस्त्र-संचालन करती थी। उसे गृह-लक्ष्मी और गृह-देवी के नाम से पुकारा जाता था। वह अपनी योग्यता, विद्वत्ता और चातुर्य से पुरुष को सत्परामर्श भी देती थी। गार्गी, मैत्रेयी अनुसूया आदि स्त्रियों के नाम इस प्रसंग में विशेष उल्लेखनीय हैं। पर्दा प्रथा का कोई अस्तित्व ही नहीं था। परिवार के पालन-पोषण और घर की देख-रेख में नारी की सेवा भावना, प्रेम, त्याग, ममता और बुद्धि कौशल को देखकर ही नीतिकारों ने कहा था—

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'

अर्थात् जिस घर में नारी को सम्मानजनक स्थान प्राप्त है, वह घर देवताओं के रमण करने का स्थान स्वर्ग है। हमारे शास्त्रकारों ने और समाज के व्यवस्थापकों ने नारी को पुरुष के समान ही अधिकार दिये थे। उन्होंने किसी भी धार्मिक या सामाजिक अनुष्ठान में नारी का साथ रखना अनिवार्य बतलाया था। नारी के बिना पुरुष के द्वारा किया गया कोई भी अनुष्ठान पूर्ण ही नहीं माना जाता था। इस प्रकार प्राचीन काल में भारतीय समाज में नारी को वही स्थान प्राप्त था, जो उसे प्राप्त होना चाहिए।

3 नारी की स्थिति में परिवर्तन—कालान्तर में भारतीय समाज में नारी की स्थिति बिगड़ गई। पुरुष ने अपने बाहुबल के प्रताप से और आजीविका के उपार्जन का कार्य करने के प्रभाव से समाज में अपना स्थान प्रमुख बना लिया और नारी का स्थान गौण हो गया। इसके पश्चात् स्थिति में निरन्तर बिगाड़ होता ही चला गया। उसका महत्त्व कम होते-होते उसकी सीमा घर की चार दीवारी तक ही सिमट कर रह गई। पुरुष की वासना की तृप्ति करने, सन्तानोत्पत्ति करने, बालकों का लालन-पालन करने और पुरुष की सेवा करने के कार्य तक ही उसकी उपयोगिता समझ ली गई। पुरुष के समान ही समान महत्त्व और सम्मान से विभूषित नारी पुरुष की अनुगामिनी, अनुचरी और इच्छानुवर्तिनी बन गई। वह गृह-लक्ष्मी के पद से पदच्युत होकर गृहदासी मात्र रह गयी। भारत पर विदेशियों के बर्बर आक्रमणों से उसकी स्थिति में और भी बिगाड़ हुआ। ये आततायी आक्रमणकारी धन ही नहीं, ललनाओं की इज्जत भी लूटते थे। नारियों की रक्षा के लिए इन्हें और भी छोटी सीमा में बाँध कर रखा गया तथा पर्दा-प्रथा प्रारम्भ हो गयी। विदेशी आक्रमणों के फलस्वरूप देश की स्वाधीनता के साथ-साथ नारियों की स्वाधीनता भी पूर्णतया समाप्त हो गयी। अब नारी पुरुष की सेविका और उसके विलास का साधन मात्र रह गयी। इतिहास साक्षी है कि पर्दा-प्रथा, सती-प्रथा, बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह और बहुविवाह आदि कुप्रथाओं के द्वारा नारी पर कितने अत्याचार हुए और उसने विवश होकर उनको सहन किया। मध्यकालीन सन्तों, साहित्यकारों और शास्त्रकारों ने भी नारी की पीड़ा को नहीं समझा। गोस्वामी तुलसीदास जैसे महान् सन्त ने भी नारी के विषय में अपने अनुदार विचार ही व्यक्त किये—

'ढोल, गँवार, शूद्र, पशु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी ।'

अठारहवी शताब्दी के अन्त मे और वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भ में राजा राम मोहन राय, विवेकानन्द, महात्मा गांधी आदि समाज-सुधारको ने नारी की स्थिति सुधारने के प्रयत्न किये और देश की स्वतन्त्रता के साथ ही नारी को भी किन्ही अंशो मे स्वतंत्रता प्राप्त हो गई।

4. वर्तमान काल मे नारी—वर्तमान काल में नारी की स्थिति मे काफी सुधार हो गया है, किन्तु अब भी वह पुरुष की आधीनता, दासता और उसके अत्याचारों से मुक्त नही हो पाई है। यद्यपि स्वतंत्र भारत के संविधान मे नारी को पुरुष के समान ही सब अधिकार दिये हैं, हिन्दू-कोड बिल से उसे पैतृक सम्पत्ति मे समान अधिकार दिया है, किन्तु अपने व्यावहारिक जीवन मे वह अब भी पुरुष की दासी और इच्छानुवर्तिनी ही बनी हुई है। पुरुष अब भी उस पर अपना पूर्ण अधिकार मानता है और उसे अपनी गृहचर्या, सन्तान का लालन-पालन और अपनी वासनाओं की तृप्ति के साधन से अधिक महत्त्व नही देता है। दहेज-प्रथा, पर्दा-प्रथा, बहुविवाह, अनमोल विवाह और वैधव्य की प्रथाओं के कारण आज भी उस पर निर्मम अत्याचार हो रहे हैं। नारियो मे शिक्षा का प्रचार हो रहा है, किन्तु इसका प्रतिशत बहुत कम है। कुछ विकसित क्षेत्रों मे और विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों मे नारी ने घर से बाहर भी अपना कार्य क्षेत्र बनाया है। अब वे सरकारी कार्यालयों तथा निजी क्षेत्र के कार्यालयो मे नौकरियाँ करती हैं, व्यापार करती हैं और सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों मे भी कार्य करने लगी हैं, किन्तु इनमे से अधिकांश की स्थिति अच्छी नही है। उन्हे कदम-कदम पर अपमान, तिरस्कार और वासना से भरी कुदृष्टि का शिकार होना पड़ रहा है। यह स्थिति तो उन नारियो की है, जो पूर्ण रूप से शिक्षित तथा जागरूक बन गई है। जो नारियाँ अशिक्षित और पिछड़ेपन की शिकार हैं और जिनकी संख्या अस्सी प्रतिशत से अधिक है, उनकी स्थिति क्या होगी, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

5. आधुनिक युग में नारी की समस्याएँ—आधुनिक युग सामाजिक परिवर्तन का युग है जिसमे समाज के प्रत्येक क्षेत्र मे परिवर्तन की प्रक्रिया चल रही है। नारी की स्थिति मे भी परिवर्तन हो रहा है। सदियो से चली आ रही व्यवस्था मे परिवर्तन की प्रक्रिया से अनेक समस्याएँ उत्पन्न होना स्वाभाविक है, जिनमे प्रमुख ये हैं—

(1) शिक्षा सुविधा का अभाव—देश के अधिकांश क्षेत्रों मे अभी स्त्रियो की शिक्षा की व्यवस्था नही हो पायी है, जबकि सभी नारियाँ शिक्षा प्राप्त करने को आतुर हैं। जिन स्थानो पर शिक्षा की सुविधाएँ सुलभ है, वहाँ नारियो को इस सुविधा से वंचित रखा जाता है, जिसके कारण अनेक अन्य समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

(ii) पर्दा-प्रथा—ग्रामीण क्षेत्रो मे और कुछ जाति तथा समुदाय के लोगो मे नारियां से अब भी पर्दा-प्रथा का कठोरता से पालन करवाया जाता है और नारियाँ इस बन्धन से मुक्त होना चाहती हैं।

(iii) बाल-विवाह, अनमेल विवाह, बहु विवाह, वैधव्य तथा दहेज आदि की कुप्रथाओ के कारण नारी-जीवन अनेक समस्याओ से ग्रस्त है। एक ओर पिता की आज्ञा मानने की परम्परा का निर्वाह और दूसरी ओर जीवन के सुख-स्वप्नो की बलि के द्वन्द्व मे फँसी आधुनिक नारी किंकर्त्तव्य विमूढ सी हो रही है।

(iv) पुरुष का अनुदार दृष्टिकोण—जो नारियाँ अर्थोपार्जन मे पुरुष को सहयोग देने के लिए घर से बाहर निकल आई हैं, उनके प्रति घर और घर के बाहर उसके कार्य-स्थान पर पुरुष का व्यवहार उदार और न्यायोचित नही है। जिससे नारी के सामने अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं।

(v) आभूषण और शृंगार-प्रेम—पढ लिख कर सुशिक्षित और सभ्य हो जाने के बावजूद नारियो मे बनाव शृंगार और आभूषणो के प्रति प्रेम यथावत् बना हुआ है। इससे जहाँ एक ओर उनके तथा उनके परिवार के सामने आर्थिक समस्याएं उत्पन्न होती हैं, वही दूसरी ओर उनके प्रति पुरुष का वासनात्मक आकर्षण भी बढता है जो दूसरे प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न करता है।

(vi) पुरुष की अधीनता—नारी सभी क्षेत्रो मे पुरुष के समान अधिकार चाहती है और पुरुष उसे हर क्षेत्र मे अपने अधीन ही बनाये रखना चाहता है। इस अधिकार-संघर्ष के कारण भी नारी के सामने अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

6. समाधान के उपाय—नारी की उपर्युक्त समस्याओ का समाधान होना आवश्यक है। इसके लिए प्रशासन, समाज, पुरुष और स्वयं नारी के स्तर पर समाधान के उपाय किये जाना अपेक्षित है। प्रशासन ने नारी को कानूनन पुरुष के समान ही अधिकार दे दिये हैं, किन्तु इन कानूनो की पालना मे तत्परता और दृढता नही बरती जाती। विवाह और दहेज सम्बन्धी कानूनो को और अधिक कठोर बनाया जाना चाहिए और उनका दृढता से पालन करवाने की संवेदनशील व्यवस्था कायम की जानी चाहिए। समाज को नारी के विषय मे अपने दृष्टिकोण मे परिवर्तन करना चाहिए। पर्दा प्रथा को समाप्त करने मे समाज को ही पहल करनी चाहिए। नारियो मे शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए भी समाज को ही प्रयत्न करना चाहिए। विवाह के सम्बन्ध मे समाज को कन्याओ की स्थिति और रुचि का अवश्य ध्यान रखना चाहिए। प्रेम-विवाह, अन्तर्जातीय विवाह और विधवा विवाह तथा पुनर्विवाह को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

7. उपसंहार—यह प्रसन्नता और सन्तोष की बात है कि स्वतन्त्र भारत मे नारी की स्थिति मे निरन्तर सुधार होता प्रतीत हो रहा है। आज भी हमारे देश में अनेक नारियाँ प्रशासन और अन्य क्षेत्रों में उच्च पदो पर आसीन हैं।

□□□

25 | देश की वर्तमान स्थिति में हमारा कर्त्तव्य

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. देश की वर्त्तमान स्थिति—राजनैतिक, प्रशासनिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ।
3. वर्त्तमान स्थिति के कारण
4. सुधार के उपाय और हमारा कर्त्तव्य
5. उपसंहार

1. प्रस्तावना—किसी देश की स्थिति उस की राजनैतिक, प्रशासनिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों पर निर्भर होती है। इन परिस्थितियों को देखकर ही देश की स्थिति का अनुमान लगाया जाता है। जिस देश मे राजनैतिक स्थिरता हो, प्रशासनिक व्यवस्था सुदृढ हो, समाज मे प्रेम, सद्भाव, एकता और कर्त्तव्य-पालन की भावना व्याप्त हो तथा गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी और मंहगाई न हो एवम् जिस देश के नागरिक अपने हितो के साथ समाज और राष्ट्र के हितो का भी ध्यान रखने वाले हो, उस देश की स्थिति अच्छी मानी जाती है। इसके विपरीत जिस देश मे कानून और व्यवस्था की स्थिति अच्छी न हो, गरीब और अमीर की स्थिति मे जमीन-आसमान का अन्तर हो, भ्रष्टाचार, पक्षपात और स्वार्थ-वृत्ति का बोलबाला हो, देश की जनता दु:खी हो तथा देश असंगठित एव असुरक्षित हो तो उस देश की स्थिति अच्छी नही कही जा सकती।

2. हमारे देश की वर्तमान स्थिति—हमारे देश की वर्तमान स्थिति कुल मिलाकर सतोषजनक नही कही जा सकती। देश की विभिन्न परिस्थितियो पर पृथक्-पृथक् रूप से विचार करने पर स्थिति स्पष्ट हो जाती है।

(i) राजनैतिक परिस्थितियाँ—हमारे देश मे इस समय राजनैतिक *परिस्थितियाँ अच्छी नही हैं। देश की राजनीति मे सत्ता-स्वार्थ सर्वोपरि महत्त्व*

प्राप्त करता जा रहा है। दल-बदल, दलीय हितो की रक्षा मे सवैधानिक व्यवस्थाओं को अनदेखी करना, जातिवाद और क्षेत्रीयवाद के आधार पर राजनैतिक दलो का गठन—ये सब इस प्रकार के कार्य हैं, जिनसे राजनैतिक वातावरण दूषित होता है और देश की राजनीति मे अस्थिरता उत्पन्न होकर अवसरवादिता को प्रोत्साहन मिलता है। सत्ताधारी दल विपक्ष के हर प्रस्ताव को ठुकराता है चाहे वह देश हित मे उपयोगी ही क्यो न हो। विपक्ष हर बात मे सत्ता पक्ष का विरोध करता है यहाँ तक कि मानवीय सवेदना के प्रकरणो को भी राजनैतिक रग देकर सरकार को नीचा दिखाने का प्रयास करता है। इसके अतिरिक्त विपक्ष बहुत कमजोर और विभाजित है तथा हडतालो और आन्दोलनो के सिवा वह अपनी कोई रचनात्मक भूमिका अदा नही करता। इस प्रकार देश की राजनैतिक परिस्थितियाँ ठीक नही कही जा सकती।

(ii) प्रशासनिक स्थिति—कहने को तो हम यह कह सकते हैं कि हमारे देश म सुदृढ प्रशासनिक व्यवस्था कायम है, किन्तु वास्तविकता यह है कि इस समय हमारे देश मे प्रशासनिक ढांचा भीतर से खोखला हो गया है। प्रशासनिक खर्च पर सरकार की आय का बहुत बडा हिस्सा व्यय होता है, किन्तु जनता को उसका उचित लाभ नही मिलता। बहुत से सरकारी अधिकारी और कर्मचारी भ्रष्टाचार मे लिप्त हैं। हडतालो और आन्दोलनो के जरिये कर्मचारी निरन्तर अपनी सुविधाओं मे बढोतरी करते जा रहे हैं और अपने दायित्वो के निर्वाह मे उसी अनुपात मे उपेक्षा वृत्ति को अपनाते जा रहे हैं। लालफीताशाही की जटिल प्रक्रिया मे फाइलो के ढेर बढते जाते हैं और इसी के साथ जन-सामान्य की कठिनाइयाँ भी बढती जाती हैं। प्रशासनिक शिथिलता के कारण देश मे कानून और व्यवस्था की स्थिति बिगडती जा रही है। अपराधो और अपराधो की सख्या मे निरन्तर वृद्धि होती जा रही है।

(iii) सामाजिक स्थिति—देश की सामाजिक स्थिति भी इस समय अच्छी नही है। महगाई, बेरोजगारी और बढती हुई जनसख्या के कारण गरीब और मध्यम वर्ग की जनता बहुत परेशान है। अब देश मे निरक्षरता का प्रतिशत बहुत अधिक है। समाज मे स्त्रियो की दशा शोचनीय बनी हुई है। दहेज जैसी घातक सामाजिक प्रथा और अधिक व्यापक होती जा रही है। यद्यपि देश मे साम्प्रदायिक सद्भाव बना हुआ है, किन्तु यदाकदा देश के कुछ भागो मे साम्प्रदायिक उपद्रव भी होते रहते हैं। देश मे इस समय जातिवाद और वर्ग-हित की भावना जोर पकडती जा रही है जिससे देश की एकता पर विपरीत प्रभाव पडता है।

(iv) आर्थिक स्थिति—इस समय देश की आर्थिक स्थिति भी अच्छी नही कही जा सकती। यद्यपि राष्ट्रीय उत्पादन और विकास की दर मे वृद्धि हो रही है, किन्तु देश म विदेशी ऋणो के भार से दबा हुआ है। एक तरफ सरकार घाट

की अर्थ-व्यवस्था से काम चला रही है और दूसरी ओर देश मे कालेधन की एक समानान्तर अर्थ-व्यवस्था चल रही है। मुद्रास्फीति बनी हुई है और मूल्यों में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। मूल्य वृद्धि के साथ ही वेतन वृद्धि और वेतन वृद्धि के साथ ही पुन. मूल्य वृद्धि का दुश्चक्र निरन्तर तीव्र गति से घूम रहा है।

3. वर्तमान स्थिति के कारण—देश की वर्त्तमान असतोषजनक स्थिति के अनेक कारण हैं जिनमे निम्नलिखित कारण प्रमुख हैं—

(i) राजनैतिक भ्रष्टाचार—देश की राजनीति इस समय सत्ता-स्वार्थ की अनीति बनी हुई है। राजनेता अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देते हैं तथा जातिवाद, साम्प्रदायिकता और वर्गवाद को भी उकसाते हैं। हर बात मे प्रशासनिक व्यवस्था मे दखलन्दाजी होने के कारण निष्ठावान प्रशासनिक अधिकारियो तथा कर्मचारियों का मनोबल गिरता है और प्रशासनिक व्यवस्था शिथिल पडती है। पक्षपात और अनुचित सरक्षण के कारण कानून और व्यवस्था की स्थिति में भी बिगाड़ होता है।

(ii) नैतिक पतन—हमारे देश मे नैतिक आदर्शों का पालन करने वाले लोगों की सख्या बहुत कम रह गई है और इसमे ह्रास ही होता जा रहा है। भ्रष्टाचार आज एक शिष्टाचार बन गया है। ईमानदारी, सदाचार और कर्त्तव्य-पालन की बात करने वाले लोग दकियानूसी विचारधारा के लोग माने जाते लगे हैं। आज निजी हितो की तुलना मे समाज या देश के हितो का कोई मूल्य नहीं रह गया है। हमारे देश की जनता का नैतिक पतन इस सीमा तक पहुँच गया है कि आज व्यक्ति अपने छोटे से स्वार्थ के लिए देश का बडे से बडा अहित करने में भी नही हिचकिचाता। भौतिक समृद्धि की चाह मे सत्य, न्याय, ईमानदारी और नीति का गला घोट देना एक सामान्य बात हो गई है।

(iii) व्यापक विकास और जन-संख्या वृद्धि—स्वाधीनता-प्राप्ति के पश्चात् देश मे व्यापक रूप से विकास कार्यक्रमो का विस्तार हो रहा है और जनसख्या मे तीव्र गति से वृद्धि होती जा रही है। ये दोनो ही कारण देश मे व्यवस्था बनाये रखने मे बाधा उत्पन्न करते हैं।

(iv) विदेशी कूटनीति—जो देश हमारे देश को शक्तिशाली राष्ट्र के रूप मे नही देखना चाहते, वे विभिन्न उपायो से देश मे फूट फैलाकर उपद्रव करवाते हैं और देश की स्थिरता तथा विकास की गति को कम करने का प्रयत्न करते हैं।

4. वर्तमान स्थिति मे हमारा कर्त्तव्य—यद्यपि हमारे देश की वर्त्तमान स्थिति अनेक दृष्टियो काफी खराब हो चुकी है, किन्तु अब भी वहाँ कोई चिन्ताजनक स्थिति उत्पन्न नहीं हुई है। इसलिए यदि देश की युवा पीढी इसमे सुधार करने का सकल्प ले तो बडी सरलता से सुधार हो सकता है। स्वाधीनता-प्राप्ति से पहले की युवापीढी ने देश को आजाद कराने के लिए सघर्ष किया था। उनके संघर्ष और

त्याग के फलस्वरूप देश को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, किन्तु यह एक राजनैतिक स्वतन्त्रता मात्र ही है। देश को सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र बनाने का काम अभी शेष है। आजादी के बाद जन्म लेने वाली युवा पीढ़ी को यह शेष काम पूरा करना है। देश में खुशहाली आवे, कानून और व्यवस्था की स्थिति सुदृढ़ हो, देश की गरीबी और पिछड़ापन दूर हो, देश की जनता में सद्भाव और भाईचारे की भावना बनी रहे तथा देश की एकता और अखण्डता की हर कीमत पर रक्षा हो सके, इसके लिए हमें निम्नलिखित कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिए —

(i) देश-हित और समाज हित को महत्व देना—*वर्तमान स्थिति में हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम अपने चिन्तन-मनन और कार्य-प्रणाली में देश हित को सर्वोच्च महत्व दें। अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति करने के लिए देश और समाज-हित के कार्यों की अनदेखी करने की वृत्ति का परित्याग कर दें। देश-हित को ही अपना हित, देश की समृद्धि को ही अपनी समृद्धि और देश की जनता के कष्टों को ही अपना कष्ट समझकर कार्य करें।*

(ii) देश की जनता में जागृति उत्पन्न करना—*देश की अधिकांश जनता अशिक्षित और पिछड़ी हुई है। उनकी इस कमजोरी का स्वार्थी तत्त्व अनुचित लाभ* उठाते हैं। इसलिए हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम अपने स्तर पर ही देश में शिक्षा का खूब प्रचार करें और जनता में जागृति उत्पन्न करें। जब देश की साठ करोड़ जनता शिक्षित होकर जाग उठेगी, अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों को ठीक से समझने लग जायगी तो हमारी अनेक समस्याएँ स्वतः सुलझ जायेंगी।

(iii) कर्त्तव्य-पालन और कठिन परिश्रम—कठोर परिश्रम ही सफलता की कुंजी है। हम जहाँ भी हैं, जिस कार्य में लगे हैं—उस स्थान और उस कार्य के सम्पादन में अपने कर्त्तव्यों का ईमानदारी से पालन करें। इसके साथ ही कठोर परिश्रम करते रहें। संसार में ऐसा कोई कार्य नहीं है और ऐसी कोई समस्या नहीं है जिसका समाधान परिश्रम से सम्भव न हो। हमें दिखावटी बाबूगीरी की शान को छोड़कर शारीरिक श्रम के कार्य करने में भी संकोच नहीं करना चाहिए।

(iv) सरकार को सहयोग—सरकार देश के विकास के लिए अनेक योजनाएँ लागू करती है, किन्तु जनता के सहयोग के अभाव में योजनाएँ पूर्णरूप से सफल नहीं हो पाती हैं और इनका लाभ जनता को नहीं मिल पाता है। अतः हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम सरकार के प्रत्येक रचनात्मक कार्य में अपना सक्रिय सहयोग देकर उन्हें सफल बनावें।

(v) देश-द्रोहियों का सफाया—प्रत्येक वह व्यक्ति जो देश-द्रोह के कार्य करता है, देश का दुश्मन है। भ्रष्टाचारी, कालाबाजारी, जमाखोर और कामचोर—ये सभी लोग गद्दार हैं और देश के दुश्मन हैं। इनके काले कारनामों से देश में अनेक विकट समस्याएँ उत्पन्न होती हैं और देश की जनता की कठिनाइयाँ बढ़ती

हैं। हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम इन्हें बेनकाब करें। इनकी हरकतों पर अंकुश लगावें और इन्हें कानून के हवाले करने में कोई कसर न छोड़ें। इसी प्रकार सम्प्रदायिकता फैलाने वाले तथा अलगाववादी प्रवृत्ति के लोग भी देश के दुश्मन हो हैं। वे देश-विदेश में छिपे हमारे देश के शत्रुओं के इशारों पर देश में आतंक और उपद्रव फैलाने की कार्यवाहियाँ करते हैं। प्रत्येक देश-भक्त नागरिक का कर्त्तव्य है कि वह देश के इन शत्रुओं की खोज करे और इनका सफाया करने के काम में सरकार की मदद करें।

यह सही है कि उपर्युक्त कर्त्तव्यों का पालन करने में हमें कदम-कदम पर अपनी हानि होने की आशंका बनी रहेगी, किन्तु क्या इसी भय से हमारा कर्त्तव्य-विमुख बने रहना उचित होगा ? देश को सामाजिक और आर्थिक स्वतंत्रता क्या बिना कुर्बानी के मिल जायगी ?

उपसंहार—कोई भी देश या समाज न बुरा होता है और न भला। किसी देश के नागरिक और समाज के सदस्य यदि बुरे होते हैं तो वह देश और समाज भी बुरा होता है और यदि वे अच्छे होते हैं तो देश और समाज भी अच्छा होता है। आज हमारे देश में जो बुराइयाँ हैं वे हमारे ही कारण से है। यदि हम इन बुराइयों का व्यक्तिगत स्तर पर त्याग करना प्रारम्भ कर दें तो देश की सारी बुराइयाँ स्वतः समाप्त हो जायेंगी। देश-हित या समाज-हित हमारे व्यक्तिगत हित से भिन्न कोई चीज नहीं है, यह तो केवल हमारी समझ का फेर है। देश और समाज के हित में ही हमारा स्वयं का हित सुरक्षित है। अतः हमें अपने व्यक्तिगत हितों की रक्षा के लिए भी देश-हित को ही महत्त्व देना चाहिए। देश-हित को महत्त्व देने के कारण ही आज हमारे सामने समस्याओं का अम्बार लग गया है। इन समस्याओं में वे लोग भी उलझ गये हैं जिन्होंने देश-हित की अनदेखी करके स्वयं के हितों को ही महत्त्व दिया है। इस भूल-भुलैया से निकलने का एक ही उपाय है, और वह यह कि जिस मार्ग से हम यहाँ तक पहुँचे हैं उसी मार्ग से उल्टे पाँव लौटने का प्रयत्न करें।

□□□

वर्णनात्मक निबन्ध

किसी मैच का आँखों देखा हाल | 1

निबन्ध की रूप-रेखा

(1) प्रस्तावना—खेल खेलने और मैच देखने मे रुचि

(2) फुटबाल मैच—मैच की सूचना मिलना तैयारी होना, टिकिट प्राप्त करने मे कठिनाई आना, दर्शको की भीड होना, शानदार खेल का प्रदर्शन देखना

(3) उपसहार—कष्ट और असुविधाओ के वावजूद मानसिक सन्तोष

प्रस्तावना—मनोरजन के अनेक साधन हैं जैसे रेडियो टेलीविजन, नाच-गान, पुस्तकें, कविता और खेल-कूद। जिसकी जिसमे रुचि होती है, उसे वही प्रिय होता है और उसी से उसका मनोरजन होता है। अपने प्रिय मनोरजन का जब भी अवसर मिलता है, मनुष्य उस अवसर का लाभ उठाने का प्रयास करता है। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि किसी मनोरजन का लाभ उठाने के चक्कर मे मनुष्य को आर्थिक हानि भी उठानी पड जाती है और परेशान भी होना पडता है, किन्तु मनोरजन का आकर्षण इतना तीव्र होता है कि सब कुछ सहन करने को तैयार हो जाता है और अपने प्रिय मनोरजन के अवसर को हाथ से नही जाने देता।

विषय प्रवेश—मुझे खेल-कूद बहुत प्रिय हैं। मैं स्वय भी नियमित रूप से फुटबाल खेलता हूँ और फुटबाल का खेल देखना भी मुझे बहुत अच्छा लगता है। यो तो सभी खेल अपनी अपनी जगह अच्छे होते हैं, किन्तु फुटबाल की तो बात ही निराली है। तेज रफ्तार से दौडना, विपक्षी को चकमा देना, पूरी ताकत से भिड पडना, गेंद को शॉट लगाकर दूर फेंकना, सिर और पाँवो से ही वह सब काम लेना जो हाथो मे करना भी ठीक नही होता है। पूरी चुस्ती, फुर्ती, शरीर का सन्तुलन, साहस और बल इन सब के योग से ही फुटबाल का खेल खेला जाता है। इसलिए मुझे जब भी फुटबाल का अच्छा मैच देखने का अवसर मिलता है, मै उस अवसर का लाभ अवश्य उठाता हूँ चाहे मुझे इसके लिए कितना ही त्याग क्यो न करना पडे।

उस दिन मैं सोकर उठा ही था कि 'राजस्थान पत्रिका' के मुख्य पृष्ठ पर जयपुर मे चल रहे सरदार पटेल फुटबाल टूर्नामेंट मे कलकत्ते की नामी टीम मोहम्मडन स्पोटिग क्लब और आर ए सी बीकानेर की टीमो के बीच मैच का समाचार

पड़ा। मेरी बाँहे खिल गईं। आर ए सी बीकानेर की टीम का खेल तो मैं पहले भी देख चुका था, लेकिन मोहम्मडन स्पोर्टिंग क्लब का खेल देखने का कभी अवसर नहीं मिला। यह टीम भारत की सर्वश्रेष्ठ टीमों में से एक है— यह मैं जानता था। कैसा शानदार होगा यह मुकाबला! कितना कलात्मक खेल होगा इनका! इन्हीं विचारों और कल्पनाओं में डूबते हुए मैंने निश्चित कर लिया कि मैं यह मैच जरूर देखूँगा। पिताजी उस दिन घर पर नहीं, माताजी को मिन्नतें करके मैंने किसी प्रकार राजी कर लिया। जल्दी-जल्दी नहा-धोकर कुछ खाया-पिया और घर से रवाना हो गया। एक-दो मित्रों से बात की, किन्तु जब उन्होंने अपनी असमर्थता व्यक्त की तो मैं अकेला ही पैदल चलकर अपने गाँव के रेलवे स्टेशन पर पहुँचा। वहाँ पता चला कि गाड़ी एक घंटे लेट है। किसी तरह वह समय गुजरा। गाड़ी आयी और मैं टिकट लेकर बैठ गया। करीब 3 बजे मैं जयपुर पहुँचा। मैच 4·30 पर प्रारम्भ होने वाला था। जल्दी से रिक्शा किया, मुँह माँगा किराया दिया और सीधे सवाई मानसिंह स्टेडियम पहुँच गया।

स्टेडियम के बाहर हजारों लोगों की भीड़ जमा थी। यातायात पुलिस तथा दूसरी प्रकार की पुलिस के अनेक अफसर और जवान भीड़ पर नियन्त्रण करने में लगे थे। मैं भीड़ को चीरता हुआ जल्दी से टिकिट की खिड़की के पास पहुँच जाना चाहता था। कुछ दूर ही आगे बढ़ा था कि एक पुलिस वाले ने रोका—"क्यों धक्के लगा रहे हो?" मैंने आजी जी करके कहा—"साहब! मुझे टिकिट लेना है। आप मुझे टिकट खिड़की तक पहुँचा दीजिए।" पुलिसमैन हँसा और बोला—"अब टिकिट कहाँ है? टिकिट तो सब बिक चुके। टिकिट खिड़की भी बन्द कर दी गई है। जाओ कल मैच देखना।" पुलिस वाले का जवाब सुनकर मुझे ऐसा लगा जैसे किसी ने मेरा सर्वस्व छीन लिया हो। मुझे बहुत निराशा हुई और मैं भारी मन से धीरे-धीरे भीड़ से बाहर निकल आया। मुझे इतना दुःख हुआ कि मुझ से खड़ा भी नहीं रहा गया। भीड़ से दूर हटकर मैं एक पेड़ की छाया में बैठ गया। मैं मुँह लटकाये वहीं बैठा-बैठा आकर्षक खेल की कल्पनाओं में खो गया। कुछ देर बाद ही यकायक मेरी दृष्टि पास ही खड़े कुछ लोगों के झुंड पर पड़ी। मैंने अनुमान से ही भाँप लिया कि वहाँ शायद कोई ब्लैक से टिकट बेच रहा है। मैं लपक कर वहाँ पहुँचा। मेरा अनुमान सही था। एक फैशनेबुल नौजवान पाँच रुपये के टिकट पच्चीस रुपयों में बेच रहा था। कुछ लोग उसे पन्द्रह रुपयों में देने को कह रहे थे। उसके पास केवल एक ही टिकट बचा था। मैंने जल्दी से उसे पच्चीस रुपये देकर टिकट ले लिया और तीर की तरह दौड़ता हुआ स्टेडियम के भीतर प्रवेश कर गया।

स्टेडियम के भीतर का दृश्य देखकर चित्त प्रसन्न हो गया। चारों ओर सर्किल में दर्शकों से स्टेडियम खचाखच भरा था। बीच में एकदम साफ-सुथरा हरा-भरा समतल मैदान था। जिस पर सफेद चूने की लाइनें बड़ी आकर्षक लग रही थीं। खेल शुरू होने में करीब दस मिनट का समय शेष था। दोनों टीमें गोल पोस्टरों पर

ड्रिलिंग का अभ्यास कर रही थी और खिलाड़ी घबड़ा रहे थे। लाल और हरी जर्सियों में सजे-सँवरे खिलाड़ी देखने में बड़े आकर्षक लग रहे थे। उनकी फुर्ती, गोल में फ्लिक लगाने का स्टाइल और गोली की सावधानी का खेल देखकर दर्शक बहुत प्रसन्न हो रहे थे। दोनों का अभ्यास ऐसा सधा हुआ था कि कौनसी टीम जीतेगी, इतना पूर्वानुमान लगाना कठिन हो रहा था। मेरे आस-पास बैठे कुछ लोग हार-जीत के सौदे कर रहे थे। मैंने पहले से अनुमान लगाना उचित नहीं समझा, क्योंकि दोनों टीमें बेहद सन्तुलित थीं। कुछ क्षण बाद काली पोशाक पहने निर्णायक मैदान में आया और उसने जोर से ह्विशिल बजाई।

ह्विशिल की आवाज सुनते ही सब का ध्यान मैदान की ओर केन्द्रित हो गया और लगभग बीस हजार दर्शकों की उपस्थिति होते हुए भी पूर्ण निस्तब्धता छा गयी। कुछ ही क्षणों में दोनों टीमों के खिलाड़ी अपने-अपने स्थानों पर आमने-सामने खड़े हो गये। निर्णायक ने दोनों टीमों के कप्तानों के हाथ मिलाये। दर्शकों ने तालियाँ बजाकर उनके मैत्रीभाव का स्वागतम् किया। निर्णायक ने घड़ी देखी और खेल प्रारम्भ करने के लिए ह्विशिल बजा दी। खेल शुरू हो गया। कुछ क्षण तो गेंद धीमी गति से इधर से उधर लुढ़कती रही, किन्तु फिर खेल में यकायक तेजी आ गई। आर ए सी की टीम के सैण्टर हॉफ ने गेंद को ऊँचा उठाकर कलकत्ता की टीम के पेनल्टी एरिया में डाल दिया। बीकानेर के खिलाड़ियों ने उसे हैड करके एक-दूसरे को पास दिया। देखते-देखते गेंद गोल एरिया में ऐसी उछली कि बीकानेर के राइट आउट को पैंतालीस डिग्री के एंगिल पर मिली। कलकत्ते की टीम का फुलबैक एक कदम पीछे था। राइट आउट ने वॉली बनाकर ऐसा दनदनाता हुआ शॉट गोल में मारा कि गोली गेंद को सम्भाल ही नहीं सका और गेंद गोल के भीतर नैट में झूलती नजर आयी। यह देखकर दर्शक अपने स्थानों पर खड़े होकर जोर-जोर से चिल्लाने लगे और हाथ हिलाने लगे। खेल प्रारम्भ होने के सात मिनट बाद ही बीकानेर ने गोल कर दिया। कलकत्ते की टीम हक्का-बक्का रह गयी। राजस्थान की टीम होने के नाते दर्शकों की सहानुभूति बीकानेर टीम के साथ ही थी। इसीलिए शोर मचा-मचा कर टीम का और भी उत्साह बढ़ाने लगे। गेंद सैण्टर में आयी और फिर खेल शुरू हुआ, लेकिन अब नक्शा बदल गया था। कलकत्ता के अनुभवी खिलाड़ियों ने समझ लिया था कि ऊँचा खेल खेलने से बीकानेर को लाभ मिलेगा। इसलिए उन्होंने छोटे पास और रोलिंग गेम शुरू कर दिया। बीकानेर को जब भी गेंद मिलती वे उसे उछाल कर ऊँचा खेल खेलने का प्रयास करते, किन्तु कलकत्ते वाले उसे पुनः रोलिंग बना देते। इस तकनीक से कलकत्ते की टीम बीकानेर पर बार-बार हमले करने लगी। छोटे-छोटे पासों से खिलाड़ियों को चकमा देती हुई गेंद बीकानेर के गोल एरिया में बार-बार पहुँचने लगी। बीकानेर की सारी दब गयी। अनेक बार गोल में शॉट भी लगाये गये, लेकिन सुरक्षा पंक्ति और गोली की सतर्कता से गोल नहीं हो सका। ऐसे अनेक अवसर आये जब निश्चित गोल हो जाता, किन्तु गोली ने अपनी

पड़ा। मेरी बाँहे खिल गईं। आर ए सी बीकानेर की टीम का खेल तो मैं पहले भी देख चुका था, लेकिन मोहम्मडन स्पोर्टिंग क्लब का खेल देखने का कभी अवसर नहीं मिला। यह टीम भारत की सर्वश्रेष्ठ टीमो मे से एक है— यह मैं जानता था। कैसा शानदार होगा यह मुकाबला ! कितना कलात्मक खेल होगा इनका ! इन्ही विचारो और कल्पनाओ मे डूबते हुए मैंने निश्चित कर लिया कि मैं यह मैच जरूर देखूँगा। पिताजी उस दिन घर पर नही, माताजी की मिन्नतें करके मैंने किसी प्रकार राजी कर लिया। जल्दी-जल्दी नहा-धोकर कुछ खाया-पिया और घर से रवाना हो गया। एक-दो मित्रो से बात की, किन्तु जब उन्होने अपनी असमर्थता व्यक्ति की तो मैं अकेला ही पैदल चलकर अपने गाँव के रेलवे स्टेशन पर पहुँचा। वहाँ पता चला कि गाडी एक घंटे लेट है। किसी तरह वह समय गुजरा। गाडी आयी और मैं टिकट लेकर बैठ गया। करीब 3 बजे मैं जयपुर पहुँचा। मैच 4 30 पर प्रारम्भ होने वाला था। जल्दी से रिक्शा किया, मुँह माँगा किराया दिया और सीधे सवाई मानसिंह स्टेडियम पहुँच गया।

स्टेडियम के बाहर हजारो लोगों की भीड जमा थी। यातायात पुलिस तथा दूसरी प्रकार की पुलिस के अनेक अफसर और जवान भीड पर नियत्रण करने मे लगे थे। मै भीड को चीरता हुआ जल्दी से टिकिट की खिडकी के पास पहुँच जाना चाहता था। कुछ दूर ही आगे बढा था कि एक पुलिस वाले ने रोका—"क्यो धक्के लगा रहे हो ?" मैंने आजी जी करके कहा—"साहब ! मुझे टिकिट लेना है। आप मुझे टिकट खिडकी तक पहुँचा दीजिए।" पुलिसमैन हँसा और बोला—"अब टिकिट कहाँ है ? टिकिट तो सब बिक चुके। टिकिट खिडकी भी बन्द कर दी गई है। जाओ कल मैच देखना।" पुलिस वाले का जवाब सुनकर मुझे ऐसा लगा जैसे किसी ने मेरा सर्वस्व छीन लिया हो। मुझे बहुत निराशा हुई और मैं भारी मन से धीरे-धीरे भीड से बाहर निकल आया। मुझे इतना दुःख हुआ कि मुझ से खडा भी नही रहा गया। भीड से दूर हटकर मे एक पेड की छाया मे बैठ गया। मैं मुँह लटकाये वहीं बैठा-बैठा आकर्षक खेल की कल्पनाओ मे खो गया। कुछ देर बाद ही यकायक मेरी दृष्टि पास ही खडे कुछ लोगो के झुंड पर पड़ी। मैने अनुमान से ही भाँप लिया कि वहाँ शायद कोई ब्लैक से टिकट बेच रहा है। मै लपक कर वहाँ पहुँचा। मेरा अनुमान सही था। एक फैशनेबुल नौजवान पाँच रुपये के टिकट पच्चीस रुपयो मे बेच रहा था। कुछ लोग उसे पन्द्रह रुपयो मे देने को कह रहे थे। उसके पास केवल एक ही टिकट बचा था। मैंने जल्दी से उसे पचीस रुपये देकर टिकट ले लिया और तीर की तरह दौडता हुआ स्टेडियम के भीतर प्रवेश कर गया।

स्टेडियम के भीतर का दृश्य देखकर चित्त प्रसन्न हो गया। चारो ओर सर्किल मे दर्शको से स्टेडियम खचाखच भरा था। बीच मे एकदम साफ-सुथरा हरा-भरा समतल मैदान था। जिस पर सफेद चूने की लाइनें बडी आकर्षक लग रही थी। खेल शुरू होने मे करीब दस मिनट का समय शेष था। दोनों टीमे गोल पोस्टरो पर

क्रिकिग का अभ्यास कर रही थी और खिलाडी घबडा रहे थे। लाल और हरी जर्सियो मे सजे-सँवरे खिलाडी देखने मे बडे आकर्षक लग रहे थे। उनकी फुर्ती, गोल मे किक लगाने का स्टाइल और गोलो की सावधानी का खेल देखकर दर्शक बहुत प्रसन्न हो रहे थे। दोनों का अभ्यास ऐसा सधा हुआ था कि कौनसी टीम जीतेगी, इतना पूर्वानुमान लगाना कठिन हो रहा था। मेरे आस-पास बैठे कुछ लोग हार-जीत के सौदे कर रहे थे। मैंने पहले से अनुमान लगाना उचित नही समझा, क्योंकि दोनो टीमे बेहद सन्तुलित थीं। कुछ क्षण बाद काली पोशाक पहने निर्णायक मैदान मे आया और उसने जोर से ह्विशिल बजाई।

ह्विशिल की आवाज सुनते ही सब का ध्यान मैदान की ओर केन्द्रित हो गया और लगभग बीस हजार दर्शको की उपस्थिति होते हुए भी पूर्ण निस्तब्धता छा गयी। कुछ ही क्षणो मे दोनो टीमो के खिलाडी अपने-अपने स्थानो पर आमने-सामने खडे हो गये। निर्णायक ने दोनों टीमो के कप्तानो के हाथ मिलाए। दर्शको ने तालियाँ बजाकर उनके मैत्रीभाव का स्वागतम् किया। निर्णायक ने घडी देखी और खेल प्रारम्भ करने के लिए ह्विशिल बजा दी। खेल शुरू हो गया। कुछ क्षण तो गेंद धीमी गति से इधर से उधर लुढकती रही, किन्तु फिर खेल मे यकायक तेजी आ गई। आर ए सी की टीम के सेण्टर हॉफ ने गेंद को ऊँचा उठाकर कलकत्ता की टीम के पेनल्टी एरिया मे डाल दिया। बीकानेर के खिलाडियो ने उसे हैड करके एक-दूसरे को पास दिया। देखते-देखते गेंद गोल एरिया मे ऐसी उछली कि बीकानेर के राइट आउट को पैंतालीस डिग्री के एंगिल पर मिली। कलकत्ते की टीम का फुलबैक एक कदम पीछे था। राइट आउट ने वॉली बनाकर ऐसा दनदनाता हुआ शॉट गोल मे मारा कि गोली गेंद को सम्भाल ही नही सका और गेंद गोल के भीतर नैट मे झूलती नजर आयी। यह देखकर दर्शक अपने स्थानो पर खडे होकर जोर-जोर से चिल्लाने लगे और हाथ हिलाने लगे। खेल प्रारम्भ होने के सात मिनट बाद ही बीकानेर ने गोल कर दिया। कलकत्ते की टीम हक्का-बक्का रह गयी। राजस्थान की टीम होने के नाते दर्शको की सहानुभूति बीकानेर टीम के साथ ही थी। इसीलिए शोर मचा मचा कर टीम का और भी उत्साह बढाने लगे। गेंद सैण्टर मे आयी और फिर खेल शुरू हुआ, लेकिन अब नक्शा बदल गया था। कलकत्ता के अनुभवी खिलाडियो ने समझ लिया था कि ऊँचा खेल खेलने से बीकानेर को लाभ मिलेगा। इसलिए उन्होंने छोटे पास और रोलिंग गेम शुरू कर दिया। बीकानेर को जब भी गेंद मिलती वे उसे उछाल कर ऊँचा खेल खेलने का प्रयास करते, किन्तु कलकत्ते वाले उसे पुन रोलिंग बना देते। इस तकनीक से कलकत्ते की टीम बीकानेर पर बार-बार हमले करने लगी। छोटे-छोटे पासो से खिलाडियो को चकमा देती हुई गेंद बीकानेर के गोल एरिया मे बार-बार पहुँचने लगी। बीकानेर की साइड दब गयी। अनेक बार गोल मे शॉट भी लगाये गये, लेकिन सुरक्षा पंक्ति और गोली की सतर्कता से गोल नही हो सका। ऐसे अनेक अवसर आये जब निश्चित गोल हो जाता, किन्तु गोली ने अपनी

सूझबूझ से गोल बचा लिये। दर्शक गोली के शानदार खेल की तारीफ मे नाचने-गाने लगे। इसी बीच निर्णायक ने मध्यान्तर की ह्विशिल बजा दी।

खेल रुकने ही दर्शकों में एक निश्चित प्रकार की हलचल मच गई। सब लोग इधर-उधर आ जा रहे थे, किन्तु सबकी जुबान पर खेल की ही चर्चा थी। प्राय. सभी का यह अनुमान था कि यदि बीकानेर इसी तरह मजबूती से खेलती रही तो जीत जायेगी। इन्ही चर्चाओ में मध्यान्तर का समय बीत गया और खेल फिर शुरू हुआ। अब खेल निर्णायक दौर में था। दोनो ओर के खिलाडी पूरी ताकत और सूझ-बूझ से खेल रहे थे। कुछ ही देर मे बीकानेर की साइड फिर दबने लग गयी। कलकत्ते की टीम ने ऐसे ताल-मेल से खेलना प्रारम्भ किया कि बीकानेर के खिलाडियो को गेंद ही नही पकड़ने दी। गेंद पकडने के प्रयास मे कुछ धक्का-मुक्की भी हुई। दो-तीन खिलाडी घायल भी हुए, लेकिन खेल चलता रहा। ज्यो-ज्यो समय बीतता गया, खेल मे तेजी आती गयी और इसी के साथ दर्शको का उत्साह भी बढता गया। कलकत्ते की टीम बार-बार सुनियोजित आक्रमण कर रही थी। आखिर मौका मिल ही गया और कलकत्ते की टीम ने गोल उतार दिया। दर्शको का जोश ठण्डा पड़ गया। अब खेल समाप्त होने मे कुल दस मिनट बाकी थे। बीकानेर की टीम में जोश आया। जल्दी-जल्दी दो-तीन हमले भी किये, किन्तु गोल नही कर सकी। खेल समाप्ति के ठीक तीन मिनट पहले कलकत्ते की टीम को एक अवसर और मिला और उसने गोल कर दिया। अब क्या था, फैसला हो गया। दर्शको का जोश बिलकुल ठडा पड गया। सबके चहरे इस तरह फीके पड गये जैसे खुद ही हार गये हों। निर्णायक ने ह्विशिल बजा दी और मैच समाप्त हो गया।

उपसंहार—खेल मे हार-जीत तो होती ही है, लेकिन जैसा सघर्षपूर्ण मैच वह हुआ और जैसा कलात्मक खेल का प्रदर्शन उस मैच मे मैंने देखा, वैसा फिर कभी देखने का अवसर नहीं मिला। मन पूरी तरह से सन्तुष्ट था। बार-बार यही विचार आता था कि आज यह मैच नही देख पाता तो कितने नुकसान मे रहता। यद्यपि यह मैच मुझे बहुत महँगा पडा। रात स्टेशन पर ही बितानी पडी। जेब खाली हो चुकी थी। भूखे-प्यासे रहकर ही दूसरे दिन दोपहर तक गाँव पहुँच सका, किन्तु इसका मुझे बिलकुल पश्चाताप नहीं हुआ। जिस आनन्द और सन्तोष की उपलब्धि मुझे हुई, उसकी तुलना मे वह हानि और परेशानी नगण्य थी।

यात्रा-वर्णन | 2

निवन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना—नये-नये स्थान देखने की उत्सुकता।

2 रेलयात्रा—यात्रा का सयोग, यात्रा की तैयारी, रेलवे स्टेशन के दृश्य, रेल की भीड-भाड, अन्य सहयात्रियो से मित्रता, यात्रा मार्ग के कटु-मधुर अनुभव।

3 उपसहार

1 प्रस्तावना—मनुष्य जिस स्थान पर रहता है, वह स्थान कितना ही अच्छा हो और कितना ही सुविधाजनक हो, किन्तु एक ही स्थान पर रहते-रहते मनुष्य कुछ ऊब सा जाता है। उसकी यह इच्छा होने लगती है कि कुछ दिन वह अन्य स्थान पर जा कर रहे। नये-नये स्थान देखें और नये-नये लोगो से मिलें। नयी जगह के नाम मे ही एक विचित्र आकर्षण होता है। जब भी मैं अन्य स्थानो के नाम सुनता हूँ और वहाँ जाकर आये लोगा से उस स्थान की प्रशसा सुनता हूँ तो मेरे मन मे भी उस स्थान को देखने की इच्छा प्रबल हो जाती है। यात्रा मे मार्ग के विभिन्न अनुभव और नये स्थान का आकर्षण मुझे घर छोडने को बेचैन कर देता है। यद्यपि मै दो-चार बार अन्य स्थानो पर गया भी हूँ, किन्तु मेरी वे यात्राएँ कोई विशेष महत्त्व नही रखती। क्योकि वे यात्राएँ बरातियो के रूप मे एक निश्चित् समय, निश्चित् स्थान के लिए की गयी थी। मनचाहा साथ, मनचाहा समय और मनचाहे स्थान की यात्रा करने की अभिलाषा इन यात्राओ मे पूरी नही हो सकी थी।

2 विषय प्रवेश—एक कहावत प्रसिद्ध है—'जहाँ चाह वहाँ राह।' यह कहावत मेरे साथ भी चरितार्थ हुई। मेरी वार्षिक परीक्षा समाप्त हो चुकी थी। छुट्टियाँ चल रही थी। दिन-भर मित्रो से गप्पे लडाना और सायकाल खेलना, बस यही दिनचर्या चल रही थी। एक दिन प्रात काल मेरा मित्र रामभजन घर आया और उसने मुझे बताया कि वह अपनी बहिन को लेने आगरा जायेगा। यदि मैं भी उसके साथ आगरा चलूँ तो बडा अच्छा रहेगा। उसका प्रस्ताव सुनते ही मेरी आँखे खिल उठी। मैंने सहज उसके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया, किन्तु अभी माता-पिता से अनुमति लेना शेष था। मैं आशकित भी था कि शायद वे मुझे अनुमति न दें। मैं रामभजन को साथ लेकर ही उनके पास पहुँचा। उसी से प्रस्ताव रख-

वाया। उस दिन मेरी ग्रह दशा अच्छी थी। थोडा सोच-विचार करने के बाद पिताजी ने अनुमति दे दी और फिर माताजी ने भी हाँ कर दी। फिर क्या था, मुँह माँगी मुराद मिल गयी। मैंने रामभजन से स्टेशन पर मिलने का समय निश्चित किया। वह चला गया और मैं यात्रा की तैयारी मे लग गया। कपडे धोने, उन पर प्रेस करने, बाजार से अन्य जरूरी समान खरीदने और सबको व्यवस्थित जमाने में ही मेरा सारा दिन निकल गया। उस दिन मेरी भूख न जाने कहाँ गायब हो गयी। माताजी के बार-बार कहने पर थोडा बहुत खाया। मेरी कल्पना मे यात्रा-मार्ग का आनन्द और आगरा रहने की खुशी ऐसी बस रही थी कि मैं फूला नही समा रहा था। इसी बीच मे एक चक्कर रामभजन के घर का भी लगा आया। गाडी के समय की पुख्ता जानकारी करना मैंने उचित समझा।

मुझे स्टेशन पर शाम को आठ बजे पहुँचाना था। मैं चार बजे से पहले ही पूरी तरह से तैयार होकर बैठ गया। घर पर सबने कहा–'अरे ! अभी से तैयार क्यो हो गया ?' लेकिन मैंने किसी की बात पर ध्यान नही दिया। बार-बार घडी की ओर देखना तो ऐसा लगता जैसे सूइयाँ चल ही नही रही है। समय कट नही रहा था। मैं घर से बाहर आ गया। सोच रहा था कि लोग मुझ से मेरी यात्रा के विषय मे पूछेगे, किन्तु जब किसी ने कुछ नही पूछा तो मैंने स्वयं बतलाया कि आज मे आगरा घूमने जा रहा हूँ। ऐसा कहकर मैंने स्वयं को गौरवान्वित महसूस किया। आखिर घडी मे सात बजे। मैंने अपनी अटैची उठाई, माताजी-पिताजी के चरण स्पर्श किये, आशीर्वाद लिया और रवाना हो गया।

स्टेशन पर जब मैं पहुँचा तो 7·20 का समय हुआ था। रामभजन के आने मे अभी 40 मिनट का समय शेष था। मैं प्लेटफार्म के बाहर ऐसे स्थान पर खडा हो गया जहाँ से आने-जाने वाले सब लोगो पर निगाह रह सके। स्टेशन पर खूब भीड-भाड और चहल-पहल थी। मुझे यह सब देखना बडा अच्छा लग रहा था। इस प्रकार समय बहुत शीघ्रता से बीत गया। मैंने दूर से ही रामभजन और उसके पिताजी को आते देख लिया और उनकी ओर हाथ ऊँचा करके हिलाने लगा। नजदीक आने पर उनकी निगाह मुझ पर पड गयी और वे मेरे पास आ गये। अब हम तीनो प्लेटफार्म पर पहुँच गये। टिकिट तो शहर के बुकिंग आफिस मे दिन मे ही ले लिये थे, इसीलिए अ हम गाडी के आने की प्रतीक्षा करने लगे। प्लेटफार्म का दृश्य मुझे बडा मन-मोहक लग रहा था। लाल वर्दी पहने कुली ढेर सारा समान अपने सिर और हाथो मे लिये इधर-उधर आ-जा रहे थे। उनके पीछे स्त्री, पुरुष और बच्चे अपने सामान की निगरानी रखते हुए चल रहे थे। ठेले और खोमचे वाले विभिन्न प्रकार की आवाजें लगा-लगा कर अपनी चीजें बेच रहे थे। रेलवे के कर्मचारी इधर-उधर आ जा रहे थे। बहुत से लोग पुलिया पर चढ कर दूसरी ओर जा रहे थे। बीच-बीच मे लाउड-स्पीकर से सूचनाएँ प्रसारित हो रही थी। हमारी

गाडी तो अभी आनी थी, किन्तु दूसरे प्लेटफार्मों पर अनेक गाडियाँ खडी थी, जिनके इंजिन की सीटी और धुएँ से आकाश भर रहा था। यह सब देखते हुए हम तीनों एक स्थान पर खडे गाडी की प्रतीक्षा कर रहे थे।

कुछ देर बाद ही प्लेटफार्म पर यकायक हलचल मच गयी। 'गाडी आ गयी ! गाडी आ गयी !' की आवाज लगाते हुए कुली और यात्री इधर-उधर दौडने लगे। सब लोग सतर्क हो गये। कुछ ही क्षणों में धड-धड करती गाडी हमारे सामने से गुजरने लगी। गाडी रुक नहीं पायी इससे पहले ही लोग लपक-लपक कर लटकने लगे। मैंने भी रामभजन से कहा कि अपन भी लपक कर चढ जाएँ, लेकिन पिताजी ने मना कर दिया। गाडी के रुकते ही हम भी चढने का प्रयास करने लगे। हम चढ भी गये, लेकिन चढने पर पता चला कि वह तो प्रथम श्रेणी का डिब्बा था जल्दीबाजी में हमें होश ही नहीं रहा। उसमें से उतरकर द्वितीय श्रेणी के डिब्बों की तरफ बढे। हर डिब्बे के दरवाजों और खिडकियों पर ऐसी धक्का मुक्की हो रही थी कि हम चढने का उपाय सोच ही नहीं पा रहे थे। पिताजी ने समझाया—"इस तरह खडे-खडे देखने से गाडी में जगह नहीं मिलेगी। सामान मुझे दो और दोनों एक खिडकी में होकर गाडी में चढ जाओ।" हमने ऐसा ही किया। खूब धक्का-मुक्की और जोर जबर्दस्ती के बाद हम दोनों गाडी के भीतर पाँव रख सके। पिताजी ने सामान सम्हलाया। हमने किसी तरह उसे अपने पाँवों के पास ही रख लिया। थोडी ही देर बाद गाडी चल दी। पिताजी ने हाथ हिलाकर 'टाटा' किया।

गाडी चलने पर हमने डिब्बे के अन्दर निगाह घुमाई। पूरा डिब्बा खचाखच भरा था। हम जिस स्थान पर खडे थे, वहाँ भी हिलने तक की जगह नहीं थी। सारा बदन पसीनों से लथ-पथ हो रहा था। प्यास के मारे गला सूख रहा था, लेकिन कोई उपाय नहीं था। कुछ देर बाद ध्यान आया कि मेरी बुशर्ट पीछे से बुरी तरह फट गयी थी और रामभजन की पैण्ट घुटने पर से फट गयी थी। इस बात पर हम दोनों ही हँसे। अब हम बैठकर यात्रा का आनन्द लेना चाहते थे, किन्तु बैठना तो दूर अपनी जगह से हम हिल भी नहीं सकते थे। गाडी तेज रफ्तार से दौड रही थी। हमने उसी प्रकार खडे-खडे ही यात्रा का आनन्द लेना प्रारम्भ किया। तेज हवा के झोंकों ने हमारे पसीने सुखा दिये थे। यद्यपि रात्रि का समय था, किन्तु गाडी जब किसी पुलिया पर से गुजरती या घने जंगलों के पास से गुजरती तो हमें बडा आनन्द मिलता था। हम आगरा घूमने की योजनाएँ बनाते हुए खूब प्रसन्न हो रहे थे। इसी बीच डिब्बे में एक औरत और एक पुरुष की आवाज में गाली-गलौच कहा-सुनी सुनाई दी। बात और बढ गई। कहा-सुनी लडाई-झगडे में बदल गयी। चप्पल घूँसा और खूब खींचतान हुई। काफी देर बाद लोगों के बीच-बचाव करने पर मामला शान्त हुआ। शान्ति होने पर झगडे का कारण ज्ञात हुआ। एक औरत अपने छोटे बच्चे को सीट पर लिटाना चाहती थी। उसने एक नौजवान

में खड़े हो जाने के लिए कहा। उसने उस औरत से यह कह कर खड़ा होने से मना कर दिया कि जब तुम इतने बच्चों को सम्हाल नहीं सकतीं तो इतने बच्चे पैदा ही क्यों किये ? उसके सात बच्चे थे। इसी बात पर कहासुनी होकर झगड़ा बढ़ गया था। सब लोग सुनकर हँस रहे थे। कोई कुछ और कोई कुछ कह रहा था। इसी प्रकार सुख-दुःख की मिली-जुली अनुभूति करते हुए हम यात्रा का आनन्द ले रहे थे। आखिर दौसा का स्टेशन आया। हमारे पास ही बैठे यात्री वहाँ उतर गये। हमें आराम से बैठने को जगह मिल गई। अब हमें यात्रा का असली आनन्द आने लगा। हमारे सामने की सीट पर 6-7 विद्यार्थी ही बैठे थे जो अजमेर से आगरा देखने जा रहे थे। उनसे हमारा परिचय हुआ और देखते-देखते हम घनिष्ठ मित्र बन गये। उनमें एक विद्यार्थी गायन-कला में प्रवीण था। उसने गाना प्रारम्भ किया। आवाज बहुत मधुर और सुरीली थी। ठण्डी रात, शान्त वातावरण, गाड़ी की टक-टक ताल, दिलों में मस्ती और सुरीली आवाज। ऐसा लग रहा था जैसे स्वर्गीय आनन्द मिल रहा हो। हँसी मजाक, चुटकले और गाने इन सब में खो जाने पर न तो हमें रातभर नींद ही आयी और न ही समय गुजरता प्रतीत हुआ। प्रातःकाल हो गया और हम आगरा पहुँच गये। हमें लेने के लिए रामभजन के जीजाजी स्टेशन पर पहले ही खड़े थे। सामान उतारा, रेल के मित्रों से विदा ली दूसरे दिन सायंकाल ताजमहल पर मिलने का वायदा किया और हम रवाना हो गये।

रामभजन को जीजी के ससुराल वाले काफी समृद्ध व्यक्ति थे। आगरा में रहने और दर्शनीय स्थानों को देखने में हमें कोई असुविधा नहीं हुई। इसी प्रकार मौज-मस्ती में दस दिन गुजर गये। अब हमें घर की याद सताने लगी। कई बार कहने पर उन्होंने हमें विदा किया। लौटते समय हमारी यात्रा बहुत सुविधाजनक रही और हम जीजी को लेकर सकुशल जयपुर पहुँच गये।

उपसंहार—नवीनता की बात ही निराली होती है। यह नवीनता चाहे किसी वस्तु की हो, स्थान की हो अथवा अनुभव की। वह स्थान और यात्रा मेरे लिए एक नया अनुभव था। उसके बाद मैं अनेक बार अनेक स्थानों की यात्रा कर चुका हूँ। अनेक प्रकार के अच्छे-बुरे अनुभव भी हुए हैं, किन्तु मेरी रामभजन के साथ वह आगरा की यात्रा अपना विशेष महत्त्व रखती है। आज भी मैं उसकी याद आने पर आनन्दित हो जाता हूँ।

□□□

किसी ऐतिहासिक स्थान की यात्रा | 3

ताजमहल

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. यात्रा की उत्सुकता—यात्रा का संयोग
3. यात्रा की तैयारी
4. यात्रा मार्ग के अनुभव
5. ताजमहल की ऐतिहासिकता तथा कलात्मकता की जानकारी करना
6. चाँदनी रात में ताजमहल की शोभा
7. उपसंहार

प्रस्तावना—कभी-कभी ऐसा होता है कि मनुष्य के बार-बार चाहने और इच्छा करते रहने पर भी इच्छा-पूर्ति का कोई अवसर प्राप्त नहीं होता और कभी-कभी ऐसा भी हो जाता है कि बिना विशेष प्रयास किये ही मनुष्य की इच्छा पूरी हो जाती है। उसे वे सब लाभ अनायास ही प्राप्त हो जाते हैं जिनको प्राप्त करना वह अत्यन्त कठिन मानता रहता है। यद्यपि ऐसे अवसर जीवन में कम ही आते हैं और विरले ही भाग्यशाली लोग ऐसे होते हैं जिसकी चिर-संचित अभिलाषाएँ अनायास ही पूर्ण हो जाती हैं। इस दृष्टि से मैं अपने आपको भाग्यशाली ही मानता हूँ। जब मैं सातवीं कक्षा में पढ़ता था तब एक दिन हिन्दी के अध्यापक जी ने कक्षा में 'ताजमहल' का पाठ पढ़ाया था। उन्होंने ताजमहल का ऐसा सजीव वर्णन किया था कि उसी दिन से मेरी इच्छा ताजमहल देखने की हो रही थी, पर कर क्या सकता था? इसके बाद जब भी किसी पत्र-पत्रिका में ताजमहल के विषय में पढ़ता और उसके सुन्दर चित्र देखता तो मेरे मन में 'ताज' को देखने की इच्छा और भी प्रबल हो जाती, किन्तु इच्छा-पूर्ति का कोई अवसर गत पाँच वर्षों में प्राप्त नहीं हो सका। पिछले दिनों यह सुअवसर मुझे अनायास ही प्राप्त हो गया। कुछ दिनों पहले एक सज्जन हमारे पड़ौस में आकर रहने लगे हैं। उनके छोटे लड़के से मेरी घनिष्ठ मित्रता हो गयी है। उनके बड़े लड़के की शादी आगरा में तय हुई और मुझे बरात में चलने का निमंत्रण मिल गया।

विषय-प्रवेश—जब मुझे राजेश ने शादी का कार्ड दिया और बरात में चलने का पूरा-पूरा आग्रह किया तो मैं कितना प्रसन्न हुआ हूँगा, इसकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते, किन्तु मैंने उस प्रसन्नता को प्रकट नहीं किया और ऊपरी मन से ही पिताजी से आज्ञा लेने की बात कही। राकेश तो मुझे अपना परम मित्र मानता था। उसने पिताजी से भी विनम्र शब्दों में मुझे बरात में भेजने का आग्रह किया और उन्होंने मुझे स्वीकृति दे दी। बरात तीन दिन बाद एक बस से रवाना होने वाली थी। मैं उसी दिन से अपनी तैयारी में लग गया। अन्य वस्तुओं के साथ मैंने एक अच्छा कैमरा भी रील भरवाकर अटैची में रख लिया जो एक अन्य मित्र से माँग कर लाया था।

बरात की बस रात्रि के 10 बजे रवाना हुयी। गर्मी का मौसम था। चतुर्दशी का दिन था, इसलिए आकाश में चाँद निकल आया था। कैसा विचित्र संयोग था कि ठीक पूर्णिमा के दिन मैं आगरा पहुँचने वाला था। मैंने पढा था और कुछ लोगों से सुन भी चुका था कि पूर्णिमा की चाँदनी रात में ताजमहल की शोभा बहुत निराली होती है। वह निराली शोभा देखने की चाह लिये मैं बस की यात्रा का आनन्द ले रहा था। मैं और राकेश दोनों एक ही सीट पर बैठे थे। बस में टेपरिकार्डर बज रहा था। उसकी धुन में सब लोग मग्न हो रहे थे। बस में कुछ बुजुर्ग लोग भी थे जो बदले हुए जमाने के हाल-चाल की चर्चा करते हुए नाक-भौंह सिकोड़ रहे थे और बीते जमाने की प्रशंसा करते थकते नहीं थे। दूल्हा अपनी मित्र-मण्डली के साथ बैठा हँसी के कहकहों में डूब रहा था। कुछ लोग ताश खेलने में व्यस्त थे। बस अपनी रफ्तार से सरपट दौड़ती हुई चली जा रही थी। ऐसी मस्ती और आनन्द के महौल में भी कुछ लोग ऐसे थे जो ऊँघ रहे थे और उस अवस्था में कभी दाँयें और कभी-बाँयें अपनी देह को लुढ़काकर खरी-खोटी सुनते हुए भी नींद निकालने में ही अपनी होशियारी समझ रहे थे।

जयपुर से रवाना होने के बाद बस बीच में दो स्थानों पर रुकी। सब लोग उतरे। चाय नाश्ता किया। आसमान बिलकुल साफ था, शीतल चाँदनी छिटक रही थी और वातावरण में काफी ठंडक आ चुकी थी। इस रात नींद तो आँखों के आस-पास भी नहीं आ पा रही थी। इसी प्रकार हँसते-गाते हम लोग प्रातः 7 00 बजे आगरा पहुँच गये। बस सीधे होटल के बाहर जाकर रुकी। सब लोग अपनी-अपनी टोलियों में होटल में जम गये। नित्य-कर्म स्नान आदि से निवृत्त हुए, नाश्ता किया और ऐतिहासिक नगर आगरा के भ्रमण पर निकल पड़े। बुजुर्ग लोग और कुछ अन्य लोग होटल में ही रुके रहे। करीब दो घंटे तक आगरा की सड़कों पर घूमने के बाद धूप बढ़ जाने पर हम लोग पुनः होटल में पहुँच गये, वहाँ भोजन तैयार था। भोजन करके सब लोग विश्राम करने लगे। मेरा मन विश्राम में नहीं लगा। मैंने दो नये मित्रों

को तैयार किया और बरात के समय से पहले ही लौट आने का वायदा करके हम तीनो ताजमहल के लिए रवाना हो गये।

होटल से निकलते ही ताँगा मिल गया। हम तीनो ताँगे मे बैठकर ताज-महल के मार्ग पर चल पड़े। ताँगे वाला यद्यपि एक बुजुर्ग मुसलमान था, लेकिन बड़ी मस्त तबियत का आदमी था। वह हमसे ऐसी दिलचस्प बाते करता हुआ ताँगा दौडा रहा था कि हमे वह ताँगे की यात्रा बडी अच्छी लग रही थी। टेढी-तिरछी घुमावदार सड़को पर घोड़ा मध्यम-गति से दौड रहा था। यकायक पेडो की ओट से ताजमहल का गुम्बज दिखाई देने लगा। यद्यपि ताज हमसे काफी दूर था, लेकिन नीले आकाश के नीचे सफेद अण्डाकार ताजमहल सूरज की धूप मे भी चमकता हुआ बहुत अच्छा लग रहा था। करीब आधे घटे मे हम ताजमहल के मुख्य द्वार पर पहुँच गये। द्वार पर अनेक वाहन खड़े थे और काफी सख्या मे देशी विदेशी पर्यटक दिखाई दिये। ताँगे से उतरते ही हमारे पास अनेक गाइड आ गये। हम मे से किसी ने भी ताजमहल पहले नही देखा था, इसलिए हमने एक गाइड को साथ ले लेना उचित समझा। अब हम गाइड के पीछे-पीछे ताजमहल के द्वार की ओर बढ़ने लगे। मैंने कैमरा तैयार कर के गले मे लटका लिया था। सहसा हम एक विशाल दरवाजे के सामने जाकर रुके। उस द्वार की विशालता तथा सुन्दरता इस बात का सकेत कर रही थी कि भीतर एक अत्यन्त सुन्दर और अनुपम कलाकृति सुरक्षित है। द्वार के भीतर घुसते ही बीच मे पत्थरो की लम्बी कतार और उनके दोनो ओर सुन्दर उद्यान दिखायी पड़ने लगे। हरे-भरे वृक्षो को ऐसे कलात्मक ढग से सवारा गया था कि उनकी शोभा देखते ही बनती थी। जहाँ तक नजर जाती थी, दोनो ओर हरियाली ही हरियाली नजर आती थी। साफ-सुथरी हरी-भरी कोमल दूब पर अनेक यात्री बैठे आनन्द ले रहे थे। मैंने कैमरे को खोला और तीन चार चित्र उस दृश्य के ले डाले। सामने ताजमहल का ऊँचा गुम्बज अपनी निराली शान लिए खडा था, जो बरबस सब का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर रहा था। धीरे धीरे चलत हुए हम एक विशाल और ऊँचे चबूतरे के नीचे पहुँच गये। इसी चबूतरे पर ताजमहल का भव्य भवन स्थित है जो सदियो से अपने अमर-प्रेम की कहानी सुनाता आ रहा है। चबूतरे के बीचो-बीच ताजमहल बना हुआ है और चारो कोनो पर ऊँची मीनारें बनी हुई है जो ताज की शोभा बढाने के साथ-साथ मुगल साम्राज्य की गौरव-गाथा भी सुनाती है। हमे अपने जूते, बैल्ट और कैमरा चबूतरे के नीचे ही छोडने पडे। सीढियाँ चढ़ कर हम चबूतरे पर पहुँचे तो मन के अह्लाद और शान्ति का पार नही था। एक दम शान्त वातावरण था वहाँ का। कुछ देर तक हम वही पर खड़े रहे। फिर गाइड के साथ हम ताजमहल के भीतर प्रविष्ट हुए। वहाँ मुमताज महल की कब्र पर सगमरमर की एक चौडी वेदी बनी

हुई है, जिस पर कुरान की आयतें लिखी हैं। उसके पास ही शाहजहाँ की कब्र है। इन दोनों कब्रों को देखकर ऐसा लगता है जैसे दोनों प्रेमियों ने जन्म-जन्मान्तरों तक साथ रहने की कसम खाई है। काल सबको अपने घेरे में लपेट लेता है, किन्तु मनुष्य अपने जीवन में कुछ ऐसे काम कर गुजरता है जिससे वह अपनी याद चिर-स्थायी बना देता है। अपनी प्रियतमा मुमताज महल के अनिन्द्य सौन्दर्य और प्रगाढ़ प्रेम के प्रतीक के रूप में ताजमहल का निर्माण करवा के शाहजहाँ ने उसकी याद को सदा-सदा के लिए अमर बना दिया है। स्वच्छ एवं सफेद संगमरमर से निर्मित ताज की दीवारों और स्तम्भों पर रंगीन पत्थरों के टुकड़ों से पच्चीकारी करके बनाये गये बेल-बूटे दर्शकों को आश्चर्य में डाल देते हैं। स्थापत्य कला का ऐसा उत्कृष्ट नमूना संसार में अन्यत्र मिलना कठिन है। इसीलिए संसार के सात आश्चर्यों में ताजमहल की गणना की जाती है। कब्र के ऊपर वाला कक्ष कलात्मक सौन्दर्य की दृष्टि से और भी श्रेष्ठ है। गाइड ने बताया कि इस कक्ष के चारों ओर शाहजहाँ ने सोने की सुन्दर जालियाँ भी लगायी थीं, जो बाद में हटाली गयीं। ताज को चारों ओर से देखने के बाद हम लोग पीछे की ओर गये जहाँ यमुना नदी किलोलें करती हुई बह रही थी। वह दृश्य भी बहुत मन-मोहक था। मैंने एक लेख में जब यह पढ़ा था कि ताजमहल के निर्माण में बीस वर्ष का समय लगा था, जिसमें 22 हजार कारीगर और श्रमिक दिन-रात कार्य करते थे और लगभग तीस करोड़ रुपया खर्च हुआ था, तो मुझे यकायक विश्वास नहीं हुआ था, किन्तु उस दिन उस रचना को प्रत्यक्ष देखकर लेख की सत्यता पर विश्वास हो गया।

होटल पर पहुँचने की जल्दी थी, इसलिए हम तीनों वहाँ से रवाना हो गये। ताँगे में बैठकर लौटते समय हम ताज-दर्शन की प्रसन्नता से गद्-गद् हो रहे थे। हमने मार्ग में ही यह निश्चय कर लिया कि बरात के धूम-धड़ाके से निवृत होकर चाँदनी रात में एक बार ताज को देखने पुनः आयेंगे।

हम जब होटल पर पहुँचे तो बराती सज रहे थे और बरात की तैयारियाँ हो रही थी। हम भी कुछ ही देर में नहा-धोकर, तथा कपड़े बदल कर तैयार हो गये। खूब धूम-धाम से बरात गयी। नाच-गान और हँसी-दिल्लगी चलती रही। बरात का बहुत अच्छा स्वागत हुआ। प्रीति-भोज में नाना प्रकार के व्यंजन परोसे गये। इन सब कार्यों से निपटकर करीब रात के ग्यारह बजे हम एक टैक्सी लेकर पुनः ताजमहल पहुँच गये। इस बार राकेश भी हमारे साथ था। हम द्वार के भीतर प्रवेश करके एक ओर लान पर बैठ गये। स्वच्छ नीले आकाश में पूर्णिमा का चाँद चमक रहा था। जिसकी किरणों से ताज चमक रहा था। उस समय उसकी शोभा देखते ही बनती थी। उस शोभा का ठीक-ठीक वर्णन कर पाना मेरी सामर्थ्य से परे है। ताज का प्रतिबिम्ब पड़ रहा था जो लहरों के साथ हिलता नजर आता था। वातावरण एक दम शान्त था।

देश-विदेश के हजारों पर्यटक इस रमणीय दृश्य को देखकर आनन्दित हो रहे थे। हमारी वहाँ से चलने की इच्छा ही नहीं हो रही थी, किन्तु मिलन के साथ वियोग तो जुडा ही रहता है। हम लोग होटल पर लौट आये। दूसरे दिन प्रातःकाल विदा होकर सायंकाल बरात जयपुर पहुँच गयी।

उपसंहार—मुझे राकेश की मित्रता, उसके भाई की शादी और ऐतिहासिक नगर आगरा की वह यात्रा जीवनभर अत्यन्त मधुर स्मृतियों के साथ याद रहेगी। ताजमहल वास्तव में एक ऐसी अनुपम कलाकृति है जिसे आश्चर्य के अतिरिक्त अन्य कोई नाम नहीं दिया जा सकता। इसमें कलाकारों की कला पर तो आश्चर्य होता ही है साथ ही शाहजहाँ की सूझ-बूझ पर भी आश्चर्य होता है जिसने अपनी प्रियतमा की याद को अमर बना देने के लिए ऐसी अद्भुत योजना बनायी और उसको क्रियान्वित करने के लिए क्या कुछ नहीं किया। ताज हमारे देश और देश की संस्कृति का एक गौरव है जो तीन सौ वर्ष बीत जाने पर भी अपनी गौरव-गाथा संसार को सुनाकर आश्चर्य में डाल देता है।

4 | किसी रमणीक स्थान की यात्रा

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—नये और रमणीक स्थानों की यात्रा की उत्सुकता
2. रमणीक स्थान की यात्रा—स्थान का चयन, बस यात्रा के कटु अनुभव, रमणीक स्थान की प्राकृतिक शोभा, मन की उमग और आनन्द
3. उपसंहार

प्रस्तावना—मनुष्य का मन नवीनताप्रिय होता है। उसे नये स्थान, नये लोग और नयी परिस्थितियों में रहना रुचिकर प्रतीत होता है। इस नवीनता की चाह मे अनेक बार उसे अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पड़ते हैं और असुविधाएँ भी भोगनी पड जाती हैं, किन्तु अपने जीवन की बँधी-बँधायी दिनचर्या की ऊब को मिटाने की उत्सुकता मे वह यह सब कुछ सहर्ष सहन कर लेता है। तीर्थ स्थानों, दर्शनीय स्थानों तथा अन्य रमणीक स्थानों की यात्रा करने का उद्देश्य मेरे विचार मे यही प्रमुख होता है। जिन लोगों ने इस प्रकार की यात्राएँ की हैं, वे जानते हैं कि उन्हें कितना खर्चा करना पड़ा है और कितनी असुविधाएँ भोगनी पड़ी हैं, किन्तु यात्रा के दौरान और यात्रा से लौटने के बाद उन्होंने स्वय को काफी प्रसन्न और हल्का महसूस किया है। किसी प्रकार के पश्चाताप का भाव मन मे नही उठा होगा और इस प्रकार की यात्राएँ बार-बार करने की इच्छा प्रबल हुई होगी।

विषय-प्रवेश—अगस्त का महीना लग गया था। गत एक मास मे जयपुर और जयपुर के आस-पास काफी वर्षा हो चुकी थी। पहाड़ो और जगलों मे खूब हरियाली छा गई थी तथा छोटे-बड़े सभी ताल-तलैयों मे पानी भर गया था। पहाड़ी स्थानों तथा अन्य प्राकृतिक स्थानो की सैर करने के लिए उपयुक्त समय आ गया था। जयपुर और जयपुर के आस-पास के प्राय सभी स्थान हम अनेक बार देख चुके हैं, इसलिए हमारी सैलानी मित्र-मण्डली ने निश्चित किया कि इस बार किसी नये स्थान की ही यात्रा करेंगे, भले ही वह दूर ही हो। हमने इस सम्बन्ध मे अनेक लोगो से पूछताछ की। अनेक लोगो ने अनेक स्थानों के नाम बतलाये। आखिर हमने जयपुर-अजीतगढ मार्ग पर स्थित परमानन्द जी की समाधि पर जाने का निश्चय कर लिया। हम सब के लिए यह स्थान नया था और बतलाने वाले ने इस स्थान की रमणीयता की खूब प्रशसा की थी।

शनिवार के दिन दोपहर बाद हम अपना जरूरी सामान लेकर रवाना हो गये। जयपुर से अजीतगढ़ जाने वाली बस मे हम बैठ गये। बस एक प्राइवेट कम्पनी की थी जिसमे भीड बहुत थी। यात्रियों मे अधिकाश लोग देहाती किसान थे जो उस भीड मे भी चिलम पीना जरूरी समझते थे। चिलम से निकलने वाला धुँआ बस के अन्य यात्रियो का दम सा घोटे जा रहा था। इस प्रकरण को लेकर बस मे खूब चख-चख भी होती रही, लेकिन बस भी चलती रही और चिलम भी। बस अपने गन्तव्य स्थान की ओर ज्यो-ज्यो आगे बढती गयी, उसमे भीड भी बढती गयी। कुछ ही देर मे बस की छत भी खचाखच भर गयी। बस मे यात्रियो की अत्यधिक भीड होना कोई आश्चर्य की बात नही थी। आश्चर्य की बात तो यह थी कि पाँव रखने तक की जगह न होने पर भी बस ड्राइवर किसी के हाथ दिखाने ही बस को रोक देता था और कण्डक्टर उस सवारी को धक्के लगा लगाकर बस मे चढा लेता था। भीड मे भिचकर बच्चो, औरतो और बूढो का बुरा हाल था। वे सब चिल्ला-चिल्ला कर बस वाले को गालियाँ भी खूब दे रहे थे, लेकिन बस वाले इन सब बातो से बेखबर होकर अपनी स्वार्थ-सिद्धि मे लगे थे। उस बस मे घोर यातना सहते हुए हम तीन बजे शिवसिंहपुरा बस स्टैंड पर पहुँचे और वही उतर गये। वहाँ कुछ देर विश्राम किया, चाय पी और चाय वाले से मार्ग की पूरी जानकारी करके हम परमानन्द जी की समाधि की ओर चल पडे।

आकाश मे बादल छाये हुए थे। ऊमस तो थी, लेकिन मौसम बहुत सुहावना लग रहा था। हम टहलते हुए खेतो के बीच मे बनी पगडडियो पर चल रहे थे, चारो तरफ हरियाली ही हरियाली छायी हुई थी। खेतो से ज्वार-बाजरे के पौधे तो अभी छोटे ही थे, किन्तु घास खूब लम्बी हो रही थी। प्रात काल ही खूब पानी गिरा प्रतीत होता था, क्योकि स्थान स्थान पर पानी भरा था और जमीन से सौंधी गंध निकल रही थी। दूर दूर तक फैले खेतो मे किसान और उनकी स्त्रियाँ काम कर रही थीं। कोई मनचला हमे देखकर फब्ती कस देता था तो कोई मल्हार की तान छेड देता था। हमे यह सब बहुत अच्छा लग रहा था। करीब तीन मील का यह सुहाना सफर तय करने के बाद हम परमानन्द जी की समाधि पर पहुँच गये।

एक छोटी सी पहाडी घाटी से उतरकर जब हम उस स्थान के करीब पहुँचे तो दूर से ही उसकी शोभा देखकर हमारा चित्त प्रसन्न हो गया। घाटी समाप्त होते ही हमे एक छोटा सा कुण्ड दिखलायी दिया, जिसमे से पानी उछलकर बह रहा था। उस कुण्ड के ऊपर ही एक छोटा सा शिवालय था और उसी के पास एक तिबारा बना हुआ था। हमने वही रुकने का निश्चय किया और तिबारे मे चले गये। पहाडी घाटी का मुहाना होने के कारण वहाँ हवा खूब चल रही थी। कुछ ही क्षणो मे हमारे पसीने सूख गये। हम कुण्ड पर आये। हाथ-पाँव धोये और पानी पिया। उस कुण्ड का जल इतना ठडा और स्वच्छ था कि उसकी तुलना किसी अन्य

जलाशय के पानी से नही की जा सकती। पानी पी कर हम पुनः तिबारे में चले गये। अब हम स्वस्थ होकर प्रकृति की छटा को निहारने लगे। हम जिस स्थान पर बैठे थे, उसके नीचे स्वच्छ जल का कुण्ड हिलोरें ले रहा था, कल-कल करती पानी की धारा अनवरत रूप से बह रही थी। सामने ऊँचा पहाड़ था जो घनी हरियाली से ढका था। घाटी में अनेक बड़े-बड़े वृक्ष और पौधे थे जिनमें रंग-बिरंगे पुष्प खिल रहे थे। सध्या होने ही वाली थी। आश्रम की गायें जंगल से लौट रही थी। पास ही बनी गौशाला में से बछड़ो की आवाजें आ रही थी। एक दो साधुवेशधारी लोग गायो की अगवानी में खड़े नजर आ रहे थे। चारों ओर पूर्ण शान्ति और निस्तब्धता व्याप्त हो रही थी। हम इस चित्ताकर्षक रमणीय दृश्य की ओर देख-देख कर कृतकृत्य हो रहे थे। इस स्थान का सुझाव देने वाले अपने मित्रों के प्रति आभार व्यक्त कर रहे थे।

कुछ देर दृश्य-दर्शन में खोये रहने के बाद हम आश्रम में गये। बाँयी ओर एक बड़ा सा मंदिर था। हम मदिर में गये। राम और सीता की मूर्ति के दर्शन किये। पास ही हनुमान जी की मूर्ति थी। उनके भी दर्शन किये और फिर मदिर के सामने वाले बगीचे में चले गये। बगीचे की शोभा बहुत ही निराली थी। आम, जामुन, नीम और पीपल के अनेक बड़े-बड़े सघन वृक्ष थे। आश्रम के द्वार पर और आश्रम की चाहरदीवारी पर पुष्पों से लदी अनेक प्रकार की लताएँ झूल रही थी। बगीचे में बनी क्यारियो में गुलाब, कनेर, रातरानी, गैंदे के पौधे फूलो से लदे नजर आ रहे थे। केवड़े के सिरो से निकलने वाली मीठी महक मन को और भी प्रफुल्लित कर रही थी। उसी समय सध्या ने अपना शृंगार किया। सारा दृश्य एक अलौकिक रक्तिम प्रकाश से रंग गया। उस समय मुझे कबीर का यह दोहा याद आया—

'लाली तेरे लाल की जित देखूँ तित लाल
लाली देखन में गयी तो मैं भी हो गयी लाल'

कुछ ही क्षणों में वह लालिमा अदृश्य हो गयी और अंधकार की कालिमा धीरे-धीरे उतरने लगी। हम लोग बगीचे के बीचों-बीच परमानन्द जी की समाधि पर गये। एक छोटे से गुम्बज से संगमरमर की शिला पर दो चरण-चिह्न दिखलाई दिये। ये चिह्न उन्ही सन्त के चरणों के बतलाये जाते हैं। हमने उन्हें माथा नवाया और मदिर की ओर लौट पड़े। उस समय सध्या की आरती प्रारम्भ हो गयी थी। हम आरती में शामिल हुए। पुजारी बाबा ने हमें प्रसाद दिया और हमारा परिचय पूछकर वहाँ आने का प्रयोजन पूछा। हमने जब अपनी बात कही तो वे बड़े प्रसन्न हुए और हमें रात्रि का विश्राम मंदिर में ही करने की सलाह दी। हमने उनकी सलाह मान ली। हमने कुछ देर बाद भोजन किया और लालटेन के मद्धिम प्रकाश में बैठकर बाबा से बातें करने लगे। आसमान में घटा घिर आयी और वर्षा प्रारम्भ हो गयी। उस रिमझिम और कल-कल की आवाज में अपनी

आवाज दबती देखकर हम कुछ जोर-जोर से बोलने लगे। बाबा ने बतलाया कि जिस कुण्ड को हम देख चुके हैं, इसे यहाँ के लोग गुप्त गंगा के नाम से पुकारते हैं। कोई नही जानता कि इसमें पानी कहाँ से आता है। यह पानी बारहा महीने इसी तरह आता रहता है। इस कुण्ड मे स्नान करने वाले के शरीर के सभी रोग नष्ट हो जाते हैं, ऐसी इसकी मान्यता है। समाधि के विषय में बाबा ने बतलाया कि इस समाधि पर माथा नवाकर व्यक्ति जो भी मनोकामना करता है वह अवश्य पूरी होजाती है। इसी प्रकार की बातें करते-करते बाबा सो गये। वर्षा और भी तेज हो गयी बीच-बीच में तेज हवा के झोंकों से पानी की फुहारें हमारी ओर आ रही थी। हम थोड़े और ऊपर खिसक गये। हमारी भी आँखें घुलने लगी थी। हम सो गये।

प्रातःकाल आँख खुली तो सूर्य का प्रकाश फैल चुका था। वातावरण में बहुत नमी थी। सब कुछ भीगा-भीगा दिखाई दे रहा था। बाहर निकलकर बगीचे की ओर देखा तो उसकी इस समय और ही शोभा थी। कोयल की कूक बार-बार मन में हिलोरें उठा रही थी और मोर की आवाज बादलों को पृथ्वी के नजदीक आने को बाध्य कर रही थी। वहाँ की शोभा प्रतिक्षण बदलती दिखाई दे रही थी जो उसकी रमणीयता का प्रमाण था, क्योंकि रमणीयता का अर्थ ही यही है जो प्रतिक्षण नवीन रूप में दिखाई दे उस रूप को ही रमणीय कहा जाता है—

'क्षणे क्षणे यन्नवता मुपैति
तदेव रूप रमणीयतायाः'

बहुत देर तक इस रमणीय दृश्य को देख चुकने के बाद हम नित्यकर्म से निवृत हुए। कुण्ड में स्नान किया तो तन और मन दोनों ही शीतल हो गये। बगीचे में बैठकर नाश्ता किया। फिर समाधि पर माथा नवाया। मंदिर में सीताराम जी के दर्शन किये। बाबा को नमस्कार किया और प्रकृति की अनुपम छटा को निहारते हुए लगभग बारह बजे लौट पड़े।

उपसंहार—लौट तो हम रहे थे, लेकिन लौटने की इच्छा नहीं हो रही थी। जी करता था कि सदा-सदा के लिए ही उस स्थान पर रहा जाय, किन्तु मन की इस अभिलाषा की व्यर्थता को शायद मस्तिष्क भली प्रकार जानता था। इसलिए पाँव अपने आप आगे की ओर पड़ते जा रहे थे। मन भी अपनी मजबूरी को जानता था। इसलिए वह यह सोच-सोच कर ही सन्तोष कर रहा था कि उसने पिछले बीस घंटों में ऐसे रमणीक दृश्यों में अपने आपको रमाया था कि उसकी स्मृतियाँ चिर-स्थायी रहेंगी। मन और मस्तिष्क की बात तो वे ही जानें, हम तो यह सोचकर पूर्ण आश्वस्त थे कि हमारी यह यात्रा सभी दृष्टियों से पूर्ण सफल रही है।

□□□

5 चाँदनी रात में नौका-विहार

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—प्राकृतिक दृश्यों के प्रति मन का आकर्षण
2. नौका-विहार का आनन्द—स्थान का चयन, कार्य-क्रम बनाना, नौका-विहार करना, रमणीक दृश्यों का वर्णन, संगीत का आनन्द
3. उपसंहार

प्रस्तावना—प्रकृति को हम अनेक रूपों में देखते हैं। सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी आकाश, तारे, पहाड़, वृक्ष और नदियाँ। इन सब रूपों में प्रकृतिसृष्टि का पालन-पोषण करती है। मनुष्य की यह विशेषता है कि वह इस बाह्य प्रकृति से अपनी अन्तः प्रकृति का तादात्म्य स्थापित कर लेता है। उसकी प्रसन्नता के क्षणों में उसे चाँद-तारे हँसते हुए नजर आते हैं और नदियाँ मधुर-संगीत सुनाती प्रतीत होती हैं। इसके विपरीत उसकी शोकावस्था में चाँद की किरणें उसे जलाती हैं और नदी की धारा फुफकारती हुई नागिन सी प्रतीत होती है। वास्तविकता यह है कि बाह्य प्रकृति सदा-सर्वदा एक रूप ही बनी रहती है। मनुष्य अपनी अन्त प्रकृति के अनुरूप ही उसे परिवर्तित होते देखने की कल्पना कर लेता है। मुझे प्रकृति से बहुत प्रेम है। मैं उसे उसके सभी रूपों में सुन्दर, रमणीय और आनन्ददायक ही पाता हूँ।

विषय-प्रवेश—मेरा स्वभाव सैलानी किस्म का है। प्राकृतिक स्थानों की यात्रा करने का मुझे शौक है। प्रकृति को विभिन्न रूपों में देखकर मुझे विशेष आनन्द की अनुभूति होती है। उस दिन सायंकाल जब मित्र-मंडली में शरद-पूर्णिमा के दिन कोई विशेष आयोजन की चर्चा चली तो मैंने प्रस्ताव किया कि इस बार तो किसी ऐसे स्थान पर चला जाय जहाँ चाँदनी रात में नौका-विहार का आनन्द लिया जा सके। मेरा प्रस्ताव तत्काल सर्व-सम्मति से स्वीकार कर लिया गया और शरद-पूर्णिमा के दिन रामगढ़ झील में नौका-विहार का कार्यक्रम निश्चित हो गया। शरद-पूर्णिमा के दिन रविवार था। हमने होस्टल वार्डन से स्वीकृति ली और हम ग्यारह विद्यार्थी एक जीप में बैठकर सायंकाल 5.00 बजे जयपुर से रामगढ़ के लिए रवाना हो गये। शाम को 6 बजे हम रामगढ़ झील के किनारे पहुँच गये। दो वर्ष पूर्व 1982 में एशियाड के दौरान नौकायन प्रतियोगिता

इसी झील में आयोजित हुई थी। इसलिए इस झील का विकास बहुत अधिक हो गया है। किनारे की सीढ़ियाँ बड़ी साफ-सुथरी और चौड़ी बना दी गई हैं। किनारे का पार्क भी अब अत्यन्त सुन्दर और अत्याधुनिक ढंग से तैयार कर दिया गया है। किनारे पर पहुँचते ही हम सब आनन्द-विभोर हो गये। बहुत से सैलानी और पर्यटक वहाँ पहले से ही मौजूद थे और कुछ आ भी रहे थे। हमने वहाँ के व्यवस्थापकों से बात की और चन्द्रोदय के पश्चात् झील में नौका-विहार करने के लिए एक नौका तथा नाविक की व्यवस्था कर ली। इसके पश्चात् हम इधर-उधर घूमते रहे। चारों ओर की प्राकृतिक शोभा का आनन्द लेते रहे। किनारे पर ही एक ओर बैठकर हमने भोजन किया और शाम होने पर चन्द्रदेव के उदित होने की प्रतीक्षा करने लगे।

सूर्यास्त होते ही अन्धकार जगत् को ढकने का प्रयास करने लगा था, किन्तु उसका यह प्रयास सफल नहीं हो सका। कुछ ही क्षणों में पूर्व दिशा में चन्द्रमा निकल आया और उसकी शीतल तथा दूध जैसी चाँदनी के प्रकाश में समस्त दृश्यमान जगत् जगमगाने लगा। इधर हम चन्द्रोदय की प्रतीक्षा कर रहे थे और उधर नाविक किनारे से अपनी नौका को सटाये हमारी प्रतीक्षा कर रहा था। यकायक कुछ सैलानियों को झील की ओर बढ़ते देखकर हमारा भी ध्यान उस ओर गया तो नाविक ने हाथ हिलाकर हमें नाव में बैठने के लिए आमन्त्रित किया। हम भी इन्हीं क्षणों की प्रतीक्षा कर रहे थे। मन में विशेष उमंग लिये सीढ़ियों से उतरकर हम नाव के पास पहुँचे और एक-एक करके नाव में सवार हो गये। हम पूरे ग्यारह लोग थे। हमारी संख्या में उसने अपने को मिलाकर गिना तो बारह हुए। उसने इस संख्या को अशुभ मानकर अपने एक साथी को और बुला लिया और नाव को झील की ओर धकेल दिया।

अब हमारी नौका झील के मध्य भाग की ओर मंथर गति से बढ़ती जा रही थी। हमने टेप रिकार्डर चालू कर रखा था। पतवार की 'चप-चप' की आवाज ताल दे रही थी और उस शान्त वातावरण में लतामंगेश्कर की आवाज कानों में मिश्री घोल रही थी। तब तक चाँद काफी ऊपर आ गया था। हम सब भी शान्त थे और चाँद की ओर चकोर की तरह टकटकी लगाये देख रहे थे। एकदम स्वच्छ और दूध की तरह सफेद था उस दिन का चाँद। चाँदनी ऐसी स्वच्छ, स्निग्ध और शीतल थी कि तन-मन दोनों ही प्रफुल्लित हो रहे थे। वह स्वच्छ चाँदनी झील की लहरों पर ऐसी दिखलायी दे रही थी जैसे लहरों पर चाँदी के कण बिखरे पड़े हों। जहाँ तक दृष्टि जाती थी समस्त जलराशि रजत-कणों से ढकी नजर आती थी। हम नाव में बैठे-बैठे बार-बार अपने हाथ पानी में डालते थे और पानी को उछालते थे। मुझे ऐसा लगा कि शायद हमारे हाथ पानी में रजत-कणों को समेटने के लिए ही अनायास चले जाते थे, लेकिन वे रजत-कण हमारे अपवित्र हाथों के स्पर्श से पानी में विलीन हो जाते थे

ग्रोर हाथ से पानी के उछलते ही बूंदों के रूप में पुनः रजत-कण बन जाते थे। जिस ग्रोर हमारी नौका बढ़ती जा रही थी उस ग्रोर झील के दूसरे किनारे पर एक ऊँचा पहाड़ था। उस पहाड़ का प्रतिबिम्ब झील के पानी में स्पष्ट दिखलाई पड़ रहा था। ऐसा लगता था जैसे झील के नीचे-ऊपर दोनों ग्रोर पहाड़ हो। चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब भी झील के पानी में स्पष्ट दिखलाई देता था। ऐसा भ्रम होता था कि नीचे-ऊपर दो चाँद खिले हुए हैं जो ग्रपनी शीतल ग्रौर स्वच्छ चाँदनी से जगत् को शुभ्र वर्ण का बना देने के लिए स्पर्धा कर रहे हैं। ये सब कल्पनाएं मेरे ही मस्तिष्क में उठ रही हों, ऐसी बात नही है। मेरे ग्रन्य मित्र भी इसी प्रकार की सुखद कल्पनाग्रो मे खोये उस ग्रनुपम दृश्य का ग्रानन्द ले रहे थे।

वातावरण मे पूर्ण निस्तब्धता थी। शीतल हवा मन्द गति से बह रही थी। टेप-रिकार्डर से निकलने वाली गानों की ग्रावाज खुले वातावरण में झील की सतह से टकराकर ग्रौर भी मधुर बनी हुई थी। यकायक टेप-रिकार्डर की ग्रावाज बन्द हो गई। शायद कैसेट पूरा हो गया था। हम ग्रधलेटी ग्रवस्था मे टकटकी लगाये चाँद की सुन्दरता को देखते हुए ग्रपनी ग्राँखों को शीतल कर रहे थे। टेप-रिकार्डर की ग्रावाज बन्द होने की घटना से हम सब का ध्यान भग हो गया। सब सीधे होकर बैठ गये। उस मनोहारी दृश्य के विषय मे ग्रापस मे चर्चा करने लगे। एक मित्र टेप-रिकार्डर उठाकर कैसेट बदलने लगा तभी नाविक की ग्रावाज सुनाई पड़ी—"बाबूजी, यायें तो रोज ही सुनो, ग्राज तो कुछ ग्रपने गने की हैवे दो। ऐसो बखत बेर-बेर नाहिन ग्रावत।" यह कहकर पतवार उसने ग्रपने साथी को सौंपदी ग्रौर ऊँची ग्रालाप भरते हुए उसने गाना शुरु कर दिया—

'ग्रो मेरे माँझी ले चल पार। तू उस पार, मैं इस पार। ग्रो मेरे माँझी।'

वह नाविक कोई कुशल गायक था। बंदिनी फिल्म का यह गीत उसने इतनी ग्रच्छी तरह से गाया कि सारे वातावरण मे एक विचित्र सी मादकता व्याप्त हो गई। हम से कुछ दूर चल रही नौकाग्रो मे भी हल-चल मची ग्रौर वह नौकाएं हमारे नजदीक खिसकती नजर ग्रायी। नाविक की दशा तो ऐसी हो रही थी जैसे पूरी एक बोतल का नशा उस पर सवार हो। वह नाव के बीचो-बीच खडा हो गया ग्रौर पूरे ग्रभिनय के साथ ग्रपने शरीर को कभी इधर ग्रौर कभी उधर झुकाते हुए गीत की कड़ियाँ दोहराने लगा। लगभग दस मिनट तक झूम-झूम कर गाता रहा ग्रौर हम सब सुन-सुन कर झूमते रहे। उसने गाना समाप्त किया ग्रौर चारो तरफ से तालियो की ग्रावाज होने लगी। दूसरी नौकाग्रो से भी तालियो की ग्रावाज ग्रा रही थी। नाविक बैठ गया। हमने उससे एक गीत ग्रौर सुनाने का ग्राग्रह किया। उसने दूसरे गीत की तान फिर छेड दी। ग्रगली बार उसने एक गजल सुनाई—

'बे जुबानी जुबा न हो जाये॥
राजे उल्फत ग्रया न हो जाये।'

उसकी आवाज तो मधुर और साफ थी ही, उसका उच्चारण भी इतना शुद्ध था कि मजा आ गया। "वाह, वाह, खूब, बहुत खूब" कह-कह कर सब लोग उसे दाद देने लगे। वह भी प्रसन्न और उत्साहित होकर एक से एक विभिन्न लहजे मे शेर पढ़ने लगा। जब उसकी गजल समाप्त हो गयी तो लगा जैसे हम पर भी कोई नशा चढ़ गया है। तभी दूसरे नाविक ने आवाज लगाई—"भैया, बीच मे तो आ गयो है और भी आगे चलैंगो का ?" हमने देखा उस समय हमारी नाव झील के ठीक मध्य भाग मे थी। चाँद भी ठीक हमारे माथे पर पहुंच गया था। नाविक ने पतवार को पानी के बाहर निकाल लिया और नाव को वैसे ही हिलोरें खाने को आजाद छोड़ दिया। इस समय का दृश्य और भी निराला था। ऊपर क्षितिज तक फैला हुआ स्वच्छ आकाश और मध्य मे अपनी विभा से प्रकाशित निर्मल चन्द्रमा। नीचे चारों ओर दूर-दूर तक फैली हुई अनन्त जल राशि। लहरो पर चमकते हुए रजत-कण और बीचों बीच चन्द्रमा के ठीक नीचे हिलोरें लेती हुई हमारी नौका जिसमे बैठे इस रमणीय दृश्य का आनन्द लेते हुए परम सौभाग्यशाली हम मित्रगण।

अब हवा कुछ अधिक तेज और ठंडी चलने लगी थी। हमे भी कुछ ठंडक सी महसूस होने लगी। हमने नाविक से किनारे की ओर लौटने के लिए कहा। वह शीघ्रता से चप्पू चलाने लगा। कुछ नौकाएं हम से पहले ही किनारे के पास पहुँचने को थी। हमारा गायन का कार्यक्रम उसी प्रकार चलता रहा। हम मे भी तीन-चार अच्छे गायक थे। लौटते समय उन्होंने अपने गायन से समा बाँध दिया। कुछ ही देर मे हमारी नौका किनारे से सटकर रुक गयी। हम एक एक करके उतर गये। मैंने नाविक को किराया चुकाया और पांच का नोट इनाम के बतौर दिया। वह नौका को किनारे से बाँधकर हमें धन्यवाद देता हुआ चला गया। हम भी अभी-अभी उपभोग किये आनन्द की चर्चा करते हुए जीप मे आकर बैठ गये। ड्राइवर ने जीप को घुमाया और तेज गति से जयपुर की ओर चल पड़ा। जब हम होस्टल के द्वार पर पहुँचे तो उस समय रात्रि के ठीक बारह बजे थे।

उपसंहार—प्रकृति के अनेक रूप हैं और वह अपने प्रत्येक रूप मे मोहक, चिर-नवीन और रमणीय है, किन्तु शरद-पूर्णिमा के दिन चांदनी रात मे नौका-विहार करते समय उसके जिस रूप को देखा, वह अनुपम और अनोखा ही था। मैं जब भी आकाश मे चाँद को चमकता हुआ देखता हूँ या जब कभी किसी तालाब की चर्चा सुनता हूँ या कोई चित्र देखता हूँ तो मुझे वह रात याद आ जाती है और मैं उस रात की मधुर स्मृतियों मे कुछ क्षणों के लिए खो जाता हूँ।

□□□

6 | दहेज न मिलने पर जब बरात लौट गई

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—विवाह एक सयोग
2. एक पड़ौसी के विवाह में सम्मिलित होना—बस द्वारा बरात का प्रस्थान, बरात का स्वागत, अगवानी की रस्म मे रकम कम मिलना, लड़के के पिता का क्रोध, रंग में भंग पड़ जाना, लड़की द्वारा विवाह करने से मना कर देना, एक अन्य युवक से विवाह, बरात का खाली हाथ लौटना
3. उपसंहार

प्रस्तावना—मैं अपने घर मे और बाहर भी बड़े-बूढ़ों के मुख से यह बराबर सुनता रहा हूँ कि शादी-विवाह तो एक सयोग मात्र होता है। जिस लड़के का जिस लड़की से विवाह का सयोग होता है, उसी से विवाह होता है। यह संयोग पूर्व-जन्म के कार्यों पर आधारित होता है और पहले से ही निश्चित होता है, किन्तु हम इसे पहले नहीं जान पाते। इसलिए इधर-उधर भटकना पड़ता है, लेकिन यह बात मेरी सामान्य बुद्धि के समझ मे आती ही नहीं थी। मैं बराबर यह देखता और अनुभव करता रहा हूँ कि किसी भी लड़की अथवा लड़के की शादी उसी स्थान पर निश्चित हुई है जहाँ उनके अभिभावकों ने और स्वयं लड़के ने करना चाहा है। इस चाह को पूरी करने के लिए पर्दे मे या चौड़े में कुछ सौदेबाजी भी होती है और सब तरह से सन्तुष्ट होने के पश्चात् ही सम्बन्ध पक्के होते हैं। ऐसी स्थिति मे यह बात समझ मे कैसे आ सकती थी कि विवाह तो एक सयोग मात्र है, किन्तु मेरे एक ताजा अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया कि शादी-विवाह सयोग से ही होते है, जबकि एक जरा सी बात पर बरात सजाकर लाने वाला दूल्हा शादी से वंचित रह गया और मात्र बराती बनकर आने वाला युवक विवाह करके दुल्हन को ले गया।

विषय-प्रवेश—मेरे पड़ौस मे शर्मा जी का मकान है। उनका पूरा नाम कजोड़ मल शर्मा है। वे रसद विभाग मे वरिष्ठ लिपिक के पद पर कार्य करते है। उनके चार पुत्र और एक पुत्री है। उनके सबसे बड़े लड़के किशोरी लाल का विवाह पास के ही कस्बे मे एक अध्यापक की लड़की से निश्चित हुआ था। लड़का बी० ए० पास था और लड़की एम० ए० थी। लड़का सालभर पहले बैंक मे नौकर हो गया था, इससे उसके भाव बहुत बढ़ गये थे। लड़की अत्यन्त रूपवती, सुशील और सभ्य

थी। शर्माजी ने खूब ताक-झांककर तथा लेन-देन की शर्तें तय करके ही शादी पक्का की थी। टीके और सगाई तक मास्टरजी ने शर्तों के अनुसार ही रस्मो-रिवाज पूरे किये थे। इसलिए शर्माजी पूर्ण सन्तुष्ट थे। विवाह की तिथि निश्चित् हुई दोनों ओर से खूब उत्साहपूर्वक तैयारियाँ हुई। विवाह की तिथि नजदीक आ गई। पड़ौसी होने के नाते हमारे घर पर भी निमन्त्रण-पत्र आया और शर्माजी ने बड़े आग्रहपूर्वक हमारे परिवार में से एक पुरुष को बरात में चलने के लिए कहा पिताजी की व्यस्तता के कारण मेरा ही बरात में जाना निश्चित् हुआ।

शादी के दिन दोपहर में करीब बारह बजे दो डीलक्स बसें शर्माजी के मकान से कुछ दूर आकर खड़ी हो गई। शर्माजी कुछ कजूस किस्म के आदमी हैं। जहाँ दो रुपये खर्च करना आवश्यक हो वहाँ एक रुपये में ही काम चलाते हैं। बरात के लिए एक साथ चमचमाती हुई दो बसों को देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ, लेकिन शीघ्र ही लोगों ने पता लगा लिया कि बस का किराया लड़की वाले के मत्थे मढ़ा जायेगा। फिर क्या था? शर्माजी क्यों चूकते लगे—'माले मुफ्त दिले बेरहम।'

दुल्हा सजाया गया। घोड़ी पर बिठाकर कुल पाँच बैंड वालों की 'पीं-पीं' और 'ढम-ढम' की आवाज के साथ निकासी निकाली गई। डीलक्स बसों की तुलना में अत्यन्त हल्का बैंड देखकर लोगों ने नाक चढ़ाया तो शर्माजी ने समझाया—"मुख्य बरात तो लड़की वाले के बाहर ही सजेगी। यहाँ अधिक खर्चा करने से क्या लाभ?" लोग समझ गये कि बैंड का खर्चा शर्माजी के ही जिम्मे दिखता है।

शाम को तीन बजे बरात रवाना हुई। दोनों बसें बरातियों से खचाखच भरी थीं। रिश्तेदारों और नातियों की तुलना में पड़ौसियों, मित्रों और कार्यालय के कर्मचारियों की संख्या बहुत अधिक थी। औरतें और बच्चे भी थे। कुल दो सौ से ऊपर बराती होंगे। बसें चल पड़ीं। हँसी कहकहों के साथ अनेक प्रकार की चर्चाएँ होती रहीं और बसें अपने गन्तव्य स्थान की ओर सरपट दौड़ती रहीं। मेरी सीट के पास बुजुर्ग और जवान दोनों ही प्रकार के लोग बैठे थे, जिनमें कुछ शर्माजी के रिश्तेदार भी थे। उनकी चर्चा का विषय बढ़ते हुए शादी-विवाह के खर्चे, लेन-देन और दहेज का प्रकरण ही था। सब लोग अपना-अपना दृष्टिकोण प्रकट कर रहे थे। एक बात पर वे सभी सहमत नजर आते थे कि दहेज हमारी एक सामाजिक बुराई है और यह प्रथा समाप्त होनी चाहिए। इस प्रथा को समाप्त करने के उपाय भी सब अपनी-अपनी समझ से बतला रहे थे, किन्तु सभी उपायों को अव्यावहारिक मानकर पुनः कुछ निराशापूर्ण बातें करने लग जाते थे। मैं चुपचाप उनकी बातें बड़े ध्यान से सुन रहा था। करीब डेढ़ घण्टा शीघ्र ही गुजर गया और बरात गोविन्द नगर पहुँच गई।

बरात की अगवानी के लिए काफी लोग उपस्थित थे। उन्होंने बड़े गर्मजोशी से बरात का स्वागत किया। बरात एक धर्मशाला में ठहराई गई, जहाँ सब

प्रकार से सुन्दर व्यवस्था की गई थी। कुछ देर बाद चाय-नाश्ता दिया गया - व्यवस्था में लगे लोगों का व्यवहार इतना नम्र और मधुर था कि बराती प्रसन्न हो गये। सब लोग उनकी सु-व्यवस्था की प्रशंसा करने लगे। लड़की वाले का मकान भी पास ही था। कुछ मनचले लोग वहाँ तक हो आये थे। वे वहाँ की सजावट और स्वागत-सत्कार की व्यवस्था की प्रशंसा कर रहे थे। शर्मा जी घूम-घूम कर सब बरातियों से मिल रहे थे और सब की सुविधा-असुविधा की जानकारी कर रहे थे। इस प्रक्रिया में करीब दो घंटे का समय बीत गया। तभी लड़की वालों की तरफ से एक व्यक्ति ने आकर सूचना दी कि वे लोग अगवानी की रस्म करने आ रहे हैं। शर्मा जी ने यह सूचना सब बरातियों के पास पहुँचा दी और यह भी कहलवा दिया कि सब लोग तैयार होकर बिछायत पर पधारें। अगवानी की रस्म के बाद बरात रवाना होगी।

धर्मशाला के खुले और बड़े चौक में बिछायत हो रही थी। ठीक सामने दूल्हे के बैठने के लिए विशेष व्यवस्था की गई थी। लोग आ-आकर बिछायत पर बैठने लगे। कुछ देर बाद लड़की वाले स्वागत का सामान लिए अगवानी के लिए आ पहुँचे। उनके आने पर दूल्हे को बुलाया गया। अपने बीस-पच्चीस मित्रों की टोली के साथ दूल्हा आया और निर्धारित स्थान पर बैठ गया। पण्डित जी ने मन्त्रोच्चारण प्रारम्भ किया, पूजन करवाया और फिर रस्म की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। दूल्हे के तिलक लगाया गया, गजरा पहनाया गया और एक सोने की जंजीर गले में डाली गई। इसके बाद सौ-सौ के कुछ नोट एक नारियल के साथ दूल्हे को भेंट किये गये। सभी की नजर नोटों की तरफ लगी हुई थी। शर्मा जी तो दूल्हे के पास ही बैठे थे। दूल्हे ने वे नोट अपने पिता को दे दिये। शर्मा जी ने नोट गिने तो उनकी भौंहें तन गईं। लाल आँखों से देखते हुए उन्होंने लड़की के पिता से कहा, "यह कैसी वादा खिलाफी है मास्टर जी ?" मास्टर जी ने हाथ जोड़कर बड़े नम्र शब्दों में निवेदन किया, "शर्मा साहब ! मैंने सब काम आपके हुक्म के मुताबिक ही किया है। थोड़ा रूप ही बदला है बाकी जो कसर रहेगी, वह भी पूरी कर दूँगा।" शर्मा जी का पारा और भी गरम हो गया। बोले, "मुझे बेवकूफ मत बनाओ। पचास रिश्तों को छोड़कर मैंने तुम्हारे यहाँ रिश्ता मंजूर किया था। मुझे अगवानी में नकद पाँच हजार चाहिए।" यह कहकर वे नोट उन्होंने मास्टर जी के मुँह पर दे मारे। सब लोग आश्चर्य और उत्सुकता से शर्मा जी की ओर देखने लगे। मास्टर जी ने नीचा सिर किये बिखरे नोटों को इकट्ठा किया और वे शर्मा जी से कुछ कहना ही चाहते थे, तब तक कन्या पक्ष के भी कुछ लोग ताव में आ गये और उन्होंने शर्मा जी को बुरा-भला कहना शुरू कर दिया। रंग में भंग पड़ गया और देखते-देखते बात बढ़ गई। शर्मा जी आपे से बाहर हो गये। दोनों ही पक्ष के लोगों ने उन्हें बहुत समझाया, लेकिन वे अपनी जिद पर अड़े रहे, बल्कि कुछ ओछे और अपशब्द भी उनके मुँह से निकलने लगे।

लडकी वालो को उनका यह व्यवहार बहुत ही बुरा लगा। बात यहाँ तक बढ गई कि लडकी वाले यह कहकर वहाँ से चले गये कि "हमारे पास जो होगा वही देंगे। आपको स्वीकार हो तो बरात लेकर आ जाओ, नही तो अपने घर जाओ।"

उनके जाते ही बरातियो मे विचित्र-सी हलचल मच गई। कोई कुछ कहने लगा और कोई कुछ। सब लोग शर्मा जी की ही गलती मान रहे थे। शर्माजी पहले तो बहुत बौखलाये, लेकिन फिर उनके होश ठिकाने लग गये। जैसे-तैसे हो हल्ला बन्द हुआ और बरात की तैयारियाँ होने लगी। इसी बीच लडकी का भाई कुछ नौजवानो के साथ वहाँ आया और उसने शर्मा जी से कहा, 'शर्मा जी! यह शादी नही होगी। आप लोग बरात लेकर लौट जाइये और धर्मशाला जल्दी खाली कर दीजिये।" यह बात सुनते ही सब के होश उड गये। शर्मा जी की हालत तो ऐसी हो गई कि काटो तो खून नही। दूल्हे की शक्ल ऐसी हो गई जैसे भरी महफिल मे धक्के देकर निकाल दिया हो, लेकिन सब लोग निरुपाय से एक-दूसरे की शक्ल देख रहे थे। किसी की समझ मे नहीं आ रहा था कि क्या किया जाय। आखिर कुछ समझदार लोग इस चेतावनी की जाँच करने मास्टर जी के घर पहुँचे तो उन्हे पता लगा कि शर्माजी के व्यवहार से रुष्ट होकर लडकी ने यह दृढ निश्चय कर लिया था कि वह इस लडके से विवाह नही करेगी, क्योंकि जिस लडके का पिता इतना नीच, स्वार्थी, लालची और जगली स्वभाव का है उसका पुत्र भी वैसा ही होगा। उस घर मे जाकर वह हर्गिज सुखी नही रह सकेगी। हो सकता है उसकी हत्या कर दी जाय या वह स्वय ही आत्म-हत्या करले। यदि इस विवाह के लिए उसे बाध्य किया गया तो वह आत्म-हत्या कर लेगी। जाँच करने गये लोग अपना-सा मुह लेकर वापस आ गये। समाचार सुनकर सब के होश उड गये। बरातियो मे एक प्रकार का शोक सा व्याप्त हो गया। दूल्हे के मित्रो मे एक प्रगतिशील विचारधारा का युवक था। वह किशोरी लाल से बार-बार यह कह रहा था कि वह अपने पिता की गलती के लिए स्वय क्षमा-याचना करे और बिना दहेज ही विवाह करने का प्रस्ताव लडकी से करे, किन्तु किशोरी लाल मे पिता का विरोध करने का साहस नही था। वह युवक जोर-जोर से बोलकर किशोरी लाल की आत्मा को जगाने का प्रयास करने लगा। सब लोग उसकी बात का समर्थन करने लगे। वहीं कुछ लोग कन्या पक्ष के भी खडे सुन रहे थे। उनमे से एक ने उस युवक से प्रश्न किया, "तुम ऐसे आदर्श की बातें कर रहे हो, क्या तुम बिना दहेज शादी करने के लिए तैयार हो?" युवक ने दृढता से कहा, "यदि यह स्वाभिमानिनी लडकी मुझसे विवाह करना स्वीकार करे तो मैं तैयार हूँ।" सबने तालियाँ पीटकर उसकी दृढता की प्रशसा की। किसी ने यह समाचार लडकी और लडकी के पिता तक पहुँचा दिया। काफी विचार-विमर्श के बाद दुल्हन के वेश मे सजी लडकी को लेकर कन्या-पक्ष के लोग धर्मशाला मे आ पहुँचे। दूल्हा किशोरी लाल, शर्मा कजोड

मन जी और समस्त बराती इस दृश्य को आश्चर्य से देखने लगे। हंसिनी की चाल चलती हुई वह अत्यन्त रूपवती दुल्हन विद्यायत के पास जाकर खडी हो गई। तभी वह प्रगतिशील युवक उसके सामने आकर खड़ा हो गया और बोला, मैं आपको आपके साहस के लिए बधाई देता हूँ। आप जैसी वीरांगनाएँ ही समाज का सुधार कर सकती है।" और तभी उस लडकी ने उसके गले मे वरमाला डाल दी।

उपसंहार—इसके बाद बैण्ड की धुन के साथ दुल्हा-दुल्हिन की जोडी विवाह-मण्डप मे चली गई और मगल-गान तथा मंत्रोच्चार प्रारम्भ हो गये। इधर कस्बे के लोग इकट्ठे होकर धर्मशाला मे आ गये और शर्मा जी सहित सभी बरातियो को धिक्कारने लगे। आखिर निराश और परेशान होकर रातो-रात बरात को वहाँ से खाली हाथ ही रवाना होना पडा।

7

मनोरंजन के आधुनिक साधन

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना—मनोरजन की आवश्यकता एव महत्त्व
2 मनोरजन के आधुनिक साधन—रेडियो, सिनेमा टलिविजन, खेल कूद, सर्कस प्रदर्शनी एव मेले क्लब और पार्टियाँ कवि-सम्मेलन और मुशायरे, ताश और शतरज, पत्र पत्रिकाएँ एव अन्य साहित्य
3 उपसहार

प्रस्तावना—मनोरजन मनुष्य की अनिवार्य आवश्यकता है। मनुष्य ही नही पशु-पक्षी भी अपने तरीके से मनोरजन करते देखे जाते हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि कार्य करने से मनुष्य को थकान होती है। मन और शरीर का घनिष्ठ सम्बन्ध है। शारीरिक कार्य करने से शरीर के साथ मानसिक थकान भी होती है और मानसिक कार्य करने से मन के साथ शरीर भी थक जाता है। इस थकान को दूर करके पुन ताजगी और प्रफुल्लता प्राप्त करने का सर्वोत्तम साधन मनोरजन है। मनोरजन से शरीर की जडता और मन की ऊब समाप्त हो जाती है तथा कार्य करने के लिए नई शक्ति, स्फूर्ति और उत्साह उत्पन्न हो जाता है।

मनुष्य अपनी इस आवश्यकता की पूर्ति आदिम काल से ही करता आया है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ मनोरजन के साधन भी विकसित होते रहे है, किन्तु नृत्य, गीत, अभिनय और क्रीडा, इन साधनो का महत्त्व मनोरजन के लिए सदा ही बना रहा है। इसका कारण यह है कि य साधन मनुष्य की भावना से सीधा सम्बन्ध रखते है और भावना का सम्बन्ध मन से होता है। अत मनोरजन के लिए ये साधन सर्वश्रेष्ठ माने जाते है।

विषय प्रवेश—विज्ञान की उन्नति ने मानव-जीवन के सभी क्षेत्रो को प्रभावित किया है। उसकी सभी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए विकसित साधन उपलब्ध कराये हैं। मनोरजन के साधनो के विकास मे विज्ञान की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई है। मनोरजन के परम्परागत साधनो के अतिरिक्त वैज्ञानिक आविष्कारो के फलस्वरूप जो नये साधन विकसित हुए हैं, उन्होंने मनोरजन को अत्यन्त सस्ता, सरल और सुविधापूर्ण बना दिया है। मनोरजन के जो आधुनिक साधन समाज मे उपलब्ध हैं, उनका विवरण अग्रलिखित प्रकार से दिया जाता है —

रेडियो—रेडियो मनोरंजन का सर्वाधिक लोकप्रिय साधन है। आज आपको घर-घर, गली-गली, सड़कों-बाजारों, होटलों-विश्राम गृहों तथा बसों और कारों में भी रेडियो की आवाज सुनाई देगी। यह एक ऐसा सुविधाजनक साधन है कि जिससे हम किसी भी स्थान पर बैठे-बैठे और चलते-चलते अपना मनोरंजन कर सकते हैं। छोटे-छोटे ट्रांजिस्टरों के रूप में इसका विकास हो जाने पर तो यह और भी उपयोगी और सुविधाजनक बन गया है। इसी का एक विकसित रूप टेपरिकार्डर भी है जिसके माध्यम से हम अपनी रुचि के कार्यक्रम अपने इच्छित स्थान और इच्छित समय पर सुनकर मनोरंजन कर सकते हैं। रेडियो के कार्यक्रमों में सुगम संगीत, शास्त्रीय संगीत, वाद्य संगीत, गजल, कव्वाली, लोकगीत, कविता-पाठ, नाटक और हास्यरूपक आदि सभी प्रकार के कार्यक्रम होते हैं, जिससे श्रोता अपनी रुचि के कार्यक्रम सुनकर अपना भरपूर मनोरंजन कर लेते हैं।

सिनेमा—मनोरंजन के आधुनिक साधनों में सिनेमा का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। सिनेमा हाल में जाकर तीन घंटे के एक शो में दर्शक अभिनय, नृत्य, संगीत, हास्य, रोमांस आदि के दृश्य देखकर भरपूर मनोरंजन कर लेते हैं। विभिन्न प्राकृतिक दृश्यों तथा साहसिक रोमांचक दृश्यों को देखकर दर्शक कुछ क्षणों के लिए अपने आपको भूल जाते हैं। यही कारण है कि सिनेमा मनोरंजन के आधुनिक साधनों में बहुत लोकप्रिय है। शहरों की तो बात ही क्या छोटे-छोटे कस्बों में सिनेमा हॉल बनने जा रहे हैं और फिल्म-उद्योग निरन्तर प्रगति करता जा रहा है।

टेलीविजन—टेलीविजन के आविष्कार ने मनोरंजन के साधनों के क्षेत्र में एक क्रान्ति उत्पन्न कर दी है। इसी साधन ने रेडियो और सिनेमा दोनों ही के गुण अपने में उत्पन्न कर लिये हैं और घर बैठे ही सब प्रकार के मनोरंजक दृश्यों को देखने तथा सुनने की सुविधा उपलब्ध करा दी है। संसार के किसी भी कोने में घटित होने वाली महत्वपूर्ण घटना को हम अपने कमरे में आराम से बैठे-बैठे ही इस प्रकार देख सकते हैं, जैसे वह घटना हमारे सामने ही घटित हो रही हो। ओलम्पिक खेलों का आयोजन हो या क्रिकेट के टैस्ट मैच, कोई कवि-सम्मेलन हो या मुशायरा अथवा संगीत-नृत्य का कोई विशेष आयोजन हो, ये सभी आयोजन हम अपने कमरे में बैठे-बैठे चाय की चुस्की का आनन्द लेते हुए आराम से देख सकते हैं। टेलीविजन का ही एक अत्याधुनिक विकसित रूप हमारे सामने वी डी ओ और आ गया है। इसके माध्यम से टेलीविजन पर प्रसारित अपनी रुचि के किसी भी कार्यक्रम को हम रेकार्ड कर सकते हैं और इच्छानुसार समय पर उसे बार-बार देखकर अपना मनोरंजन कर सकते हैं।

रेडियो, सिनेमा और टेलीविजन ये तीनों ही मनोरंजन के सर्वाधिक लोकप्रिय आधुनिक साधन हैं। इन साधनों की एक विशेषता यह भी है कि इनसे मनोरंजन के

साथ-साथ ज्ञान-वृद्धि भी होती है जिससे हमारे दृष्टिकोण में अपेक्षित परिवर्तन भी होना है।

खेल-कूद—मनोरंजन के आधुनिक साधनों में खेल-कूद का स्थान भी बहुत महत्वपूर्ण है। फुटबाल, जिमनास्टिक, तैराकी, निशानेबाजी और घुड़सवारी आदि साधनों से भी मनोरंजन किया जाता है। खेल-कूद के साधन की एक विशेषता यह है कि इससे खिलाड़ियों का तो मनोरंजन होता ही है साथ ही दर्शकों का भी खूब मनोरंजन होता है। खेलों के राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मुकाबलों के आयोजनों में ऊँची दरों के टिकट रखे जाते हैं, किन्तु दर्शकों का उत्साह इतना अधिक होता है कि टिकटें ब्लैक में भी नहीं मिल पाती। ग्रामीण क्षेत्रों में कबड्डी और गिल्ली-डंडा आदि खेल बड़े भी बड़े उत्साह से खेले जाते हैं जिससे खिलाड़ियों और दर्शकों का खूब मनोरंजन होता है। खेल-कूद मनोरंजन का एक अत्यन्त श्रेष्ठ साधन है। इससे मनोरंजन के साथ-साथ शरीर में शक्ति और स्फूर्ति का संचार होता है तथा मन में उत्साह और धैर्य का विकास होता है। खेलों से भाईचारे की भावना को भी प्रोत्साहन मिलता है।

सर्कस, प्रदर्शनी एवं मेले—आधुनिक समाज में मनोरंजन लिए प्रदर्शनी और मेले भी आयोजित किये जाते हैं। शहरी क्षेत्रों में मेले अनेक रूपों में आयोजित होते हैं, जिनमें कुछ परम्परागत शैली के मेले होते हैं और कुछ आधुनिक तरीकों के इनमें कुछ प्रदर्शनियाँ भी आयोजित की जाती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में मेलों का महत्त्व बहुत अधिक होता है और ये मेले परम्परागत शैली से ही आयोजित होते हैं जिनमें बहुत बड़ी संख्या में लोग शामिल होते हैं। मनोरंजन के साथ-साथ इन मेलों का सामाजिक और सांस्कृतिक महत्त्व भी होता है। सर्कस की दुनियाँ का यद्यपि कुछ ह्रास हो रहा है, किन्तु मनोरंजन की दृष्टि से यह एक सर्वाङ्गपूर्ण साधन है जिसमें साहस, शक्ति, कला, संगीत और हास्य के साथ-साथ अद्‌भुत और आश्चर्यजनक कार्यों को प्रत्यक्ष देखकर दर्शकों का खूब मनोरंजन होता है।

क्लब और पार्टियाँ—आधुनिक सम्पन्न और सभ्य कहे जाने वाले लोग क्लबों और पार्टियों में जाकर अपना मनोरंजन करते हैं। पाश्चात्य सभ्यता की देन ये क्लब और पार्टियाँ जन-साधारण के मनोरंजन का साधन नहीं हैं। अपने वैभव के प्रदर्शन के साथ-साथ पाश्चात्य सभ्यता के अनुरूप ही अपना आचरण करने वाले लोग इन साधनों से अपना मनोरंजन करते हैं। व्हिस्की और रम की चुस्की के साथ अपने अंगों का खुला प्रदर्शन करते हुए नर-नारी भारतीय समाज की समस्त मर्यादाओं को त्याग कर इन पार्टियों में पाश्चात्य शैली का डांस कर करके अपना मनोरंजन करते हैं। क्लबों में कैबरे डांस भी मनोरंजन का ही साधन है।

कवि-सम्मेलन और मुशायरे—कवि-सम्मेलन और मुशायरे भी मनोरंजन के आधुनिक साधनों में प्रमुख हैं। इन सम्मेलनों में कवि और शायर अपनी

रचनाएँ विशेष लहजे मे श्रोताओं सम्मुख प्रस्तुत करते हैं और श्रोता सुन-सुन कर कभी झूमते हैं और कभी 'वह्-वाह्' करके अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हैं। इन साधनो से श्रोताओ का मनोरजन कितना अधिक होता है, इस बात का प्रमाण यह है कि अच्छे कवि-सम्मेलन और मुशायरे इतने अधिक जमते हैं कि श्रोता रात भर बैठे रहते हैं और 'वाह-वाह' 'क्या खूब' की ध्वनि से आसमान गुंजाते रहते हैं। किन्तु ये परिष्कृत रुचि के लोगो का ही मनोरजन कर पाते हैं,

ताश और शतरज—मनोरजन के साधनो मे ताश के पत्ते बहुत लोकप्रिय हैं। शहरो, गाँवो और कस्बो मे पढे तथा अनपढ सभी प्रकार के लोग ताश के पत्तों से अपना मनोरजन करते देखे जा सकते हैं। शतरंज का खेल थोडा कठिन है, किन्तु जो लोग शतरज का खेल सीख जाते हैं, वे इससे खूब मनोरजन करते हैं। शतरज के खिलाडी तो खेल मे ऐसे खो जाते हैं कि उन्हे खाने पीने और आवश्यक कार्यों की भी सुधि नही रहती।

पत्र-पत्रिकाएँ एवं अन्य साहित्य—साहित्य भी मन-बहलाव का एक श्रेष्ठ साधन है। फुर्सत के क्षणो मे अथवा यात्रा के दौरान अपना समय गुजारने के लिए लोग पत्र-पत्रिकाएँ तथा पुस्तकें पढते है। इससे उनका मनोरजन भी होता है, नवीन जानकारियाँ भी मिलती हैं और एकाकी यात्रा करने का लम्बा समय बडी सरलता से गुजर जाता है।

उपसंहार—मनोरजन के जिन साधनों की चर्चा ऊपर की गई है उनके अतिरिक्त भी अनेक साधन और हो सकते है, किन्तु आधुनिक समाज मे ये ही साधन प्रमुख हैं। 'भिन्न रुचिर्हि लोके' ससार मे लोगो की भिन्न-भिन्न रुचियाँ होती हैं और वे अपनी-अपनी रुचि के अनुसार ही मनोरजन के साधनो का चयन करते हैं। यहाँ हमे एक बात भली प्रकार से समझ लेनी चाहिए कि मनोरजन एक सामाजिक आवश्यकता होती है लम्बे समय तक कार्य करने के पश्चात् शरीर की थकान और मन की ऊब को मिटाने के लिए इसकी आवश्यकता होती है। इससे यह सिद्ध होता है कि जीवन में कार्य का स्थान प्रथम है और मनोरजन का दूसरा। जो लोग मनोरजन को जीवन मे प्रथम स्थान देने लगते हैं, वे स्वय अपने साथ धोखा करते हैं। कुपरिणाम उन्हे अपने जीवन मे भोगने पडते हैं। इसके अतिरिक्त जो लोग मनोरजन के लिए मादक पदार्थों जैसे भाँग, गाँजा, शराब आदि का सेवन करते हैं या जुआ, सट्टा आदि से अपना मनोरजन करते हैं वे मनोरजन के नाम पर आत्म-घात करते हैं। हमे मनोरजन का महत्त्व समझना चाहिए और जब जितना आवश्यक हो शुद्ध एव सात्विक मनोरजन करना चाहिए जिससे जीवन मे उत्साह, उमंग और सरसता बनी रहे।

□□□

विज्ञान के चमत्कार | 8

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना—आधुनिक युग मे विज्ञान का प्रभाव।

2. विज्ञान के आश्चर्यजनक चमत्कार—दूरी पर विजय, ऊर्जा का विकास, सचार-सुविधा, चिकित्सा-सुविधा, मनोरजन बौद्धिक क्षमता मे वृद्धि अन्तरिक्ष की खोज, सामरिक क्षमता मे वृद्धि, उत्पादन मे वृद्धि

3 उपसहार

प्रस्तावना—आज का युग विज्ञान का युग है। जीवन के सभी क्षेत्रो मे विज्ञान का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पडता है। आवागमन के साधन, सवाद और सचार-व्यवस्था, ऊर्जा के स्रोत, दैनिक जीवन की आवश्यकताएँ, मनोरजन के साधन, चिकित्सा, युद्ध के शस्त्रास्त्र और शिक्षा तथा ज्ञान के सभी क्षेत्रो मे विज्ञान के चमत्कार स्पष्ट दिखलाई देते है। अधिक समय पुरानी बात छोड भी दें तो भी आज से पचास वर्ष पूर्व के लोगो का जीवन आज की तुलना मे बहुत भिन्न था। उनकी शक्ति और सामर्थ्य बहुत सीमित थी। उनके ज्ञान का क्षेत्र बहुत छोटा था और वे प्रकृति के आगे असहाय बन कर अत्यन्त असुविधापूर्ण जीवन व्यतीत करने को विवश थे। पक्षियो की तरह आकाश मे उन्मुक्त उडान भरने की, तीव्रगति से एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच जाने की, घर मे बैठे-बैठे ही दूसरो से सम्पर्क साधने की तथा चुटकी बजाते ही जादू से काम पूरा कर लेने की साध तो प्राचीन युग के लोगो के मन मे भी रही होगी किन्तु उनकी यह कल्पना एक सुखद स्वप्न से अधिक महत्त्व नही रखती होगी क्योकि उनके लिए ये सब बातें असम्भव थी। यह विज्ञान का ही चमत्कार है जिसने मानव के स्वप्न को वास्तविकता मे बादल दिया और असम्भव को सम्भव बना दिया।

विषय प्रवेश—यह हम पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं कि मानव-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को विज्ञान ने प्रभावित किया है। अब हम जीवन के कुछ विशिष्ट क्षेत्रो मे विज्ञान के चमत्कारिक प्रभाव को देखने का प्रयत्न करेंगे।

1. दूरी पर विजय—एक समय था जब मनुष्य एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने मे अत्यन्त कठिनाई का अनुभव करता था। जब कभी उसे जाना ही पडता तो यात्रा में महीनो का समय लग जाता था और इस अवधि मे उसे मार्ग मे अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ता था। यह विज्ञान का ही

चमत्कार है कि आज दूरी की हमारे सामने कोई समस्या ही नही रही है। रेल, मोटर, जहाज तथा वायुयान जैसे अनेक साधन उपलब्ध हो गये हैं जिनसे हम बहुत कम समय मे दूरी की यात्रा सुविधा पूर्वक कर लेते हैं।

2 ऊर्जा का विकास—एक युग था जब मनुष्य अपनी शारीरिक शक्ति और पशुओं की शक्ति से ही अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति करता था इससे उसकी शक्ति और सामर्थ्य बहुत सीमित थी। विज्ञान ने इस क्षेत्र मे आश्चर्यजनक चमत्कार किये हैं। वाष्प, पैट्रोल, डीजल, गैस, विद्युत् और एटम की शक्ति की खोज करके इनकी ऊर्जा से चलने वाली बड़ी-बड़ी मशीनो का अविष्कार करके मानव की शक्ति और कार्यक्षमता मे असाधारण वृद्धि कर दी है। आज मशीनो के द्वारा दो आदमी ही एक दिन मे उतना काम पूरा कर देते हैं जो काम दो सौ आदमी भी पूरा नही कर सकते। अपने दैनिक जीवन मे ऊर्जा के इन स्रोतों का उपयोग हम खूब करते है। बटन दबाते ही कमरा विद्युत् प्रकाश से जगमगा उठता है, नल का पेंच घुमाते ही घर मे गंगा आ जाती है और माचिस लगाते ही रसोईघर मे गैस का चूल्हा जलकर चाय का पानी गरम कर देता है। ये सब सुविधाएँ क्या साधारण बात मानी जा सकती हैं ?

3. संचार-सुविधा—मनुष्य को एक-दूसरे से सम्पर्क करने तथा एक-दूसरे के विषय में जानकारी करने की आवश्यकता सदा बनी रहती है। एक समय था जब सवाद अथवा सदेश लेकर किसी व्यक्ति को ही किसी स्थान पर भेजा जाता था। इस कार्य के लिए तेज चलने वाले घोडो को ही काम मे लिया जाता था। इस साधन से समय बहुत लग जाता था, सवाद की गोपनीयता समाप्त हो जाती थी और निश्चित सीमा तक ही सवाद पहुँचाया जा सकता था। विज्ञान ने चमत्कार करके इस समस्या का समाधान कर दिया है। अब तार, टेलीफोन और बेतार के तार द्वारा हम घर बैठे ही ससार के किसी भी कोने मे रहने वाले अपने मित्र अथवा सगे-सम्बन्धी से सीधा सम्पर्क कर सकते हैं। कैसी आश्चर्यजनक बात है यह !

4. चिकित्सा सुविधा—पिछली शताब्दी तक रोगो पर मनुष्य का कोई नियन्त्रण नही था। अनेक रोग असाध्य बने हुए थे और कोई बीमारी जब व्यापक रूप से फैल जाती थी तो महामारी बनकर पूरे गाँव और बस्तियो को उजाड बना देती थी। विज्ञान की खोजो और अविष्कारो ने इस क्षेत्र मे मानव-जाति की बहुत सेवा की है। अब कोई रोग असाध्य नही रहा। अनेक घातक बीमारियो के टीके लगाकर उन्हे होने से ही रोक दिया जाता है। रोग-निदान की अनेक वैज्ञानिक विधियाँ खोज ली गई हैं और अनेक उपकरण तैयार कर लिए गये हैं जिनसे शरीर मे छिपे रोग का मूल कारण ज्ञात हो जाता है। प्रत्येक रोग की प्रभावशाली औषधियाँ भी खोज ली गयी हैं। इसके अतिरिक्त शल्य-चिकित्सा के क्षेत्र मे तो विज्ञान ने ऐसे चमत्कार कर दिखाये हैं कि कृत्रिम अगों का आरोपण

करके मनुष्य को नया जीवन प्रदान कर दिया जाता है। परखनली से सन्तानोत्पत्ति की बात भी कोई कम चमत्कारिक नहीं है।

5 **मनोरजन**—पुराने जमाने का आदमी किस्से-कहानी कह-सुनकर अथवा रगमच पर अभिनय, नृत्य और सगीत देखकर ही अपना मनोरजन करने को विवश था। विज्ञान ने उसकी इस विवशता को अब समाप्त कर दिया है। रेडियो, ग्रामोफोन सिनेमा, टेलीविजन और वीडियो जैसे साधनो का आविष्कार करके मनुष्य के लिए अच्छे से अच्छे मनोरजन की सुविधा जुटा दी है।

6 **बौद्धिक क्षमता मे वृद्धि**—विज्ञान के आधुनिकतम चमत्कारो मे गणनायन्त्रो और कम्प्यूटरो के आविष्कार है। इन यत्रो के आविष्कार से मनुष्य की बौद्धिक शक्ति मे अपार वृद्धि हो गई है। अब जटिल से जटिल गणितीय समस्याओ का अत्यन्त सरल और सही समाधान मनुष्य को सुलभ हो गया है। इसको चमत्कार कहा जाय या आश्चर्य दोनो ही शब्द हल्के प्रतीत होते है।

7. **अंतरिक्ष की खोज**—आकाश मे चमकने वाले सूर्य, चन्द्र और तारो को मनुष्य देवता समझकर उनकी पूजा करता रहा है। इसके अतिरिक्त अतरिक्ष के किसी रहस्य का पता न होने के कारण वह उसे ईश्वर का निवास-स्थान मानता रहा है। इसीलिए ईश्वर को ऊपरवाला कहा जाता है, किन्तु विज्ञान ने इस रहस्य पर से भी एक सीमा तक पर्दा हटा दिया है। अतरिक्ष यानो से प्राप्त जानकारी से अतरिक्ष की बहुत सी गुप्त जानकारियाँ मनुष्य को प्राप्त हो गई हैं। चांद पर तो मनुष्य सशरीर ही जाकर लौट आने मे सफल हो गया है। अभी हाल ही मे राकेश शर्मा तथा अन्य दो यात्रियो को अन्तरिक्ष मे भेजकर पुन सकुशल पृथ्वी पर बुला लेना विज्ञान का ऐसा चमत्कार है जिसे जादू मान लेने मे किसी को कोई सकोच नही करना चाहिए।

8 **सामरिक क्षमता मे वृद्धि**—एक युग था जब लाठियो, तलवारो और भालो से आमने-सामने खडे होकर युद्ध लडा जाता था जिसमे बाहुबल और सख्या बल की विजय होती थी। जब सीमा पर वे आततायी शत्रु आक्रमण कर देता था तो उसे रोकने और सीमा से बाहर खदेडने मे बहुत जन-हानि उठानी पडती थी। उस समय मानव यह अवश्य सोचता होगा कि उसके पास कोई ऐसी जादुई शक्ति होनी चाहिए जिससे अपनी सीमा से बैठे-बैठे ही वह आक्रान्ताओ को भस्म कर दे। मनुष्य की इस कल्पना को आज विज्ञान ने साकार कर दिया है। राकेट, मिसाइल, प्रक्षेपास्त्र तथा बमो के रूप मे उसके पास ऐसी शक्ति आ गई है कि वह सैकडो-हजारो मील दूर अपनी सीमा मे बैठे-बैठे ही शत्रु के ठिकानों पर आक्रमण कर सकता है और उसे मिट्टी मे मिला सकता है। युद्ध के उद्देश्य से ही निर्मित विशेष प्रकार के वायुयानो से शत्रु-सेना पर वज्रपात किया जा सकता है। नभ और स्थल के अतिरिक्त जल के भीतर घुसकर भी शत्रु की शक्ति को नष्ट कर देने के लिए पनडुब्बियो का अविष्कार कर लिया

गया है। मनुष्य की सामरिक क्षमता मे तो विज्ञान ने इतनी अधिक वृद्धि कर दी है कि आज विश्व सर्वनाश के भय से हाहाकार करने लगा है। विश्व के विकसित देशों के पास एटम बम, हाइड्रोजन बम और अन्य अनेक प्रकार के विनाशकारी शस्त्रों का इतना भंडार जमा हो गया है कि किसी भी युद्ध की एक छोटी सी चिंगारी इस विशाल बारूद खाने मे विस्फोट कर सकती है जिसकी लपेटों मे ससार का समस्त वैभव और विकास कुछ ही क्षणों में नष्ट हो जाने की आशंका सदा बनी रहती है। विज्ञान का यह चमत्कार यद्यपि मानवता के हित मे नही है, किन्तु इसे विज्ञान का आश्चर्यजनक चमत्कार न मानना भी तो उचित नही है।

9. उत्पादन में वृद्धि—विज्ञान ने कृषि और औद्योगिक उत्पादन मे असाधारण वृद्धि की है। एक जमाना था जब लोगो के पास आवश्यक वस्तुओं का अभाव था। अब मशीनो का आविष्कार हो जाने से बड़े-बड़े कल कारखाने स्थापित हो गये हैं जिनमे सभी वस्तुओं का उत्पादन इतना अधिक होता है कि सभी की आवश्यकताओं की पूर्ति होने के बाद भी निर्यात के लिए वस्तुएँ बच जाती हैं। इसी प्रकार बैलो और ऊँटों से सिंचाई करके किसान बहुत कम क्षेत्र मे अनाज का उत्पादन कर पाता था। अब वैज्ञानिक उपकरणों की सहायता से उत्पादन क्षमता मे बहुत वृद्धि हो गयी है। नल-कूपो का निर्माण करके विद्युत् और डीजल पम्पो की सहायता से वह बड़ी सरलता से बहुत बड़े क्षेत्र की सिंचाई कर लेता है। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक विधि से तैयार किये गये उन्नत बीज और रासायनिक खादो के प्रयोग से उसका उत्पादन बहुत अधिक बढ गया है। खेत की जुताई, बुआई तथा कटाई के लिए अब बैलो और ऊँटो के भरोसे नही रहना पडता। ट्रैक्टरो की सहायता से ये काम बड़ी जल्दी पूरे हो जाते हैं। वर्षा पर निर्भरता भी अब समाप्त हो गयी है। इसे विज्ञान का चमत्कार नही तो और क्या कहा जा सकता है?

उपसंहार—ईश्वर को सर्वशक्तिमान् और सर्वव्यापी कहा जाता है। उसकी महिमा अपार मानी जाती है और उसकी लीलाओं का गुणगान करने की सामर्थ्य गणेश, सरस्वती और शेषनाग में भी नही मानी जाती। विज्ञान को हम ईश्वर तो नही मान सकते क्योंकि उसकी शक्ति सीमित है, किन्तु आधुनिक युग मे मानव-जीवन मे उसकी सर्वव्यापकता और उसकी महिमा का विस्तार इतना अधिक है कि मनुष्य की वर्णन करने की क्षमता से परे है। इस दृष्टि से विज्ञान भी ईश्वरत्व के निकट है। हमारे शास्त्रों के मतानुसार ज्ञान और विज्ञान ईश्वर के ही रूप माने जाते हैं। ऐसी स्थिति मे विज्ञान के चमत्कारों को देखकर आश्चर्य तो होता है क्योंकि मानव द्वारा प्रतिपादित होते हैं किन्तु मानव भी तो ईश्वर की प्रिय सन्तान है और मानवता ईश्वरत्व के बहुत निकट है। इसलिए इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है। फिर भी विज्ञान के चमत्कार हमें आश्चर्य मे डाल ही देते हैं।

बाल्य–जीवन की सुखद स्मृतियाँ | 9

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—बाल्यावस्था का महत्त्व
2. सुखद स्मृतियाँ—भोलेपन की घटनाएँ
3. उपसंहार

प्रस्तावना—जीवन की प्रमुख रूप से तीन अवस्थाएँ होती हैं–बाल्यावस्था युवावस्था, और वृद्धावस्था। लोग युवावस्था को जीवन में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं जब समस्त प्रकार की शारीरिक और मानसिक शक्तियाँ पूर्ण उभार पर होती हैं। बचपन जवानी की प्रतीक्षा में सुखद कल्पनाएँ करता रहता है और बुढ़ापा जवानी का सुखद स्मृतियों में डूबकर पश्चाताप करता देखा जाता है। इससे युवावस्था का महत्त्व स्वतः सिद्ध हो जाता है किन्तु मेरे विचार से बाल्यावस्था से श्रेष्ठ कोई दूसरी अवस्था नहीं है। युवावस्था का महत्त्व अनेक दृष्टियों से बाल्यावस्था से अधिक हो सकता है, किन्तु आनन्द, निश्चितता, निर्भयता, निर्द्वन्द्विता, निष्कपटता, निर्लिप्ता, निस्वार्थता, स्वच्छन्दता और मौज मस्ती की दृष्टि से बाल्यावस्था जीवन की सर्वश्रेष्ठ अवस्था है। जिस अवस्था में केवल सुख ही सुख हो उस अवस्था का महत्त्व जीवन की अन्य अवस्थाओं से कम नहीं हो सकता, बल्कि उसकी तुलना किसी भी अन्य अवस्था से की ही नहीं जा सकती—

'अहा! बाल्य-जीवन भी क्या था! निरुपम निर्भय और निर्द्वन्द्व।
चिन्ता रहित खेलना-खाना, और फिरते रहना स्वच्छन्द॥'

विषय प्रवेश—मनोवैज्ञानिकों ने मनोविश्लेषण के आधार पर मानव-जीवन को अनेक अवस्थाओं में विभाजित किया है–जन्म से पाँच वर्ष तक शैशवावस्था, छः से बारह वर्ष तक बाल्यावस्था, तेरह से अठारह वर्ष तक किशोरावस्था, अठारह से चालीस वर्ष तक युवावस्था, चालीस से साठ वर्ष तक प्रौढ़ावस्था और साठ से आगे मृत्यु-पर्यन्त वृद्धावस्था। इस काल-विभाजन में छः से बारह वर्ष तक जो *बाल्यावस्था* का समय है, वह जीवन का सर्वश्रेष्ठ काल है। इस अवस्था में कितनी भावुकता, कितनी सरसता, कितनी मधुरता, कितनी मादकता और कितनी स्वच्छन्दता है इसका अनुमान हम इस अवस्था के बालकों की खिलखिलाहट से भरी उज्ज्वल हँसी को देखकर बड़ी सरलता से लगा सकते हैं।

मुझे अपने बचपन की सब बातें तो याद नहीं हैं, किन्तु जो घटनाएँ मुझे याद हैं उनकी सुखद स्मृतियाँ आज भी जीवन में मधुरता और सरसता का संचार

कर देती हैं। मेरा बचपन एक गांव मे ही बीता है। मेरा परिवार एक साधारण स्थिति का ही परिवार था। मेरे पिता की आर्थिक स्थिति अच्छी नही थी। हम पांच भाई-बहिन थे जिनमे मेरा नम्बर तीसरा था। इन सब बातो का पता तो मुझे बहुत बाद मे लगा है। अपने बचपन में इन जानकारियो से बेखबर था। मुझे अच्छी तरह से याद है कि गांव के एक मेरी ही आयु के बालक को घोडे पर बैठकर जाते देखकर मैं मचल गया था और अपने लिए वैसा ही लाल घोडा लाने के लिए अपने पिताजी के आगे हठ ठान ली थी। पिताजी ने जब मुझे दो-चार दिन बाद घोडा ला देने का पक्का आश्वासन दिया था तभी मैंने अन्न-जल ग्रहण किया था। सुबह से शाम तक जब भी मुझे पिताजी दिखाई देते, मैं घोडा लाने का स्मरण दिलाना नहीं भूलता था। मैंने घोडा लाने की जिद तभी छोड़ी थी जब दो-चार दिन बाद पिताजी ने मुझे लाल घोडे की पीठ पर बैठने वाले बालक की टांग टूट जाने की खबर सुनाई और लकडी के डडो को बांधकर उस पर लाल कपड़ा लपेट कर उसे घोडा बतला कर मुझे उस पर बिठा दिया था। मैं उस पर ही उचक-कर घोडे की सवारी जैसा आनन्द लेता हुआ प्रसन्न हो गया था। अब जब मुझे उस घटना की याद आती है तो मैं सोचने लगता हूँ कि वह जीवन कितना भला था।

मैं जब कुछ बडा हुआ तो पिताजी ने मुझे पाठशाला में भर्ती करा दिया। मेरा वहाँ पढाई मे तो मन कम लगता था लेकिन मेरी ही उम्र के बच्चों के साथ खेलने मे मुझे बहुत आनन्द आता था। घर से कलेवा करके जल्दी ही निकल जाता था और छुट्टी होने के बाद भी खेलता ही रहता था। दिन मे भूख लगती तो जो लडके घर से रोटी लाते थे उन्ही के साथ बैठकर रोटी खा लेता था। जात-पाँत का भेद-भाव और ऊँठ-जूँठ मैं जानता ही नही था। एक दिन जब मेरी बडी बहिन ने मेरी औरो के साथ बैठकर एक ही पत्ते पर रोटी खाने की शिकायत घर पर कर दी तो मैं खूब पिटाई खाकर भी यह नही समझ पाया था कि मेरी गलती क्या है? साल भर बाद परीक्षा हुई। मुझे क्या पता था कि परीक्षा देना आवश्यक होता है। उधर परीक्षा होती रही और मैं अपने पक्के दोस्तों के साथ बाग मे माली की आँख बचाकर मीठे बेर खाता रहा। परीक्षा-परिणाम सुनाया गया तो मैं फेल घोषित हुआ। मुझे क्या पता था कि फेल होना बुरी बात होती है। मैंने घर पर जाकर खुशी-खुशी अपने फेल होने का सवाद सुना दिया और खूब जोर से हँसा। मुझे अच्छी तरह से याद है, मेरे इस भोले पन पर मेरे माता-पिता भी खूब हँसे थे और मुझे डांटने-फटकारने के बजाय छाती से लगा लिया था।

एक बार मेरे दादाजी बीमार हुए और कुछ दिनो के बाद वे मर गये। घर मे कई दिनो तक रोना-धोना चलता रहा। मैने माँ से पूछा तो माँ ने बतलाया कि जो मर जाता है वह ऊपर आसमान मे भगवान के घर चला जाता है और फिर लौटकर नही आता। इसलिए सब लोग उसको याद कर करके रोते हैं। मैं तभी

चुपके से घर से निकल पडा और गाँव मे अपने परिचित सभी बालको को इस रहस्य की जानकारी देकर आया। कुछ दिनो बाद हमारे घर मे खूब लड्डू बनाये गये। ऊपर की मजिल वाला कमरा लड्डुओ से भर दिया गया। दूसरे दिन जीमण होने वाला था। शाम को नीचे दालान मे सब लोग बैठे बातें कर रहे थे। मेरे मामाजी ने कहा "लड्डू तो खूब हैं। कितने ही जीमने वाले लोग आ जाओ, कम नही पडेंगे।" तभी बूढा घासी बाबा बोला, "अरे चिन्ता क्यो करते हो ? अगर कम पडते दीखेंगे तो कोठ्यार मे लड्डुओ को थोडी देर धूप दे देंगे फिर हर्गिज कम नही पड सकते।" हम बच्चे भी वही बैठे उनकी बातें सुन रहे थे। जब सब लोग उठकर चले गये तो हमने एकान्त मे जाकर सलाह की। हम दो भाई-बहिन सराई मे आग का खीरा और धूप का डिब्बा ले आये। चुपके से आँख बचाकर लड्डुओ के कोठ्यार में घुस गये। दीपक वहाँ पहले से ही जल रहा था। हमने खीरे को सराई रखकर धूप देना शुरू कर दिया कि ध्यान आया कि इस तरह तो सब लड्डुओ को धूप नही लगेगी, इसलिए सराई को उठाकर पूरे कमरे मे घुमाने की योजना बनाई। किन्तु जैसे ही सराई को उठाने लगे वह गरम होने के कारण हाथ से छूट गई और खीरे की आग लड्डुओ पर बिखर गई। लड्डुओ के नीचे बिछा कपडा भी जल गया। हम डरे और घबराये लेकिन हिम्मत स काम लिया। जैसे-तैसे हमने आग को बुझा दिया। अब समस्या यह थी कि लड्डू राख से काले हो गये है, उनको कैसे साफ किया जाय। आखिर एक उपाय सूझा और हमने लड्डुओ को उठा-उठा कर खिडकी मे से पीछे बाडे मे फेंकना शुरू कर दिया। जब काफी देर तक धमाधम की आवाज होती रही तो किसी के कान मे भनक पड गई। उसने हल्ला मचाना शुरू कर दिया— "कोठ्यार मे कौन है ? लड्डू कौन फेंक रहा है ?" यह सुनते ही हम चुपचाप वहाँ से खिसक गये और अपने बिस्तरो मे जाकर दुबक गये। रात भर खूब ही हल्ला होता रहा। हम साँस खीचे पडे रहे। दूसरे दिन जीमण हुआ। खूब लोग जीम गये फिर भी लड्डू बच गये। हम दोनो भाई-बहन प्रसन्न थे कि हमारी ही कार गुजारी से इतने लड्डू बचे हैं। मुझसे रहा नही गया और दूसरे दिन पिताजी को सारा किस्सा सुना दिया। सुनकर पहले तो हँसे और फिर खूब डाँटा-फटकारा और हमारे इस कार्य को मूर्खतापूर्ण बतलाया। जो भी हो, हम तो यही मानते रहे कि हमारी चतुराई से ही इतने लड्डू बचे वरना जीमने वाले तो बहुत आये थे, सारा सामान खा जाते।

मुझे अच्छी तरह से याद है कि एक बार मेरे किसी बडे अपराध पर पिताजी ने मुझे खूब पीटा था। इतना पीटा था कि कुछ जगहो पर मेरे गहरी चोटें आई थी। मैं फफक-फफक कर खूब रोया था और रोते-रोते ही मै माताजी के पाँव का सहारा लेकर भूखा-प्यासा ही सो गया था। मेरे मन मे पिताजी के प्रति बहुत बुरे-बुरे भाव उत्पन्न हुए थे और मैन मन ही मन उनसे कभी न बोलने का निश्चय कर लिया था। कुछ देर बाद पिताजी बाजार से पेडे लेकर आये। मेरे पास ही बैठकर

उन्होंने जोर-जोर से कहना शुरू किया, "जो मेरी गोद में बैठेगा, उसे ही पेड़े मिलेंगे।" मेरे भाई-बहिन दौड़ कर चले आये और हल्ला मचाने लगे। इस गुल-गपाड़े में मेरी आंख खुल गई। पिताजी ने फिर वही बात दोहरायी। उनके हाथ में पेड़े देखकर मैं दौड़कर उनकी गोद में चला गया। उन्होंने मुझे बार-बार चूमा और सबसे अधिक पेड़े मुझे ही खिलाये। मैं पिताजी से खूब प्रसन्न हो गया और उनकी प्रशंसा करने लगा।

मेरे पास पहनने को एक ही कमीज थी। वह जगह-जगह से फट गई थी और उसमें छेद निकल आये थे। मुझे गाँव के लड़के उस कमीज को देखकर चिढ़ाते रहते थे। मैंने पिताजी से नयी कमीज बनवाने के लिए कहा तो उन्होंने मुझे समझाया कि आजकल गर्मी का मौसम है। छेद वाली कमीज में से शरीर को हवा लगती रहती है। यह तो एक अच्छी बात है। यह बात मेरी समझ में पूरी तरह से आ गई। मैंने दूसरे लड़कों को भी बतलाई तो वे चुप हो गये। उनमें से एक लड़के ने उसी समय अपनी नई कमीज को खोलकर कई छेद बना लिये और खूब प्रसन्न हुआ।

उपसंहार—बाल्य-जीवन एक ऐसा आनन्दमय जीवन होता है जिसमें न कोई चिन्ता होती है और न कोई जिम्मेदारी। अपनी कल्पना की दुनियाँ में हम इस तरह खोये रहते हैं जैसे वही हमारी असली दुनियाँ है। ऊँच-नीच, भेद-भाव और अपना-पराया का भाव मन में आता ही नहीं। जो प्यार से बोल दिया वही अपना और जिसने इच्छा पूरी नहीं की वही पराया। कुछ पहले झगड़ा और फिर कुछ देर बाद ही मित्रता। काम केवल खेलने का और चिन्ता केवल मित्रों की। कैसा होता है वह अलौकिक जीवन जिसमें छल-कपट को कोई स्थान नहीं। मानापमान का कोई विचार नहीं। जो मिल गया उसी में सन्तोष और जिसने प्यार से जो कुछ समझा दिया वही सत्य। ऐसे स्वर्गिक बाल्य-जीवन की सुखद स्मृतियाँ किसे याद नहीं आती होंगी। बड़ा होने पर तो कोई बिरला ही बादशाह बनता है लेकिन अपनी बाल्यावस्था में हर मनुष्य बादशाह होता है और बचपन की बादशाहत ही सच्ची बादशाहत है जिसमें केवल आनन्द ही आनन्द है।

□□□

जब मेरा परीक्षा-परिणाम आया | 10

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना

2 परिणाम की प्रतीक्षा—मस्तिष्क मे अनेक प्रकार के विचार उठना

3 परिणाम की तिथि की घोषणा—परिणाम प्रकाशित होना

4 प्रसन्नता की अनुभूति और बधाइयाँ

5. उपसंहार

1. प्रस्तावना—हम बराबर यही सुनते और पढते आये हैं कि कर्म का फल अवश्य मिलता है। जो जैसा कर्म करता है, वह वैसा फल ही भोगता है। अच्छा कर्म करने वाला अच्छे कर्म का भागी बनता है और बुरा कर्म करने वाले को बुरा फल भोगना ही पडता है। अनेक अवसरो पर हम इस मान्यता को चरितार्थ होते भी देखते है किन्तु परीक्षा के मामले मे मेरी मान्यता थोडी भिन्न है। इसका कारण मेरा निजी अनुभव है। मैंने रात-दिन घोर परिश्रम करने वाले विद्यार्थियो को अनुत्तीर्ण होते देखा है और दिन भर खेलने-कूदने वाले और अपना अधिकाश समय पढाई के अतिरिक्त अन्य कार्यों मे ही खर्च करने वाले विद्यार्थियो को उत्तीर्ण होते देखा है। हाँ, अच्छे अ को से पास होना परिश्रम पर निर्भर है, यह भी मैंने अनुभव किया है। इसलिए परीक्षा परिणाम के बारे मे मेरी मान्यता यह बन गई है कि इसमे कर्म के साथ भाग्य का योग भी होना आवश्यक है।

2. विषय-प्रवेश—मैंने इस वर्ष हायर सैकण्डरी की परीक्षा दी थी। मेरी परीक्षा चार अप्रै ल को समाप्त हो गई थी। परीक्षा-समाप्ति पर मैंने बड़ी राहत महसूस की थी। ऐसा लगा था कि जैसे सिर से कोई भारी बोझा उतर गया हो। परीक्षा के दिनो मे और उससे पहले, परीक्षा की चिन्ता सवार रहती थी। हमेशा पढाई ही पढाई की धुन सवार थी। खेलना-कूदना करीब-करीब बन्द सा ही था। न ठीक से भूख लगती थी और न नींद आती थी। जब परीक्षा समाप्त हुई तो मैं खूब सोने लगा और दिन भर इधर-उधर घूमने-फिरने तथा खेलने-कूदने मे ही

मेरा समय बड़ी मौज-मस्ती मे ही बीता। लेकिन मौज-मस्ती का समय अधिक नही टिक सका। जल्दी ही जून के प्रारम्भ होते ही मेरे मन मे परीक्षा-परिणाम का भय बैठ गया। ज्यो-ज्यो दिन बीतते त्यो-त्यो भय और आशका बढती जाती थी। मैं जब यह सोचता कि मेरे प्रश्न-पत्र तो सभी अच्छे हुए हैं, मैंने परीक्षा के तुरन्त बाद प्रश्न-पत्रों के उत्तरों का मिलान पुस्तकों से कर लिया था, सब सही थे तो मुझे विश्वास होता था कि मै निश्चित ही उत्तीर्ण होऊँगा। अधिक से अधिक यही होगा कि प्रथम श्रेणी मे पास न होकर द्वितीय-श्रेणी मे हो जाऊँगा। या फिर ज्यादा ही किस्मत खोटी हुई तो तृतीय श्रेणी मे तो सन्देह ही क्या है! इन विचारो से मन को बडी शान्ति मिलती थी किन्तु इनके साथ ही साथ दूसरे प्रकार के विचार भी उठते थे। यदि प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण नही हो सका तो मेरा भविष्य कैसे सुधरेगा? तृतीय श्रेणी मे पास होना तो फेल होने से भी बुरा है। और यदि दुर्भाग्यवश फेल हो गया तो फिर क्या होगा? मैं घर पर क्या मुँह दिखाऊँगा? पास-पड़ौस और मित्रों में कैसी खिल्ली उड़ेगी? मेरा भविष्य कितना अन्धकार मय हो जायगा? इन विचारो से कभी-कभी मस्तिष्क मे इतना तूफान आ जाता था कि मेरी इच्छा होती कि मै कही एकान्त मे बैठकर रोऊँ। लेकिन तभी अन्य विचार मस्तिष्क मे आ जाते। 'ऐसा हो ही नही सकता। मै आज तक कभी अनुत्तीर्ण हुआ ही नहीं। हमेशा द्वितीय श्रेणी मे पास हुआ हूँ। मै हनुमान जी का भक्त हूँ। हर बार पास होने पर पाँच रुपये का प्रसाद चढ़ाता हूँ। इस बार ग्यारह रुपयों का चढ़ाने की मनौती मे बोल चुका हूँ। इस बार परिश्रम भी मैंने खूब किया था। विद्यालय में अध्यापक और घर पर माता-पिता मुझे प्रथम श्रेणी में पास होने का आशीर्वाद दे चुके हैं। क्या उनके आशीर्वाद झूठे हो सकते हैं?' इन विचारो से मेरा मुरझाया मन फिर खिल उठता था लेकिन जब कभी किसी परिश्रमी विद्यार्थी की फेल हो जाने की घटना याद आ जाती तो मेरा हृदय कांप उठता था।

इसी प्रकार आशा-निराशा, चिन्ता, विश्वास और आशका की स्थिति मे डूबते-तैरते दिन शीघ्रता से गुजरते जा रहे थे। सोलह जून के अखबार मे मैंने पढा कि मेरा परीक्षा-परिणाम 20 जून को प्रकाशित होगा। इस समाचार से उत्सुकता और प्रसन्नता तो हुई किन्तु साथ ही चिन्ता और आशका भी पैदा हुई। यह समाचार पिताजी ने भी पढा तो मुझे बुलाकर कहा कि मेरा परिणाम निकलने में अब तीन ही दिन बीच में रह गये हैं। यह सुनकर मेरा चेहरा और भी उतर गया। पिताजी मेरे मन के भाव ताड गये। उन्होने मुझे समझाया, "अरे! तुम तो उदास हो रहे हो। तुम्हे तो खुश होना चाहिए, क्योकि तुम्हारी तपस्या का फल मिलने का समय आ रहा है। उदास तो उसे होना चाहिए जिसने परिश्रम न किया हो और अपने कर्त्तव्य-पालन में लापरवाही बरती हो। तुमने तो मन लगाकर

खूब परिश्रम किया था। परिश्रम कभी व्यर्थ नही जाता। तुम निश्चित रूप से प्रथम श्रेणी मे पास होगे।" यह कहकर पिताजी वहाँ से चले गये। मुझमे भी थोडा आत्म विश्वास जाग गया। मेरी उदासी दूर हो गई और मैं मित्रो से मिलने चला गया।

बीच के ये तीन दिन बडी कठिनाई से बीते। पिताजी की बात का मुझ पर कुछ ऐसा प्रभाव हुआ कि मैं अपने उत्तीर्ण होने के विषय मे पूर्ण आश्वस्त हो गया। अब मे बीस जून की बडी आतुरता से प्रतीक्षा करने लगा। मैं चाहता था कि यह तीन दिन का समय जल्दी से बीत जाय और बीस जून की सुबह शीघ्रता मे आ जाय जिसके स्वर्णिम प्रकाश मे मै अपने स्वर्णिम भविष्य के दर्शन करसू"। इन दिनो मेरी ईश्वर-भक्ति भी बहुत अधिक बढ गयी थी। मैं हनुमानजी की मूर्ति के सामने बैठकर हनुमान चालीसा के कई बार पाठ करता और बार बार अपने इष्टदेव से अपनी साहयना का वरदान मांगता था। किसी प्रकार ये तीन दिन बीते और उन्नीस जून की शाम को हनुमान जी के मन्दिर से लौटता हुआ मै अपने मित्र रजनीकान्त से दूसरे दिन सुबह परीक्षा-परिणाम देखने जाने का कार्यक्रम निश्चित करके घर लौटा। भोजन से निवृत होकर मैं जल्दी से बिस्तर पर लेट गया। मैं चाहता था कि जल्दी ही सोजाऊँ ताकि सुबह जल्दी ही उठ सकू" किन्तु नीद मेरी आँखो के नजदीक हो नही आती थी। मैं बार बार अपना ध्यान परीक्षा-परिणाम के विचारो से हटाकर सोने का प्रयत्न करता था किन्तु वे ही विचार पुन मेरे मस्तिष्क मे छा जाते और नीद नही आ सकी। इसके बाद कब मेरी आँख लगी, मुझे पता नही।

सुबह ठीक पाँच बजे मेरी आँख खुल गई। मैं शीघ्रता से नित्य कर्मो से निवृत हुआ, स्नान किया, नाश्ता किया और कपडे पहनकर छ बजे घर से निकल पडा। रजनीकान्त भी अपने घर पर तैयार होकर मेरी प्रतीक्षा ही कर रहा था। हम दोनों अखबार के कार्यालय की ओर चल पडे। कार्यालय के बाहर काफी भीड लग रही थी। उस भीड मे अनेक लडके और अन्य लोग मेरे परिचित भी थे। सबसे मैंने नमस्कार-अभिवादन किया और हाथ मिलाया। वे सब भी परीक्षा-परिणाम देखने ही आये थे। हम लोग इधर-उधर की बाते करते हुए प्रतीक्षा करने लगे। करीब एक घटे बाद एक हाकर अखबारो का बडल लेकर बाहर निकला। भीड ने उसे घेर लिया। हाकर ने अवसर का लाभ उठाते हुए पच्चीस पैसे के अखबार का एक रुपया लेना शुरू कर दिया। देखते-देखते उसके सारे अखबार बिक गये। उस भीड मे घुसकर रजनीकान्त भी एक अखबार ले आया। हम दानो दिल थामे उस अखबार मे अपना रोल नम्बर तलाश करने लगे। हमने पहले द्वितीय श्रेणी मे अपना परिणाम देखा। कुछ देर बाद रजनीकान्त का रोल नम्बर

मुझे दिख गया। मैंने उसे दिखाया तो वह उछल पड़ा। मैं आगे और देखना चाहता था, लेकिन उसने मुझे अपनी बाहों में उठाकर चारों तरफ घुमाना शुरू कर दिया। कुछ क्षणों तक वह खुशी में न जाने क्या-क्या कहता रहा। मुझे उसका यह दीवानापन अच्छा नहीं लग रहा था। मैंने उसके हाथ से अखबार छीन लिया और अपना रोल नम्बर देखने लगा। अब वह भी शान्त हो गया अखबार में देखने लगा। हमने पूरी सूची देख डाली। मेरा रोल नम्बर नहीं दिखा। मैं उदास हो गया। रजनीकान्त ने कहा, "अरे ! पूरा अखबार तो देख लेने दे। हो सकता है तेरा रोल नम्बर प्रथम श्रेणी में हो।" अब हम प्रथम श्रेणी की सूची देखने लगे। यकायक हम दोनों की नजर मेरे रोल नम्बर पर एक साथ जा पड़ी। अब तो हम दोनों खुशी से नाचने लगे। दोनों एक-दूसरे के चिपट गये। उस समय की प्रसन्नता का अनुमान कोई अनुभवी ही लगा सकता है। तन और मन दोनों प्रफुल्लित हो रहे थे। मुझे सब ओर खुशियाँ ही खुशियाँ नजर आ रही थीं। हमारी सूरत से ही सब लोग जान रहे थे कि हम उत्तीर्ण हो गये हैं। इसलिए हमारे परिचित लोग और मित्र बिना पूछे ही हमको बधाइयाँ दे रहे थे। कुछ देर हम इसी तरह प्रसन्न मुद्रा में खड़े अपने मित्रों से मिलते-जुलते रहे। धीरे-धीरे वहाँ भीड़ कम होने लगी। मैंने भी एक अखबार और खरीदा और उसके बाद हम वहाँ से चल पड़े।

सबसे पहले हम हनुमानजी के मन्दिर में गये। वहाँ प्रसाद चढ़ाया और तिलक लगाया। फिर घर की तरफ चल पड़े। मार्ग में जो भी परिचित मिलता तो या तो पूछ लेता या फिर मैं ही अपने परीक्षा-परिणाम के बारे में उसे बता देता। इस प्रकार बधाइयाँ और शाबाशियाँ लेता हुआ मैं घर पहुँचा। घर पर पिताजी मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने दूर से ही पहचान लिया कि मैं सफल होकर आ रहा हूँ। मैंने नजदीक जाकर उनके चरण स्पर्श किये। उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रखकर खूब आशीर्वाद दिये। माताजी को पता लगा तो वे फूली नहीं समाई। उनकी आँखों में खुशी के आँसू छलक आये। मेरी छोटी बहिन तो समाचार सुनकर खूब नाचने लगी और नाचते-नाचते पास-पड़ौस में सब जगह खुशखबरी सुना आई। हम बैठक के कमरे में ही बैठे थे। पड़ौस के लोग आकर बधाई देने लगे और मिठाई माँगने लगे। सब लोग मेरी खूब प्रशंसा कर रहे थे और मैं फूलकर कुप्पा हुआ जा रहा था। बधाइयों का यह सिलसिला कई दिनों तक चलता रहा।

उपसंहार—परीक्षा में सफल होने पर इतनी प्रसन्नता और इतने उल्लास का यह मेरा पहला ही अवसर था। मेरी इस सफलता का मेरे पड़ौसी और रिश्तेदार आज भी उदाहरण देते हैं। अब जब मैं शान्तचित से इस विषय पर विचार करता हूँ तो मेरे ध्यान में यह बात आती है कि जिन साधनों से

मैंने यह सफलता प्राप्त की है, उन साधनों को जीवन मे मुझे स्थायी रूप से अपना लेना चाहिए। मेरे ये साधन हैं—नियमितता, कठोर परिश्रम और ईश्वर मे दृढ़ विश्वास। इन साधनो के बल पर मैं जीवन मे आने वाली कठोरतम परीक्षाओ मे भी इसी तरह उत्तीर्ण हो जाऊँगा। जिन्हे मेरी ही तरह लगातार सफल होते रहने की चाह हो वे मेरे द्वारा बतलाये गये साधनो को आजमाइश करें यदि वे सफल न हों तो मेरा सर कलम करवादें और यदि सफल हो जावें तो यह नुस्खा औरो को भी बतलादें।

□□□

11 | एक विकसीत ग्राम

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. ग्राम का विकसित स्वरूप—आवागमन की सुविधा, नल-विद्युत आदि सुविधाएँ, शिक्षा-चिकित्सा तथा अन्य आधुनिक सुविधाएँ,
3. वैचारिक विकास
4. आर्थिक विकास
5. उपसंहार

प्रस्तावना—भारत को गाँवो का देश कहा जाता है। इसका कारण यह है कि इस देश मे गाँवो की सख्या बहुत अधिक है। यहाँ की लगभग 75 प्रतिशत जनता गाँवो मे ही निवास करती है। गावो के लोग सदियो से शोषण तथा अत्याचारों के शिकार होते रहे हैं। जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओ से भी वंचित रहने वाले ग्रामीण लोग आज भी बहुत पिछड़े हुए हैं। सामाजिक, आर्थिक और वैचारिक दृष्टि से आज भी वे लोग बहुत अधिक पिछड़े हुए हैं। अशिक्षा और निर्धनता का वहाँ अब भी साम्राज्य स्थापित है। इसका प्रमुख कारण विदेशी सरकार द्वारा ग्राम विकास के लिए प्रयत्न न करना ही रहा है। स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद हमारी सरकार ने ग्रामोत्थान के प्रयास किये हैं और आज भी ग्राम-विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जा रही है। पिछले 30-35 वर्षों में अनेक ग्राम विकसित हुए हैं, जिनमे विराट नगर तहसील का एक ग्राम 'चाँदणा' भी है जो आजकल अपने विकसित नाम 'चन्दन पुर' के नाम से जाना जाता है।

विषय-प्रवेश—चन्दनपुर आज एक ऐसा विकसित ग्राम है जिसे आदर्श ग्राम भी कहा जा सकता है। आज चन्दनपुर को देखकर कोई यह अनुमान भी नही लगा सकता है कि कभी यह भारत के पिछड़े हुए अन्य गाँवो की तरह ही एक पिछड़ा हुआ ग्राम रहा होगा। उसका विकसित स्वरूप हम निम्नलिखित बिन्दुओ के आधार पर स्पष्ट रूप से देख सकते हैं—

1. आवागमन की सुविधा—चन्दनपुर तहसील मुख्यालय, जिला मुख्यालय तथा आस-पास के अन्य क्षेत्रो से जुड गया है। गाँव के भीतर और बाहर पक्की सड़के बन गई हैं जिनमे आवागमन की पूर्ण सुविधा उपलब्ध हो गई है। इस सुविधा

से नागरिकों का जीवन बहुत सुखी और विकसित हो गया है। अब वे लोग बाहर के सम्पर्क में बराबर आते रहते हैं और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उन्हें विवश होकर किसी का मुँह नहीं ताकना पड़ता। एक समय था जब पांच मील लम्बा कच्चा रास्ता पैदल पार करने पर ही इस गाँव में पहुँचना सम्भव होता था। कोई गम्भीर दुर्घटना हो जाने अथवा गम्भीर रूप से किसी के बीमार हो जाने पर भी पीड़ित व्यक्ति आवश्यक चिकित्सा-सुविधा से वंचित ही रह जाते थे।

2 नल बिजली की सुविधाएं—एक नगर की भाँति चन्दनपुर में भी अब नल और बिजली की पूर्ण सुविधा उपलब्ध हो गई है। अब गाँव की स्त्रियों को दिन भर कुए से पानी लाने रहने में अपना समय बर्बाद नहीं करना पड़ता। घर और बाजार की दूकानें रात के समय बिजली की रोशनी से चमकते रहते हैं। बिजली से चलने वाले सुविधा के साधन जैसे—पंखा फ्रिज और टेलिविजन आदि चन्दनपुर के निवासियों को आराम देने लगे है। आटे की चक्की तथा अन्य छोटी-मोटी मशीनें गाँव में लग जाने के कारण ग्राम वासियों को दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए रोजाना शहरों की ओर नहीं भागना पड़ता।

3. शिक्षा तथा चिकित्सा-सुविधाएं—चन्दनपुर में हायर सैकण्डरी स्तर के लड़के और लड़कियों के अलग अलग सरकारी विद्यालय खुल गये हैं। इनके साथ ही प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यालय भी चल रहे हैं। गाँव के लड़के-लड़कियों को गाँव में ही शिक्षा की सुविधा उपलब्ध हो जाने के कारण अब चन्दनपुर और उसके आस-पास के क्षेत्रों में शिक्षा का तीव्र गति से प्रसार होता जा रहा है। इससे ग्राम की जनता के विचारों में काफी परिवर्तन आ गया है। अब वे पिछड़े हुए नहीं रहे हैं। उनमें जागृति उत्पन्न हो गई है और वे अपने कर्त्तव्यों तथा अधिकारों के विषय में पूर्ण जागरूक बन गये हैं।

एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, एक आयुर्वेदिक औषधालय तथा एक पशु-चिकित्सालय की स्थापना हो जाने के कारण अब चन्दनपुर में सभी प्रकार की चिकित्सा-सुविधाएं उपलब्ध हो गई हैं। अब यहाँ के निवासियों को चिकित्सा के अभाव में बेमौत नहीं मरना पड़ता। झाड़ फूँक और मन्त्र-तन्त्र जैसे अन्ध विश्वासों से भी उन्हें मुक्ति मिल गई है। समय पर रोग-निरोधक टीके लगवाने, बीमारियों की रोकथाम के अन्य उपाय अपनाने तथा परिवार-कल्याण के उपायों को काम में लेने के प्रति वे लोग पूर्ण सावधान और जागरूक बन गये हैं।

4. आर्थिक विकास—ग्राम के अधिकांश लोगों की आजीविका का साधन आज भी कृषि और पशु-पालन ही है किन्तु अब ग्राम में जमींदारी प्रथा बिलकुल समाप्त हो गई है। किसान ही अपनी उपज का स्वामी है। सिंचाई की सुविधाओं का विकास होने, कृषि यंत्रों को उपयोग में लाने तथा उन्नत बीज और खाद का प्रयोग सीख जाने के कारण किसान भरपूर फसल प्राप्त करते हैं। उनका शोषण करने वाले बिचौलियों का अब चन्दनपुर में कोई अस्तित्व ही नहीं रह गया है। इस ग्राम

के किसानो की आर्थिक स्थिति मे पर्याप्त सुधार हुआ है। सदियो से फूस की टूटी झोपडियों मे पशुओ के समान जीवन व्यतीत करने वाले किसान अब पक्के मकानों और ऊँची हवेलियो मे निवास करते हैं। किसानों की आर्थिक स्थिति मे सुधार हो जाने के कारण पूरे गाँव का ही आर्थिक विकास हो गया है। अब गाँव का कोई भी व्यक्ति फटे हाल दिखाई नही देता। सब सुखी, प्रसन्न और समृद्ध दिखाई पड़ते हैं।

5. अन्य सुविधाएँ—चन्दनपुर में अनिवार्य सुविधाओ के अतिरिक्त अन्य वाछित सुविधाएँ भी उपलब्ध हैं। गाँव के बाहर बस-स्टैंड के पास ही एक पुलिस चौकी स्थापित हो गई है, इससे यहाँ के नागरिको को जान-माल की सुरक्षा की सुविधा प्राप्त हो गई है। हम सुना करते हैं कि इस गाँव मे चोरो और डाकुओ का बहुत आतक था। इसके अलावा जमीदारों की मनमानी भी खूब चला करती थी। अब पुलिस चौकी स्थापित हो जाने के बाद स्थिति मे काफी सुधार हो गया है। गाँव के मुख्य बाजार मे राष्ट्रीयकृत बैंक की एक शाखा भी खुल गई है जिससे लोगों को उचित ब्याज की दर पर आवश्यकतानुसार ऋण उपलब्ध हो जाता है। इस सुविधा से साहूकारो का शोषण-चक्र अब बिल्कुल ठडा पड़ गया है और लोग बहुत राहत महसूस करने लगे हैं। अपनी छोटी-छोटी बचतो को भी बैंक में सुरक्षित रखने की उन्हें सुविधा मिल गई है। बैंक के पास ही एक डाकघर भी खुल गया है जिसमे टेलीफोन की सुविधा भी उपलब्ध है। लोग अपनी आवश्यकतानुसार इन सुविधाओ का लाभ उठाते है और अनेक प्रकार की हानियों तथा परेशानियों से बच जाते हैं।

6. सामाजिक विकास—चन्दनपुर के निवासी सामाजिक दृष्टि से भी बहुत विकसित हो गये हैं। गाँव में प्रायः सभी धर्म और जाति के लोग रहते हैं किन्तु उनमे पूर्ण एकता, सद्भाव और भाईचारे की भावना देखी जाती है। उनमे अन्ध-विश्वास, रूढ़ियो और छुआ-छूत की भावना लगभग समाप्त हो गई है। दहेज-प्रथा, पर्दा प्रथा आदि सामाजिक बुराइयों को वे धीरे-धीरे समाप्त करते जा रहे हैं। मृत्यु-भोज और महाभोज जैसे निरर्थक और हानिकारक आयोजनो मे उनकी रुचि घटती जा रही है। वह दिन दूर नही, जब चन्दनपुर के निवासी इन सब बुराइयों से पूर्णत: मुक्त हो जायेंगे और देश के अन्य ग्रामो की जनता के सामने अपना उदाहरण प्रस्तुत कर सकेंगे।

चन्दनपुर की ग्राम-पचायत एक आदर्श संस्था है। ग्राम-विकास और ग्राम के निवासियो की भलाई के काम करना ही उसका एक मात्र लक्ष्य है। ग्राम पंचायत ने ही ग्राम-विकास मे अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पुराने समय से बेतरतीब बसे हुए ग्राम को एक सुन्दर नक्शा बनाकर पुनः व्यवस्थित रूप से बसाने का काम ग्राम-पंचायत ने ही किया है। अब गाँव में न आवागमन की असुविधा है और न आवास की। ग्राम के ठीक मध्य में एक पूर्ण विकसित बाजार है जो एक मंडी का

सा दृश्य उपस्थित करता है। ग्राम की चारो दिशाओ मे आवासीय मकानो के मध्य मे सुन्दर पार्क बने हुए हैं जिनमे बालक खेलते हैं और बड़े भी मनोरजन के लिए वहाँ जाते हैं। पूरे गाँव मे स्वच्छता और प्रकाश की ऐसी सुन्दर व्यवस्था है कि गन्दगी कही नही दिखाई पडती। पहले इस गाँव मे शराब के ठेके की दूकान थी। लोग शराब पीकर अट-शट बकते थे और आने जाने वालो को छेडते रहते थे। ग्राम पचायत ने ही अपने प्रयत्नो से वह दूकान हटवाई। इससे ग्राम मे बहुत शान्ति हो गई और अनेक ग्रामवासी शराब पीने की लत से छुटकारा पा गये। गाँव के बाहर से आने वाले सरकारी कर्मचारी और अधिकारियो के साथ ग्रामवासी बहुत अच्छा वर्ताव करते हैं। उन्हें आवास की अच्छी सुविधा उपलब्ध कराने के साथ-साथ हर प्रकार से उनकी सहायता करते हैं किन्तु यदि कोई कर्मचारी अथवा अधिकारी भ्रष्टाचार करता है या अपने कर्त्तव्य-पालन मे शिथिलता बरतता है तो वे उसका सामाजिक बहिष्कार कर देते हैं और उसे वहाँ से स्थानान्तरित करवाके अथवा नौकरी से निकलवा कर ही दम लेते हैं। इस गाँव के नेता और यहाँ की जनता किसी राजनैतिक दल विशेष से अपना सम्बन्ध नही रखते। चुनाव के समय वे उसी नेता अथवा दल को अपना मत देते हैं जो उनके ग्राम के विकास मे सहायता करता है।

7. उपसहार—आजादी के बाद हमारी लोकप्रिय सरकार ने ग्राम-विकास के लिए अनेक प्रयत्न किये हैं। किन्तु उनका पूरा लाभ गाँवो की जनता को प्राप्त नही हो सका है। इसका प्रमुख कारण गाँवो की जनता का भोलापन और पिछड़ापन ही है। चालाक राजनेता उन्हे उल्टा-सीधा बहकाकर अपनी स्वार्थ-सिद्धि करते रहते हैं। जातिवाद और वर्गवाद की भावना फैलाकर उनमे फूट के बीज बोते हैं और उनकी आपसी फूट से स्वय लाभान्वित होते रहते हैं। अत्यन्त पिछड़े और गरीब लोगो की भलाई के लिए खर्च की जाने वाली सरकारी रकम का वे दुरुपयोग करते हैं और सहायता के वास्तविक अधिकारी ग्रामीण सहायता से वचित रह जाते हैं। ग्राम विकास सच्चे रूप मे हमारे देश का विकास है। अत सरकार को चाहिए कि इसकी सही और सुदृढ योजना बनावे जिसमे ग्राम-वासियो को सीधे भागीदार बनावे तभी गाँवो का शीघ्र विकास होना सम्भव होगा और तभी हमारा देश भी विकसित माना जायेगा।

□□□

12 | भीड़ भरे बाजार की सैर

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. शहर की यात्रा की योजना बनाना
3. जयपुर की सैर करना
4. चांदपोल बाजार की भीड़ का वर्णन
5. दु:खद अनुभूतियाँ
6 उपसंहार

1. प्रस्तावना—मनुष्य के स्वभाव की यह विशेषता होती है कि वह अपनी तुलना अन्य व्यक्तियों से हमेशा करता रहता है। इस तुलना मे वह अपनी परिस्थितियों की भी दूसरों की परिस्थतियों से तुलना करता है। इस तुलना के आधार पर जब उसे पता चलता है कि वह दूसरे लोगो के मुकाबले में अच्छा है तो उसे सन्तोष और प्रसन्नता का अनुभव होता है और जब वह अपने आपको अन्य लोगो की तुलना हीन समझता है तो उसे दु:ख और निराशा होती है। ऐसे अवसर कम ही आते हैं जब हम अपने आपको श्रेष्ठ मान सन्तुष्ट होते हैं। अधिकतर तो हमें दूसरे लोग हमसे श्रेष्ठ ही नजर आते हैं। हो सकता है कि उन्हे हम श्रेष्ठ नजर आते हो। जो भी हो, यह एक सत्य है कि मनुष्य अपनी तुलना दूसरो से अवश्य करता है और जब तक उसे वास्तविक स्थिति का ज्ञान नहीं हो जाता, वह दूसरों को ही अपने से श्रेष्ठ मानता रहता है।

2. विषय प्रवेश—हम दूर-दराज मे बसे एक छोटे से गॉव मे रहते थे, जहाँ न सड़कें थी और न पक्के मकान। बिजली, नल, बाजार, गाड़ी-घोड़े और भीड-भाड का तो नाम-निशान ही नहीं था। मैं उन दिनो आठवीं कक्षा मे पढ़ता था। हम लोग सुना करते थे कि जयपुर एक बहुत बड़ा शहर है, जहाँ बड़े-बड़े बाजार हैं और खूब भीड-भाड रहती है। वहाँ सब प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। इन बातो को सुन-सुनकर हम अपनी स्थिति की तुलना जयपुर के निवासियो से करते रहते थे और अपने आपको बहुत मन्दभागी मानकर जयपुर के निवासियो को परम सौभाग्यशाली मानते थे। एक बार जयपुर नगर की सैर करने की अभिलाषा भी मन मे बराबर बनी रहती थी। मैं तो मन मे

यह भी निश्चय करता रहता था कि बड़ा होने पर मैं जयपुर में ही कोई काम तलाश करूँगा और वहीं रहकर आनन्द तथा सुविधा का जीवन व्यतीत करूँगा।

हमने अपने प्रधानाध्यापक जी से निवेदन किया कि इस बार दीपावली की छुट्टियों में वे हमें जयपुर की सैर करावें। संयोग कुछ ऐसा हुआ कि हमारे इस प्रस्ताव का अनेक अध्यापकों ने भी समर्थन किया और बातों ही बातों में विद्यालय के छात्रों की ऐतिहासिक यात्रा के रूप में अक्टूबर की छुट्टियों में ऐतिहासिक नगर जयपुर की यात्रा का कार्यक्रम बन गया। यात्रा की सभी औपचारिकताएँ पूरी करली गई और निर्धारित कार्यक्रमानुसार हमारा दल जयपुर की यात्रा के लिए गाँव से रवाना हो गया। इस दल में हम 25 विद्यार्थी और पाँच अध्यापक थे।

जब हमारी बस जयपुर नगर की सीमा में प्रविष्ट हुई तो बाजार की भीड़ भाड़ देखकर हमारी आँखें चक्करा गई। हम देख-देखकर प्रसन्न होते रहे और बस अपने स्टैंड पर जा कर खड़ी हो गई। बस में उतरकर हमने सब का सामान एक जगह किया और खड़े होकर भीड़-भाड़ का दृश्य देखने लगे। हमारे एक अध्यापक गोयल साहब थोड़ी देर बाद कुछ ताँगे लाये और हम उनमें बैठकर धर्मशाला की ओर चल पड़े। काफी दूर जाने के बाद एक गली में स्थित धर्मशाला में हम पहुँचे। सामान उतारा और कमरों में ले जाकर रख दिया। शाम हो गई थी। उस दिन का भोजन हमारे साथ था, इसलिए हम लोग भोजन करके धर्मशाला में ही विश्राम करते रहे। इस के दिन हमने राम-निवास बाग, जतर-मतर, चन्द्र-महल, हवामहल आदि स्थान देखे। हम लोग इन स्थानों को देख-देखकर बहुत प्रसन्न हो रहे थे। भीड़-भाड़ भी हमें बहुत अच्छी लगती थी। हम इन सभी स्थानों पर ताँगों में बैठकर ही जाते थे और ताँगों में ही बैठकर धर्मशाला पर वापस आ जाते थे। तीसरे दिन हम सब का कार्यक्रम पैदल चलकर ही बाजारों की सैर करने का बना। सुबह हम जौहरी बाजार, बापू बाजार, नेहरू बाजार और इंदिरा बाजार की सैर करके वापस धर्मशाला में आ गये। इन बाजारों की शोभा, दूकानों की सजावट और भीड़-भाड़ देखकर हम खूब प्रसन्न हो रहे थे तथा अपने आपको यह सब देखने के लिए बहुत भाग्यशाली मान रहे थे।

सायंकाल हम लोग चांदपोल बाजार की सैर करने के लिए निकले। बाजार तो यह भी खूब चौड़ा और सीधा ही दिख रहा था लेकिन भीड़-भाड़ के मामले में यह बाजार सबसे अधिक व्यस्त था। साइकिलों, रिक्शों, ताँगों, स्कूटरों, मोटरों और ठेलों की ऐसी रेल-पेल मची हुई थी कि पैदल चलने के लिए स्थान ही नहीं मिल रहा था। दुकानों के आगे खरीददारों की भीड़ लगी हुई थी। फुट-पाथों पर साग-सब्जी वालों, खिलौनों और अन्य प्रकार का सामान बेचने वालों की दुकानें लगी हुई थी और उनके इर्द-गिर्द खरीददारों की भीड़ थी। हमें समझ में ही

नहीं आ रहा था कि आखिर चलें तो कहाँ ? इसी पशोपेश में हम फुटपाथ के किनारे एक स्थान पर खड़े हो गये। हमें वहाँ खड़े हुए शायद एक मिनट भी नहीं बीता होगा कि साइकिल और रिक्शा वाले चिल्लाने लगे–" हटो, हटो, एक तरफ हट जाओ" और यह कहते हुए हमारे हटने का इन्तजार किये बिना ही रिक्शे वाले ने रिक्शे आगे बढ़ा दिये। बचते-बचते भी हमारे दो साथियों के पाँवों की अंगुलियों को कुचलकर वे आगे बढ़ गये। उन्हें इसके लिए प्रधानाध्यापक ने डाँटा तो पलटकर लाल आँखों से देखता हुआ भद्दी गालियाँ देता हुआ वह आगे बढ़ गया। दोनों साथी अपने पाँवों को सहलाने लगे। एक के पाँव में तो मामूली सी खरोंच ही आई थी, लेकिन दूसरे के पाँव की तो एक अंगुली बुरी तरह कुचल गई थी। उसमें से खून गिर रहा था और वह दर्द से कराह रहा था। हम लोग उसे देखने को उसके चारों ओर इकट्ठे हो रहे थे। देखते ही देखते वहाँ सैकड़ों आदमियों की भीड़ इकट्ठी हो गई वह लड़का सड़क पर बैठ गया था और एक अध्यापक जी उसकी अंगुली पर रूमाल बाँध रहे थे। लोग धक्के मार-मारकर और झुक-झुककर देखना चाहते थे कि इतनी भीड़ इकट्ठी होने का वास्तविक कारण क्या है। कोई हमसे पूछता और कोई किसी अन्य व्यक्ति से। एक-दो पूछकर आगे बढ़ जाते तो दस-बीस और आ जाते। कुछ ही देर में भीड़ इतनी बढ़ गई कि बाजार में आवागमन अवरुद्ध हो गया। हमने देखा तो बाजार में आमने-सामने बसें, मोटर-कारें, रिक्शे और ठेले जुटे खड़े हैं। आगे रास्ता न मिलने के कारण पीछे चलने वाले वाहन भी खड़े होते चले जा रहे थे। जहाँ तक नजर जाती थी दोनों ओर सवारियाँ ही सवारियाँ फँसी नजर आती थीं। मोटरों के हार्न दोनों ओर से ही इतने जोर-जोर से बज रहे थे कि कान बहरे हो रहे थे। दोनों तरफ का यातायात इतना जाम हो गया कि न कोई आगे खिसक सकता था और न पीछे। पैदल चलने वालों तक की मुसीबत आ रही थी। वे भी अपने ही स्थान पर फँसे खड़े थे। शहर के लोग तो इस तरह के वातावरण के आदी होते हैं। इसलिए परेशान कम नजर आते थे, लेकिन हम तो अपनी जगह पर फँसे घबरा रहे थे। कुछ लड़के जो थोड़ी दूर आगे भीड़ में फँस गये थे, जोर-जोर से अध्यापक जी को आवाजें लगा रहे थे। वह घायल लड़का भी रूमाल बाँधकर खड़ा हो गया था, लेकिन इधर उधर खिसकने को जगह किसी को भी नहीं मिल रही थी। एक दो लड़के तो अपनी जगह घबराकर रोने भी लगे थे। यह सारी स्थिति देखकर प्रधानाध्यापक जी ने हम सब को वापस लौटने के लिए आदेश दिया और स्वयं भी लौटने लगे, लेकिन व्यर्थ। जिधर पाँव बढ़ाते उधर ही साइकिलें, रिक्शे और ठेले वाले अड़े मिलते। यह स्थिति देखकर मुझे तो बहुत ही घबराहट हुई। मैं सोचने लगा कि आखिर यह भीड़ कम कैसे

होगी ? हम लोग बाहर निकल भी सकेंगे या यहीं दब-कुचलकर मर जायेंगे। मेरे साथी विद्यार्थी और अध्यापक भी शायद यही सोच रहे थे क्योंकि उन सबके चेहरे उदास हो रहे थे और भीड से बाहर निकलने का कोई तरीका नहीं सूझ पा रहा था।

इसी तरह फँसे-फँसे करीब 15 मिनट बीत गये। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता था, त्यों-त्यों भीड और भी बढती जाती थी। बडी जटिल समस्या में हम लोग फँस गये थे। मैंने न तो कभी इतनी भीड देखी थी और न ही इतना हल्ला-गुल्ला कभी सुना था। उस वातावरण में मुझे भय लग रहा था और घबराहट हो रही थी। तभी भीड में सिपाहियों की सीटी की आवाजें सुनाई दी। हम सब का ध्यान उधर गया। सिपाही भीड के बीच में खडे होकर अपने डंडों से सवारियों को इधर-उधर खिसकाने लगे। भीड में थोडी हलचल शुरू हुई। फिर गाडियों के हार्न बजने लगे और दोनों तरफ का यातायात चींटी की चाल से रेंगने लगा। करीब 15 मिनट बाद स्थिति में सुधार हुआ। हम लोग एक जगह हुए। प्रधानाध्यापक जी ने सब की गिनती की। पूरी संख्या पाकर वे बहुत सन्तुष्ट हुए। उन्होंने सबको वापस धर्मशाला में ही चलने का निर्देश दिया और गोयल साहब उस घायल विद्यार्थी को लेकर डॉक्टर की दुकान की ओर चल पडे। हम लोग शीघ्र ही धर्मशाला में पहुँच गये। वहाँ पहुँचने पर हमें ऐसा लगा जैसे हम जलती हुई आग में से बाहर निकल कर आ गये हों।

उपसंहार—हमें घबराया सा देखकर धर्मशाला के मैनेजर ने हमारे शीघ्र लौटने का कारण पूछा और जब कारण का पता लगा तो वह खूब जोर से हँसा। बोला, "बस एक दिन में ही घबरा गये ? यहाँ तो ऐसे रोज ही होता है। एक दो आदमी रोज दुर्घटना में मरते हैं। औरतों और बूढों को सडक पार करने के लिए घंटे खडे प्रतीक्षा करनी पडती है। यह चाँदपोल बाजार है। यहाँ भीड में जेबें भी खूब साफ होती हैं।" यह सुनकर हम सब ने अपनी जेबें टटोलीं। प्रधानाध्यापक जी चिल्ला उठे। उनका बटुआ गायब था, लेकिन अब किया भी क्या जा सकता था ? हम दूसरे ही दिन गाँव लौट आये। शहरी जीवन से ग्रामीण जीवन की तुलना हो चुकी थी। मैंने सोचा–हमारा ग्रामीण जीवन ही शहरी जीवन से श्रेष्ठ है। बडा होकर जयपुर में ही काम तलाश करने का इरादा त्याग दिया। अब तो यही इरादा है कि गाँव में ही रहकर कोई आजीविका की तलाश करूँगा।

□□□

13 स्वाधीनता दिवस समारोह का आयोजन

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—स्वाधीनता-दिवस का महत्व
2. समारोह के आयोजन की योजना
3. समारोह का आयोजन—प्रभात-फेरी, ध्वजारोहण, मार्चपास्ट एवं सलामी, विभिन्न कार्यक्रम
4. सायंकालीन कार्यक्रम—खेल-कूद एवं नाटक
5. उपसंहार

1. प्रस्तावना—हमारा देश 15 अगस्त 1947 को सदियों की दासता के पश्चात् स्वाधीन हुआ है। गुलामी की लम्बी काली अँधियारी रात में हमारे देश की जनता ने कितनी यातनाएँ सही और कितने कष्ट उठाये, इसकी प्रत्यक्ष जानकारी स्वाधीनता प्राप्ति के बाद वाली पीढ़ी को नहीं है, किन्तु उस पीढ़ी के बहुत लोग बचे हैं, जिन्होंने विदेशी सरकार के निर्मम अत्याचारों को सहा है और प्रत्यक्ष देखा है। सन 1857 में हुई असफल-क्रान्ति के पश्चात् देश का स्वाधीनता-संग्राम लम्बे समय तक चलता रहा है। इस संग्राम के सेनानी अंग्रेजी सरकार की क्रूरता के शिकार होते रहे, किन्तु अपना सर्वस्व बलिदान करके भी देश को स्वाधीन कराने के लिए जूझते रहे। अगणित देश-भक्तों की कुर्बानी के फलस्वरूप ही हमारे देश को स्वाधीनता प्राप्त हुई है। स्वाधीनता का सूर्योदय देखने के लिए न जाने कितनी ललनाओं के माथे का सिन्दूर धुला होगा और कितनी माताओं की गोद सूनी हो गई होगी। अब हमारे राष्ट्रीय जीवन में स्वाधीनता-दिवस का विशेष महत्व है। यह हमारा एक राष्ट्रीय पर्व है। इसी दृष्टि से प्रतिवर्ष 15 अगस्त को देश के कोने-कोने में स्वाधीनता-दिवस राष्ट्रीय पर्व के रूप में पूर्ण उमंग, उत्साह और उल्लास के साथ मनाया जाता है।

2. विषय-प्रवेश—गत वर्ष हमारे कस्बे की नगर पालिका के चुनाव में ऐसे लोग विजयी हुए जो देश-सेवा और देश-भक्ति को ही अपना धर्म समझते हैं। चुनाव के तीन माह बाद ही पन्द्रह अगस्त आने वाली थी। नगर-पालिका की पहली बैठक में ही सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया गया कि इस वर्ष कस्बे में स्वाधीनता दिवस एक विशेष समारोह के रूप में मनाया जाय। इस निर्णय के बाद एक समा-

रोह-समिति का गठन किया गया, जिसमें कस्बे की सभी शिक्षण संस्थाओं, सरकारी कार्यालयो और जनता के सभी वर्गों के प्रतिनिधियो को सम्मिलित किया गया। इस समिति ने समारोह की रूप रेखा बनाई और तदनुसार तैयारियाँ प्रारम्भ कर कर दी गई। समारोह की तैयारी मे कस्बे के छोटे बडे सभी लोग स्वेच्छा से जुट गये और पूर्ण उत्साह के साथ तैयारियाँ होने लगी। उन दिनो कस्बे का वातावरण ऐसा बना जैसे हमे आज ही स्वतन्त्रता मिली हो और हम इस महान् उपलब्धि पर अपने हृदय की प्रसन्नता व्यक्त करने मे कोई कसर ही नही छोडना चाहते हो। कस्बे की जनता मे ऐसी एकता ऐसा उत्साह और ऐसी देश-भक्ति की भावना पहले कभी नही देखी गई। सब लोग अपने अपने कार्यो मे इस तरह जुट गये जैसे उनकी अपनी बेटी का ब्याह हो रहा हो। अपने मकानो की सफाई, गली-मोहल्लो की सफाई और बाजारो तथा दुकानो की सजावट के कार्य मे आपस मे होड सी लग रही थी। समारोह के आयोजन के प्रस्तुत किये जाने वाले कार्यक्रमो की तैयारी अलग से हो रही थी। उन दिनो कस्बा और कस्बे के आस-पास के क्षेत्रो मे चर्चा का एक ही विषय था—'स्वाधीनता दिवस समारोह'।

बडी उत्सुकता से प्रतीक्षा करते करते 15 अगस्त का दिन आ पहुँचा। प्रात काल करीब 5 00 बजे कस्बे की गलियो और रास्तो म प्रभात फेरियाँ निकलने लगी। विद्यालयो के छात्र और छात्राएँ अपने विद्यालयो की गणवेश मे हाथ मे कागज की तिरगी झण्डियाँ लिए एक जुलूस के रूप मे चल रहे थे। 'महात्मा गाधी की जय', 'भारत माता की जय', 'हमारी स्वाधीनता अमर रहे', 'हम सब एक हैं' आदि के नारे पूरे कस्बे की गली गली मे गूँज रहे थे। लोग अपने घरों की छतो पर खडे होकर बडे उत्साह से उन बच्चो को देख रहे थे। प्रभात की सुनहरी किरणे फूटने से पहले ही सब लोग जाग पडे थे और मन मे उमग लिए जल्दी-जल्दी तैयार होने लगे थे। अपने नारो से कस्बे की गलियो, रास्तो और सडको को गुन्जाते हुए छात्र-छात्राएँ अपने-अपने विद्यालयो मे पहुँची। विद्यालयो म तथा अन्य सरकारी कार्यालयो मे ध्वजारोहण का सक्षिप्त सा कार्यक्रम हुआ और पुन सब छात्र और कर्मचारी अपने अपने स्थानो से जुलुस के रूप मे नारे लगाते हुए समारोह के प्रमुख स्थल 'नगर-पालिका कार्यालय' के मैदान पर पहुँच गये। धीरे धीरे कस्बे की जनता भी वहाँ पहुँचने लगी। सब लोगो के बैठने अथवा खडे होने के स्थान पहले ही निर्धारित कर दिए गय थे। अपनी चुस्त पोशाक पहने स्काउट और स्वय सेवक का बिल्ला लगाये अनेक नवयुवक व्यवस्था मे लगे हुए थे। थोडी ही देर म मैदान दर्शको से खचा-खच भर गया। प्रकृति भी समारोह के आयोजको का साथ देती मालूम पड रही थी। पिछली रात खूब अच्छी वर्षा हो गई थी। इसलिए मौसम बडा सुहावना बना हुआ था। आकाश मे बादल छा रहे थे, किन्तु ऊमस नही थी। लोग बडी प्रसन्न मुद्रा मे अपने स्थानो पर खडे होकर

या बैठकर कार्यक्रम के प्रारम्भ होने की प्रतीक्षा कर रहे थे। नगर-पालिका भवन से कुछ दूर हटकर ठीक सामने एक सीधे और काफी ऊँचे लोहे के नल पर सिमटा हुआ राष्ट्रीय ध्वज झूल रहा था। उससे थोड़ी दूर हटकर ही एक ऊँचा मंच था जिस पर कस्बे के गणमान्य नागरिक, स्वतन्त्रता सेनानी और सरकारी कार्यालयों के बड़े अफसर बैठे थे। माइक्रोफोन की आवाज पर समारोह का संचालन समारोह से सम्बन्धित आवश्यक सूचनाएँ प्रसारित कर रहा था।

प्रात ठीक 8 00 बजे तोप का एक जोरदार धमाका हुआ। यह समारोह के शुभारम्भ का श्री गणेश था। सब लोग सजग और सतर्क हो गये। संचालक ने माइक पर सबको सावधान की स्थिति में खड़े होने का निर्देश दिया और सबने उस निर्देश का बड़ी तत्परता से पालन किया। नगर-पालिका के अध्यक्ष महोदय धीरे-धीरे ध्वज के डण्डे के पास आये, ध्वज की डोरी को पकड़ा और खीच दिया। ध्वज खुल गया। उसमें पहले से ही रखे रंग-बिरंगे पुष्पों की पंखुड़ियाँ बिखरकर पुष्पवृष्टि सी करती हुई नीचे आने लगी। सब शान्त खड़े थे। अध्यक्षजी ने ध्वज को सलामी देने के लिए अपना हाथ ऊँचा किया और तभी बैण्ड पर राष्ट्रीय गीत 'जन-गण-मन' की मधुर धुन गूँज उठी। राष्ट्रीय गान के बाद संचालक ने सब को अपने-अपने स्थान पर बैठ जाने का निर्देश दिया। अध्यक्ष महोदय ध्वज को सलामी देते हुए अपने स्थान पर ही खड़े रहे। विद्यालयों के एन० सी० सी० के छात्र और छात्राएँ अपनी गणवेश में फौजी जवानों की सी चुस्ती और फुर्ती दिखाते हुए मार्च पास्ट करने लगे। बैण्ड पर प्रयाण गीत की धुन बज रही थी और छात्र कदम से कदम मिलाते आगे बढ रहे थे। उनकी सलामी का कार्यक्रम सबको बड़ा आकर्षक और प्रेरणादायक लगा। मार्चपास्ट और सलामी के बाद कस्बे की मोहल्लों के द्वारा तैयार की गई झाँकियों के प्रदर्शन का कार्यक्रम हुआ। इन झाँकियों को देख-देखकर लोग खूब प्रसन्न हुए और तालियाँ बजा-बजाकर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने लगे। सभी झाँकियाँ स्वतंत्रता-आन्दोलन कहानी ही सुना रही थी। उन झाँकियों में 'जलियाँ वाला बाग' की झाँकी तो इतनी मार्मिक थी कि देख-देखकर लोगों की आँखों में आँसू आने लगे।

झाँकियों का कार्यक्रम समाप्त होने के बाद सब लोग अपने-अपने स्थानों पर बैठ गये। अध्यक्ष जी मच पर खड़े हुए और उन्होंने कस्बे की जनता के नाम सन्देश प्रसारित किया। उन्होंने अपने सन्देश में स्वाधीनता-दिवस का महत्त्व समझाया और देश की स्वतंत्रता एकता और अखण्डता बनाये रखने के लिए बड़ी मार्मिक अपील की। नवयुवकों को उन्होंने देश के नव-निर्माण में जुट जाने का आह्वान किया। उन्होंने अपने सन्देश में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह बतलाई कि स्वाधीनता-दिवस हमारा एक राष्ट्रीय पर्व है। दीपावली हमारा एक सांस्कृतिक पर्व है। इसलिए है कि उस दिन अत्याचारी रावण का नाश करके और भारत

भूमि को अत्याचारों से मुक्त करके भगवान श्री राम अयोध्या लौटे थे। इसी खुशी मे हम दीपावली प्रतिवर्ष बड़े उल्लास और उत्साह से मनाते हैं। पन्द्रह अगस्त भी एक ऐसा ही दिन है क्योंकि अंग्रेजो के क्रूर और अत्याचारी शासन से हमे इस दिन ही मुक्ति मिली थी। अत हमे इस राष्ट्रीय पर्व को दीपावली से भी अधिक उत्साह और उल्लास से मनाना चाहिए। दीपावली का पर्व तो केवल हिन्दू संस्कृति के लोगो के लिए ही है, किन्तु यह राष्ट्रीय पर्व का तो सभी जाति, धर्म और सम्प्रदाय के लोगो के लिए समान महत्त्व रखता है।

अध्यक्ष जी सन्देश के बाद संचालक महोदय ने कार्यक्रम समाप्त करने की घोषणा की और शाम को तथा रात्रि मे आयोजित होने वाले विभिन्न कार्यक्रमो की सूचना दी। इसके बाद बच्चो को मिठाइयाँ बँटी और लगभग सौ जवानो ने अस्पताल मे जाकर स्वेच्छा से रक्तदान किया।

सायंकाल तीन बजे खेल-कूद के कार्यक्रम हुए। फुटबाल और कबड्डी संघर्ष पूर्ण मैच आयोजित हुए। इस आयोजन मे दर्शको की भारी भीड थी। सध्या होते ही कस्बे के बाजार, दुकानें और मकान सजावट तथा रोशनी से जगमगा उठे। लोग भोजन आदि के कार्यों से निवट कर पुन नगर-पालिका कार्यालय के मैदान मे इकट्ठे हुए। रात को 'शहीद भगत सिंह' का शानदार नाटक हुआ। नाटक समाप्त होने पर लोग प्रशसा करते हुए अपने घरो को लौटे।

3 उपसंहार—इस समारोह की सबसे बडी उपलब्धि यह रही कि कस्बे की जनता मे एकता, भाईचारा और देश-भक्ति की भावना उत्पन्न हुई और यही किसी पर्व या त्योहार के मनाने का प्रमुख उद्देश्य होता है। मेरे कस्बे का वह स्वाधीनता दिवस समारोह एक आदर्श समारोह था। उस समारोह की याद बच्चे बच्चे की जुबान पर आज भी ताजा है। राष्ट्रीय पर्वों पर देश मे सभी जगह समारोह आयोजित किये जाते हैं, किन्तु इन आयोजनो मे हमारी भावना प्रमुख होती है। हमे गम्भीरतापूर्वक सोचना चाहिए कि इन समारोहो का हमारा राष्ट्रीय जीवन मे कितना महत्त्व है और हम इनके आयोजन मे कितनी लगन, तत्परता और देश प्रेम की भावना को स्थान देते हैं। यदि हम मन से इन समारोहो के आयोजन मे भाग नही लेते तो देश के प्रति अपनी वफादारी को नही निभाते।

14 | मेरे देश की धरती सोना उगले

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—भारत का गौरवशाली स्वरूप
2. भारत-भूमि की उर्वरता
3. भारत की वनस्पति
4. भारत की खनिज-सम्पदा
5. भारत के जल-स्रोत
6. भारत की जन-सामर्थ्य
7. उपसंहार

1 प्रस्तावना—भारत एक ऐसा देश है जो प्राचीन काल से ही 'सोने की चिड़िया' के नाम जाना जाता रहा है। बारी-बारी से छः ऋतुओं का आगमन इस देश के लिए एक वरदान है। यह देश प्राकृतिक दृष्टि से जितना सुन्दर है, आर्थिक दृष्टि से भी यह उतना ही समृद्ध और सम्पन्न रहा है। यही कारण है कि विदेशियों की कुदृष्टि सदा इस देश पर पडती रही है और जब भी उन्हें अवसर मिला, उन्हों इस देश की सम्पत्ति को खूब लूटा। सदियों तक इस देश को विदेशी शासन की दासता भी में रहना पडा। इस अवधि में भी देश की धन-सम्पदा का खूब अपहरण होता रहा और एक समृद्ध तथा सम्पन्न देश भीतर से बिलकुल खोखला बन गया। किन्तु प्रकृति ने जिसे समृद्धि और सम्पन्नता का वरदान दिया है, वह देश गरीब, कैसे रह सकता है ? जिस देश की धरती सोना उगलती हो, वह देश कंगाल कैसे बना रह सकता है ? यही कारण है कि स्वाधीनता प्राप्ति से पूर्व अत्यन्त निर्धन और जर्जर अवस्था वाला देश स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् पुनः अपने पाँवों पर खड़ा हो गया है। आज यद्यपि हमारा देश विदेशी ऋणों के भार से दबा हुआ है, किन्तु राष्ट्रीय उत्पादन की दर में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है और वह दिन दूर नहीं, जब हमारा देश पुनः सम्पन्न और समृद्धिशाली बन जायेगा। इसकी समृद्धि का रहस्य इसकी प्राकृतिक सम्पदा में ही निहित है।

2 भूमि की उर्वरता—भारत एक कृषि प्रधान देश है। इसकी जनसंख्या का तीन-चौथाई भाग कृषि पर ही निर्भर है। इस देश की भूमि में उर्वरा शक्ति असीम है। यही कारण है कि कुछ क्षेत्रों को छोडकर शेष सभी जगह वर्ष में दो बार फसलें काटी जाती है। गेहूं, जौ, बाजरा, मक्का, ज्वार और चावल के हरे-भरे

खेत लहलहाते दिखाई पडते हैं। तिलहन और दलहन की सभी किस्मो की खेती इस धरती पर खूब होती है। गन्ना, चाय, काफी और जूट तो इतना पैदा होता है कि प्रतिवर्ष बहुत बडी तादात मे अन्य देशो को निर्यात किया जाता है। सिचाई के साधनो का अभाव होने के कारण पहले हमारा कृषि-उत्पादन थोडा था, किन्तु आजादी के बाद पचवर्षीय योजनाओ के माध्यम से हमने सिचाई की सुविधा बढा ली है और अब हम अपनी धरती से बहुत अधिक कृषि-उत्पादन प्राप्त कर रहे है। खाद्यान्नो के मामले मे अब हम पूर्णतया आत्म-निर्भर बन चुके है। आने वाले वर्षों मे हमारा कृषि उत्पादन और बढेगा और हम निर्यात करने की स्थिति मे आ जायेंगे।

3 वनस्पति-सम्पदा—भारत की वनस्पति भी बहुत समृद्ध है। आम, केला, पपीता, सतरा नीबू, अमरूद, अनार, आदि अनेक फलो के वृक्ष इस धरती पर खूब उगते है जिनसे हम सरस, मीठे और स्वास्थ्य-वर्द्धक फल प्राप्त करते हैं। अगूर, बेर, आदि फलो की बेलें और झाडियाँ हमारी इस भूमि पर उगती हैं। इनके अतिरिक्त भिन्न-भिन्न ऋतुओ मे भिन्न-भिन्न प्रकार की सब्जियो से खेत लहलहाते रहते हैं। चीड शीशम देवदार और सँगोन आदि मूल्यवान लकडी के पेड हमारी भूमि पर बहुतायत से उगते हैं। नीम, पीपल, सिरस और बरगद आदि के वृक्ष जहाँ अपनी सघन छाया मे हमे आश्रय देते है, वही इनकी लकडी हमारे अनेक प्रकार से उपयोग मे आती है। पहाडो मे उगने वाली वनस्पति जहाँ एक ओर वायुमण्डल मे सन्तुलन बनाये रखने का कार्य करती है, वही दूसरी ओर वह हमारी वन-सम्पदा के रूप मे देश की समृद्धि में अपना योगदान करती है। पहाडो और जगलो मे अगणित जडी-बूटियाँ उत्पन्न होती है, जिनके सेवन से व्याधियो का नाश होता है। हमारी असख्य पशु-सम्पदा का तो मुख्य आहार वन-सम्पदा ही है। जगल मे उगने वाली घास और अन्य वनस्पति के आधार पर ही हमारे पशु जीवित रहते हैं। ये पशु हमारे मित्र और सहायक है जो हमारी समृद्धि मे अपना योगदान करते हैं।

4 खनिज सम्पदा—भूमि को वसुधा और धरा के नाम से पुकारा जाता है, जिसका अर्थ है—स्वर्ण एव अन्य धातुओ को धारण करने वाली। भारत मे सोना, चाँदी, ताँबा, पीतल, लोहा, अभ्रक और कोयले का अथाह भडार है। विभिन्न क्षेत्रों मे इन धातुओ की खानें हैं, जिनसे हम ये धातु प्राप्त करते है। खनिज सम्पदा को प्राप्त करने के वैज्ञानिक साधनो का विकास हो जाने के पश्चात् इन खानो से हम बहुत अधिक मात्रा मे मूल्यवान धातु प्राप्त कर रहे है। सगमर तथा अन्य प्रकार के इमारती पत्थरो की खानो से हमे बहुमूल्य पत्थर प्राप्त होता है। हीरा, नीलम और पुखराज आदि रत्न हमारी भूमि के ही गर्भ मे छिपे हैं। खनिज तेल के विषय मे पहले हमारी जानकारी नही थी किन्तु भूगर्भ की, खोज से हमे भारत-भूमि में खनिज-तेल के भी अथाह भडार मिल गये है। बाम्बे हाई म समुद्र तल से

खनिज तेल का उत्पादन प्रारम्भ हो गया है, जिससे हमारे देश की लगभग पचास प्रतिशत आवश्यकता की पूर्ति होने लगी है। शेष क्षेत्रों में भी शीघ्र ही उत्पादन प्रारम्भ हो जायेगा और हम तेल के मामले मे न केवल आत्म-निर्भर ही बन जायेंगे, बल्कि हम विदेशो को तेल का निर्यात करके असख्य विदेशी मुद्रा भी अर्जित करने लगेंगे।

5. जल-स्रोत—पानी जीवन, विकास और समृद्धि का आधार माना जाता है। भारत की भूमि जल-स्रोतो के मामले में पूर्ण समृद्ध है। हिमालय की गोद से निकलने वाली गगा, जमुना, सिन्ध और ब्रह्मपुत्र आदि महानदियां अपनी अनेक सहायक नदियों के साथ देश के उत्तराञ्चल मे बहुत बड़े भू-भाग को सदा-सर्वदा हरा-भरा बनाये रखती है। इसी प्रकार मध्य भारत और दक्षिण के क्षेत्रो मे बहने वाली अनेक नदियाँ इन क्षेत्रो मे कृषि और वनस्पति-उत्पादन मे अत्यधिक सहायता करती हैं। आजादी से पहले इन नदियो के पानी का पूरा उपयोग नहीं हो पाता था। स्वतन्त्र-भारत की सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओ के द्वारा अनेक बड़े-बड़े बांध और नहरों का निर्माण करके हमारे जल-स्रोतों को अत्यन्त उपयोगी बना लिया है। राजस्थान जैसे रेतीले प्रदेश मे भी गगा नहर और राजस्थान नहर से पानी पहुँच गया है और अब यह प्रदेश पूरे देश की अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ आधार प्रदान करने की स्थिति में आने वाला है। देश के पश्चिमी और पूर्वी तटों से लगे समुद्र भी इस देश की समृद्धि मे खूब योगदान करते हैं। समुद्र से मछलियाँ पकड़ी जाती हैं और गोताखोर समुद्र-तल से अनेक मूल्यवान वस्तुएँ प्राप्त करते हैं।

6. जन-सामर्थ्य—भारत की जनता यद्यपि स्वभाव से भोली और उदार है, किन्तु उसकी योग्यता, कार्यक्षमता, कष्ट सहिष्णुता और श्रमशीलता विश्व मे बेजोड़ है। अपनी इसी सामर्थ्य के कारण वह पहले भी अपने देश को 'सोने की चिड़िया' बना पायी थी और अब भी वह इस देश को समृद्ध बनाने मे जुटी हुई है। चिल-चिलाती धूप मे और ठिठुराती शीत लहर मे भी हमारे देश का किसान खुले खेत में दिनभर परिश्रम करता देखा जा सकता है। इसी प्रकार पहाड़ों की छाती को चीरकर उनमें से रत्न निकालने की सामर्थ्य हमारे देश के श्रमिकों मे है। आँधी हो या तूफान सर्दी हो या गर्मी हमारे देश का श्रमिक भूखा-प्यासा रहकर भी अपने काम में जुटा रहता है। देश का कृषि-उत्पादन, खनिज-उत्पादन और औद्योगिक उत्पादन देश के श्रमिको की कड़ी मेहनत पर ही निर्भर है। हमारे देश मे श्रमिक की दशा अच्छी नहीं है, किन्तु वह फिर भी कर्त्तव्य-परायण है। वास्तव मे वह स्वयं देश की एक सम्पदा है। एक ऐसी सम्पदा जो अनेक सम्पदाओं की जननी है। ऐसे परिश्रमी और कर्मठ वीर-पुत्रों की जन्मदात्री हमारी यही भारत भूमि है।

हमारे राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त ने भारत-भूमि की वन्दना करते हुए इस भूमि के वैभव को इस प्रकार प्रदर्शित किया है—

'सुरभित सुन्दर सुखद सुमन तुम पर खिलते हैं,
भाँति-भाँति के सरस, सुधोपम फल मिलते हैं,
औषधियाँ हैं प्राप्त, एक से एक निराली
खानें शोभित कहीं धातुवर रत्नों वाली।
जो आवश्यक होते हमें
मिलते सभी पदार्थ हैं।
हे मातृ भूमि ! वसुधा, धरा
तेरा नाम यथार्थ है।

7 उपसंहार—उपर्युक्त विवेचन से यह सिद्ध हो जाता है कि भारत की धरती वास्तव में सोना उगलने वाली धरती है। आवश्यकता केवल इसके महत्व को समझकर सोना प्राप्त करने की सही विधि को अपनाने की है। यह धरती एक ऐसी दुधारू गाय है जिसका दोहन करने पर यहाँ घी दूध की नदियाँ बहती सुनी गई है। इस धरती में इतनी सामर्थ्य होते हुए भी इस धरती के प्यारे पुत्रों की दीन हीन दशा देखकर किसी को भी आश्चर्य होना स्वाभाविक है। इसके कारणों पर यदि हम गम्भीरतापूर्वक विचार करें तो हम पायेंगे कि इसका मूल कारण हमारी दोषपूर्ण सामाजिक और प्रशासनिक व्यवस्था ही है। उत्पादन के साधनों का न्याय-संगत बँटवारा न होने के कारण मुट्ठीभर लोग देश की अतुलित सम्पत्ति के स्वामी बने बैठे हैं और शेष लोग अभावों से पीडित है। आज भी हमारे देश में किसी वस्तु का अभाव नहीं है। आज भी इस देश की धरती सोना ही उगलती है, किन्तु दोषपूर्ण व्यवस्था के कारण देश की मूल्यवान सम्पत्ति कुछ लोगों की निजी सम्पत्ति बनी हुई है और ससार की निगाह में हम गरीब और दरिद्र बने हुए हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि देश करवट ले रहा है और हमें आशा करनी चाहिए कि शीघ्र ही इस व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन होगा और यह देश पुन सोने की चिडिया के नाम से विश्व में अपना गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त कर लेगा।

15 | गुलाबी नगर जयपुर

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. जयपुर नगर का निर्माण
3. नगर की बसावट
4. भवनों और बाजारों की एकरूपता
5. विशेष दर्शनीय स्थान
6. उपसंहार

प्रस्तावना—उर्दू के प्रसिद्ध शायर इकबाल ने एक गजल लिखी थी—'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ता हमारा।' इकबाल की यह गजल भारत की सही तस्वीर पेश करती है। वास्तव में भारत एक ऐसा ही देश है जो सारे ससार से अच्छा है। हम ही नहीं, सारी दुनिया के लोग भी यह मानते हैं कि भारत ससार में सबसे अच्छा देश है। यदि भारत के विषय में यह बात सही है तो मैं कोई *कवि या शायर न होते हुए भी यह कह सकता हूँ कि 'नगरों में निराला नगर है,* यह गुलाबी नगर हमारा।' मेरा यह कथन भी इकबाल साहब के कथन की तरह ही सच्चा है। भारत ही नहीं, दुनिया के किसी देश में भी ऐसा कोई नगर नहीं होगा जो गुलाबी नगर जयपुर की बराबरी कर सके। प्रतिवर्ष हजारों विदेशी पर्यटक इस नगर को देखने आते हैं। इसकी सुन्दरता, इसकी एक रूपता और इसकी स्थापत्य-कला को देखकर दग रह जाते हैं। उनसे इसके सम्बन्ध मे चर्चा करने पर वे इसकी मुक्त कण्ठ से प्रशसा करते हैं और अपना यह स्पष्ट विचार भी व्यक्त करते हैं कि उन्होंने पूरे विश्व का भ्रमण किया है और अच्छे से अच्छे नगर देखे हैं किन्तु इस गुलाबी नगर की तुलना वे किसी से नहीं कर सकते। इस अद्वितीय नगर का एक सुन्दर इतिहास है और इसका निर्माण एक विशेष योजना के आधार पर ही हुआ था।

2. जयपुर नगर का निर्माण—इस नगर का निर्माण होने से पूर्व जयपुर के राजाओं की राजधानी आमेर ही थी। अठारहवी सदी के प्रारम्भ मे सन् 1728 मे महाराजा सवाई जयसिह ने इस नगर का निर्माण करवाया और अपने नाम

पर ही इसका नाम 'जयपुर' रखा। महाराजा जयसिंह स्वयं एक श्रेष्ठ विद्वान, ज्योतिष शास्त्र के विशेषज्ञ, कलाकार और स्थापत्यकला के मर्मज्ञ थे। संयोग से उन्हे विद्याधर नाम एक स्थापत्य-कला का विशेषज्ञ मिल गया। आज की भाषा में वह एक बहुत बड़ा इन्जीनियर था। विद्याधर ने ही इस नगर का नक्शा बनाया था और उसकी देख रेख मे इस नगर का निर्माण हुआ था। आमेर की पहाड़ियो से लगती हुई दक्षिणी पहाडी के दक्षिण में आमेर से लगभग दस किलोमीटर दूर के एक समतल भाग पर इस विशाल नगर का निर्माण करवाया गया। इस नगर के चारो ओर मजबूत तथा ऊँची दीवार का विशाल परकोटा बनवाया गया, जिसमे पूर्व मे सूरजपोल, पश्चिम मे चांदपोल, उत्तर मे गंगापोल और दक्षिण मे अजमेरी दरवाजा, सांगानेरी दरवाजा और घाट दरवाजा के नाम बड़े दरवाजे रखे गये। जिस विशाल भूखण्ड पर इस नगर का निर्माण करवाया गया, उस भूखण्ड को पहले ही इस प्रकार तैयार किया गया कि नगर का मध्य भाग ऊँची भूमि पर रहे और उसके दोनो ओर ढलान रहे ताकि अतिवृष्टि या अन्य किसी प्रकार की प्राकृतिक विपदाओ से यह नगर पूर्ण सुरक्षित रह सके। सूरजपोल से लेकर चांदपोल तक की सीधी सड़क इस नगर का मध्य भाग माना जाता है। इस सड़क के दोनो ओर बनी हुई सड़के और बस्तियाँ ढलान पर है। यह ढलान क्रमश बढ़ता हुआ परकोटे तक पहुँच जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि जब नगर मे वर्षा होती है तो वर्षा का पानी नगर के दोनो ओर ढलकता हुआ शीघ्रता से बह जाता है और नगर सुरक्षित रहता है। सन् 1981 में हुई भारी वर्षा से जयपुर की नई बस्तियो मे भले ही कोई नुकसान हुआ हो, किन्तु परकोटे के भीतर बसे शहर मे लगातार चालीस घंटे तक भारी वर्षा होने के बावजूद न कहीं पानी भरा और न ही किसी प्रकार की जन-धन की हानि हुई।

बिल्कुल सीधे और चौड़े बाजार, नगर को तीन प्रमुख भागो मे बाँटने वाली तीन चौपड़े, प्रत्येक रास्ते और गलियो की सीधाई तथा प्रत्येक रास्ते और गलियाँ एक निश्चित दूरी पर चौराहे बनाती हुई तथा प्रत्येक गली और रास्ते का मुख्य बाजार से सीधा सम्बन्ध होना इस नगर के निर्माण की एक ऐसी विशेषता है जो ससार के किसी नगर मे नहीं है।

3 नगर की बसावट—इस नगर की बसावट भी पूर्ण नियोजित और *व्यवस्थित है। नगर के मध्य भाग मे बड़ी चौपड़ के दक्षिणी भाग मे बड़े व्यापा*-रियो और जौहरियो को बसाया गया है। इसी उत्तरी भाग मे चन्द्रमहल और जनानी ड्योढी के नाम से राज परिवार के शाही महल है जिनके उत्तर मे राज-घराने के इष्टदेव श्री गोविन्द देव जी का मन्दिर है और उसी के पास एक रमणीक राजोद्यान तथा तालकटोरे का सुन्दर जलाशय है। राज-महलो के पास ही टाउन-हाल है जो आज कल विधान-सभा का सभा स्थल है। इसके पास ही जलेबी चौक

के नाम से एक विशाल चौक है, जहाँ जयपुर रियासत के समय सभी सरकारी कार्यालय एक ही स्थान पर चलते थे, जिससे जनता को बहुत सुविधा थी। राज-महलो से राज-परिवार के नगर मे आने-जाने के लिए एक प्रमुख दरवाजा 'त्रिपोलिया' के नाम से बनवाया गया था। इसी प्रकार नगर के अन्य भागों मे भी समाज के विभिन्न वर्गों को बसाया गया था। यह बसावट आज भी अपने मूल रूप मे विद्यमान है।

4. एकरूपता—इस नगर की प्रमुख विशेपता यह है कि इस नगर के सभी मकान एक ही स्थापत्य शैली के आधार पर निर्मित हैं। नगर मे बने प्रायः सभी मकान, दुकान और मन्दिरो की शैली एक ही है। सब भवनों को एक विशिष्ट गुलाबी रग से पोता जाता था। इसी रग के कारण इस नगर का नाम 'गुलाबी-नगर' पड़ा है। यद्यपि नगर के भीतरी भागों में तो भवन-निर्माण की शैली और रंग मे एकरूपता नही रही है किन्तु नगर के मुख्य बाजारों में स्थित सभी भवन और दुकानें अब भी एक ही स्थापत्य-शैली से निर्मित हैं और उन पर एक ही रंग 'गुलाबी रंग' पुता हुआ है। बाजार में दुकानों के आगे बने बरामदे, उन पर लिखे साइन बोर्ड आदि सभी बातो मे एक रग, एक शैली और एकरूपता विद्यमान है। देश के अन्य भागों से आने वाले तथा विदेशी पर्यटक इस नगर के बाजारो की विशालता, सुन्दरता और एकरूपता देखकर आश्चर्यचकित हो जाते हैं।

5. विशेष दर्शनीय स्थल—जयपुर एक ऐतिहासिक नगर है और भारतीय पर्यटन का प्रमुख केन्द्र है। इस नगर मे और नगर के आस-पास अनेक ऐतिहासिक और रमणीक स्थान है जो दर्शनीय हैं। जयपुर नगर के मध्य भाग में स्थित 'हवा महल' स्थापत्य कला का एक उत्कृष्ट नमूना है। एक ही शैली पर निर्मित छोटी-छोटी हजारो खिड़कियो से बना यह विशाल भवन बाहर से देखने पर अत्यन्त आकर्षक प्रतीत होता है भीतरी भाग मे जाने पर इन खिड़कियों से आने वाली तेज हवा इसके नाम को सार्थक बनाती हैं। विदेशी पर्यटक इसे बड़ी उत्सुकता और आश्चर्य से देखते हैं और देखते रह जाते हैं। जितने चित्र इस भवन के खिचे होंगे, उतने शायद ही किसी भवन के खिचे हो।

हवा-महल के पीछे की ओर ही, जंतर-मतर' है। यह ज्योतिष का एक ऐसा चमत्कार है जिसका संसार मे कोई मुकाबला नहीं है। ग्रहो और नक्षत्रो तथा सूर्य, चन्द्रमा आदि की गति का ज्ञान कराने वाले यत्र इस स्थान पर बने हुए हैं। यह ज्योतिष शास्त्र के अध्ययन का एक विशेष केन्द्र है। ससार के बड़े-बड़े ज्योतिष यहां बने चक्रों और यन्त्रों को देखकर चक्कर खा जाते हैं।

'जंतर-मतर' के पास के पास ही चन्द्रमहल है जो आजकल 'सिटी पैलेस' के नाम से जाना जाता है। आजकल इस महल को रियासत और राज-घराने का संग्रहालय बना दिया गया है। पर्यटक इस भवन की स्थापत्य कला की सुन्दरता को

देखकर मन्त्र-मुग्ध हो जाता है। संग्रहालय में रखी सदियों पुरानी पोशाकों, हथियार तथा अन्य प्रकार की सामग्री को देखकर वे आश्चर्य में डूब जाते हैं।

इनके अतिरिक्त जयपुर का राम निवास बाग, गेटोर की छतरियाँ तथा जयपुर नगर के पूर्वी भाग में पहाड़ी पर बना 'गलता तीर्थ' एवं सूर्य मन्दिर भी यहाँ के दर्शनीय स्थल हैं। इन स्थानों को देखकर भी लोग बहुत आनन्दित और प्रसन्न होते हैं।

जयपुर के उत्तर में आमेर है जो ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। आमेर में शिला देवी का मन्दिर जगत शिरोमणि जी का मन्दिर तथा अन्य अनेक जैन मन्दिर स्थापत्य-कला तथा ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। आमेर का 'जयगढ़ दुर्ग' तो तत्कालीन इतिहास का एक जीता जागता नमूना है जो राजपूती आन-बान तथा शौर्य की गौरव गाथा स्वयं ही अपने मुँह से सुनाता प्रतीत होता है। जयगढ़ दुर्ग की पहाड़ी के नीचे बने मावठा झील भी बहुत रमणीय दृश्य उपस्थित करती है।

6 उपसंहार—जयपुर नगर का बाह्य स्वरूप जितना आकर्षक है, इसका आन्तरिक स्वरूप भी उतना ही मनोरम है। यह एक सांस्कृतिक नगरी है। भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल स्वरूप को इस नगर में प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। बारहों महिने विभिन्न समुदायों के लोगों के सामाजिक और धार्मिक कार्यक्रम चलते रहते हैं। यहां के लोगों में सामाजिक सद्भाव और भाईचारे की भावना कूट-कूट भरी है। यहां के लोग स्वभाव से सरल और मनमौजी किस्म के हैं। वर्षा ऋतु में मेलों और गोठों की बहारें छायी रहती हैं तो सर्दी में पतंगबाजी की 'वो काटा' की आवाज से आसमान गूँजता रहता है। गर्मियों में प्याउओं की भरमार हो जाती है। जयपुर नगर का शायद ही कोई मोहल्ला होगा जहाँ रात के समय सत्संग और जागरण न होता हो। यहाँ की रातें सदा संगीतमय बनी रहती हैं।

ऐसा सुना जाता है कि इस नगर के निर्माता विद्याधर ने नगर के निर्माण के निर्माण बाद अपने इष्ट देवता से यह वरदान ले लिया था कि इस नगर में जो भी कहीं से आकर बस जायगा वह आबाद होता चला जायगा और फिर यहां से जाने को वह कभी राजी नहीं होगा।

□□□

16 | एक भीषण सड़क दुर्घटना

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना—होनहार की प्रबलता
2. यात्रा का कार्यक्रम—बस यात्रा
3. चालक की असावधानी से दुर्घटना
4. दारुण एवं करुणाजनक दृश्य
5. उपचार एवं सहायता कार्य
6. उपसंहार

1. प्रस्तावना—*हम सुनते आये हैं कि होनहार बलवान है ।* हम किसी अप्रिय और अवांछित स्थिति से बचने के लिए कितने ही प्रयास करें, किन्तु भावी बलवान होती है और हमारे प्रयत्नों के बावजूद होनी होकर ही रहती है, टलती नहीं है। गोस्वामी तुलसीदास ने इस सत्य को इस प्रकार उजागर किया है—

' तुलसी जसि भवितव्यता, तैसी बने सहाय ।
आपु, वहाँ आवे नहीं ताहि तहाँ ले जाय ॥ '

मैं भाग्यवाद मे विश्वास कम करता हूँ। इसलिए मेरी होनहार के विषय मे पहले कुछ और ही *मान्यता थी। मैं जब किसी दुर्घटना* की बात सुनता तो तर्क देकर यह सिद्ध करने का प्रयास करता कि इसमें होनी क्या करेगी ? यह तो अमुक व्यक्ति की अमुक भूल का परिणाम है। यदि वह व्यक्ति उस समय *ऐसा आचरण नहीं करता तो यह सब कुछ होता ही नहीं ।'* किन्तु *उस दिन* मेरी आँखों के सामने घटी दुर्घटना को देखकर अब मुझे भी विश्वास हो गया है कि होनहार बलवान ही होता है। जो होनी होती है, होकर ही रहती है।

2. बस यात्रा का कार्यक्रम—मुझे एक विशेष कार्य से जयपुर जाना था। मेरे गाँव से सुबह से शाम तक जयपुर के लिए पाँच बसें चलती हैं। मेरा कार्यक्रम तो सुबह की बस से जाकर शाम को बस से लौट आने का था, किन्तु इसे होनहार के सिवा और कोई नाम नहीं दिया जा सकता कि मैं अनायास ही एक ऐसी उलझनों मे फँसता गया कि दिन की चारो बसें निकल गई और

मैं उनसे जयपुर नहीं जा सका। जयपुर जाना आवश्यक था, इसलिए बाध्य होकर मुझे सायकाल वाली आखिरी बस को ही पकडना पडा। बस मे भीड बहुत थी। मैं आगे के दरवाजे से घुसकर ड्राइवर के पास वाली सीट के पास जाकर खडा हो गया। ड्राइवर शराब के नशे मे धुत्त था। ड्राइवर के केबिन मे शराब की बदबू आ रही थी और वह ऑय-बॉय बक भी रहा था। अगले स्टैंड पर गाडी रुकी तो मैं वहाँ से हटकर पीछे की ओर आ गया। अधेरा होने लगा था। मार्ग मे एक स्थान पर नदी के मुहाने पर बहुत ही सकडा सा मार्ग था। ड्राइवर की स्थिति को देखकर लोगो ने गाडी न चलाने के लिए दबाव डाला। पहले तो वह बहुत बिखरा किन्तु जब यात्रियो ने एक मत होकर उसे दबाया तो वह कुछ नरम पड गया और उसने हाथ जोडकर सबसे माफी मांगी और सबको उसने विश्वास दिलाया कि वह पूरे होश मे है तथा पूर्ण सावधानी से ही गाडी चलायगा। यदि यात्रियो को विश्वास न हो तो वे मुहाने के इस पार ही गाडी से उतर जांय, वह खाली गाडी को दूसरे किनारे ले जाकर खडी कर देगा। फिर सब लोग आकर बैठ जाँय। ड्राइवर का यह तर्क सब को जच गया और खाली गाडी के मुहाने से पार हो जाने के बाद सब लोग उसमे जाकर बैठ गये। नदी के मुहाने पर बने अत्यन्त सकडे मार्ग पर उसने गाडी को इतनी सफाई से निकाला कि सब लोग मान गये कि वह कोई खास नशे मे नही है, योही बक-बक कर रहा है।

3. चालक की असावधानी और दुर्घटना—अब सडक चौडी और अच्छी आ गई थी। ड्राइवर का भी आत्म विश्वास कुछ बढ गया था। लोगो ने उसकी ड्राइवरी की तारीफ भी खूब की। इन सब का नतीजा यह हुआ कि वह तीव्र गति से बस को चलाने लगा। आखिरी नम्बर की बस थी। सब लोग अपने-अपने गन्तव्य स्थानो पर शीघ्रता से ही पहुँचने मे रुचि रखते थे। इसलिए ड्राइवर के तेज गाडी चलाने पर किसी ने आपत्ति नही की। मुश्किल से कोई पाँच सात मील ही गाडी चली होगी। आगे एक मोड था। मोड पर एक ट्रक खडा था जिसकी दोनो लाइटें जल रही थीं। बस के ड्राइवर ने सोचा होगा कि सामने से आने वाली गाडी भी चल रही है, इसलिए पास आने पर वह भी अपनी साइड बचा लेगी। इसी धारणा के आधार पर तेज गति से चलती हुई बस को मोड पर घुमाया होगा। हम सब की निगाह सामने ही थी। देखते-देखते हमारी बस पत्थरों से लदे खडे ट्रक से जाकर टकरा गयी। एक भीषण धमाका हुआ और बस उलट गई।

4. दारुण एवं करुणाजनक दृश्य—बस के उलटते ही यात्रियो की दशा अत्यन्त करुणाजनक बन गई। मेरी कुहनियो पर और एक घुटने पर बहुत तेज दर्द हो रहा था। बस उल्टी पड़ी थी और यात्री एक दूसरे पर आडे-तिरछे होकर

पड़े बिल-बिला रहे थे। बस की रॉडों पर रखा सामान और बक्से उन यात्रियों पर लदे पड़े थे। कुछ यात्री जैसे-तैसे उठकर खिड़कियों से बाहर निकलने की कोशिश कर रहे थे और कुछ दबे-भिंचे कराह रहे थे। मैं अपने स्थान पर ही पड़ा-पड़ा दर्द से कराह रहा था और देख रहा था कि सभी के सिर और हाथ-पावों में चोटें लगी थी। सबके कपड़े खून से तर हो रहे थे। मेरे पास ही कुछ लोग बेहोश हुए भी पड़े थे जिनके सिर या बदन के किसी अन्य भाग से रक्त की धाराएँ बह रही थीं। मैं तो पीछे की ओर था। आगे वालो को देख नही पा रहा था लेकिन वहाँ और भी हाल बेहाल था। सब लोग अपनी ही चोटों से बेहाल होकर कराह रहे थे। किसी में किसी दूसरे की सहायता करने की सामर्थ्य नहीं थी। सबसे बडी मुसीबत तो यह थी कि जो लोग जैसे-तैसे करके किसी प्रकार चल फिर सकते थे, उन्हे बस से बाहर निकलने का कोई तरीका ही नहीं सूझ रहा था। कुछ क्षण बाद ही कोहराम और भी जोर से मच गया—"बचाओ, बचाओ, मरे हम मरे! अरे हमें बहार निकालो" आदि की चीख पुकार ने वहाँ बहुत ही करुणाजनक दृश्य उपस्थित कर दिया था।

5. उपचार एवं सहायता कार्य—उस स्थान से कुछ दूर ही एक पेट्रोल पम्प था। वहाँ बैठे लोगो ने टक्कर का धमाका अवश्य सुना होगा। लोग दौड़ कर आये। आस-पास बनी ढाणियो मे भी आवाज सुनी होगी। वहाँ से भी लोग हाथ मे लालटेनें और लाठियाँ लेकर आ गये। उसी समय सामने से आने वाली एक यात्री बस भी आकर वही रुकी। उसमे से भी लोग निकल कर आ गये। इन सब लोगो ने मिलकर उलटी हुई बस मे से जैसे-तैसे यात्रियो को बाहर निकालना शुरू किया कुछ लोग खिडकियो में से नीचे बस मे उतरे। कुछ बस के ऊपर बैठे और कुछ नीचे खड़े हुए। बाहर से आवाजें आ रही थीं—"सबसे ज्यादा घायल लोगो को पहले निकालो।" बड़ी मुश्किल से भीतर वाले लोग उन घायलों की जिन्दा लाशों को खिड़कियों से बाहर निकालने लगे। धीरे-धीरे बस खाली होने लगी। *जब कुछ जगह हुई तो दिखाई दिया कि काफी लोग मर चुके थे।* ड्राइवर की केबिन मे बैठे और खड़े सभी लोग परमात्मा को प्यारे हो गये थे। यह देखकर मे कांप उठा- 'हे भगवान ! अगर उस समय मैं पीछे की ओर नहीं आता तो इस बस मे आज मेरी भी जीवन-यात्रा पूरी हो जाती।' आखिर मेरा भी नम्बर आया और मुझे भी खींच-खाच कर बाहर निकला गया। मैंने खड़े रहने की कोशिश की लेकिन मेरे घुटने मे इतना तेज दर्द हो रहा था कि मैं खडा नहीं रह सका। मुझे घायलों की पंक्ति मे एक ओर लिटा दिया गया। सबके बाद में लाशों को निकाला गया। मैं अपने स्थान पर ही लेटा-लेटा गिन रहा था। कुल तेरह लोग मर गये थे जिनमे ड्राइवर और कण्डक्टर भी शामिल थे। सभी घायल लोग पड़े-पड़े कराह रहे थे। उनमें भी कुछ की हालत चिन्ता-

जनक बनी हुई थी। उस बस का कोई भी यात्री बाल बाल नहीं बचा था। सभी चोट-ग्रस्त होकर घायलो की पंक्ति मे पड़े थे। चीख पुकार और कराहट की आवाजो से वहाँ दृश्य ऐसा करुणा-जनक बन गया था कि परिचर्या मे लगे लोगो की भी आँखो मे आँसू आ रहे थ। कोई हमे पानी पिला रहा था तो कोई हवा कर रहा था और कोई घावा पर पट्टी बाँध कर खून को बहने स रोकने का प्रयास कर रहा था।

इसी स्थिति मे करीब दो घंटे का समय बीत गया। दो घंटे बाद जयपुर से पुलिस की गाड़ियाँ, अस्पताल की एम्बुलैंस और डाक्टरो तथा नर्सों की टोलियाँ आई। रात का समय था इसलिए आस-पास के लोग गैस-लालटेनें भी ले आये थे। प्रकाश के कुछ साधन पुलिस वाले भी लाये थे। डाक्टरो और नर्सों ने बड़ी तत्परता से घायलो को देखना और चिकित्सा करना प्रारम्भ किया। जिन लोगो की हालत गभीर थी उन्हे एम्बुलैंस मे डालकर जयपुर ले जाया गया। लाशो को पुलिस के सुपुर्द कर दिया गया। मुझे देखकर डाक्टर ने बताया कि तुम्हारे घुटने पर चोट लगी है, इसलिए दर्द अधिक है। वैसे तुम भाग्यशाली रहे नही तो घुटने की हड्डी टूट भी सकती थी। थोडी मरहम पट्टी करके मुझे आराम करने की सलाह दे दी गई। एक गाँव वाले ने मुझे अपने गाँव चलने का प्रस्ताव किया और मैं उसकी साइकल के पीछे बैठकर गाँव चला गया।

6 उपसंहार—मै दो दिन बाद ही बिलकुल ठीक गया किन्तु उस भीषण दुर्घटना की याद के घाव मेरे दिल मे अब भी भरे नही हैं। कैसी भयानक थी वह रात! कैसा था वह करुण जनक दृश्य! क्या बीती होगी उन लोगो के दिल पर जिनके परिजन इस दुर्घटना मे मर गये थे। इसका दोष किसे दिया जाय क्या होनहार ही सब कुछ होता है? आदि बातें अब भी मेरे मस्तिष्क मे चक्कर काटती रहती है। क्या होता यदि मै भी मर गया होता। मेरे माता-पिता के दिल पर क्या बीतती? और जिन्हे मरना ही था वे जीवित कैसे रह सकते थे? यही है जीवन का रहस्य? लेकिन नहीं, मुझे मरना था ही नही तो मर कैसे सकता था? यही है होनहार की प्रबलता। इस दुर्घटना से एक बहुत गहरा रहस्य मेरी समझ मे यह आया कि जीवन क्षण-भगुर है। इसलिए मनुष्य जब तक जिये उसे सत्कार्यों और भलाई के कार्यों मे ही लगा रहना चाहिए ताकि यकायक मृत्यु आजाने पर भी पछताना न पड़े।

□□□

17 जब मेरा छोटा भाई मेले में खो गया

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. मेले की योजना और तैयारी
3. मेले की भीड़-भाड़, खेल-तमाशे और आमोद-प्रमोद
4. मेले में छोटे भाई का खो जाना
5. तलाश के लिए दौड़-धूप और चिन्ता
6. छोटा भाई का मिल जाना-हार्दिक प्रसन्नता
7. उपसंहार

1. प्रस्तावना—मानव-जीवन अनुभवों की एक पाठशाला है। मनुष्य अपने बाल्य-काल से ही विभिन्न प्रकार के अनुभव प्राप्त करता रहता है और उसका प्रत्येक अनुभव उसे कोई न कोई एक पाठ पढ़ा देता है। अनुभव से प्राप्त ज्ञान ही सच्चा ज्ञान होता है। ऐसा ज्ञान स्थायी होता है और भविष्य में वह मनुष्य का पथ-प्रदर्शन भी करता है। एक कहावत प्रसिद्ध है-'मनुष्य ठोकर खाकर ही सम्हलता है।' यह ठोकर मनुष्य का कटु अनुभव ही है। जब एक बार किसी परिस्थिति विशेष में मनुष्य किसी कठिनाई में पड जाता है तो उसे उस कठिनाई से छुटकारा पाने के लिए न जाने क्या-क्या प्रयत्न करने पडते हैं और कितनी मुसीबतों का सामना करना पडता है। प्रयत्न करते रहने से देर-सवेरे उसकी वह कठिनाई और परेशानी तो दूर हो जाती है, किन्तु उसे वह एक ऐसा पाठ भी सिखा देती है जो उसे जीवन पर्यन्त याद रहता है। कठिनाइयों और परेशानियों का अनुभव करने के बाद वह भविष्य में उन भूलों और गलतियों को नहीं दोहराता, जिनके कारण उसे कठिनाई में पड़ना पडा था। इस कथन के प्रमाण में मैं अपना ही अनुभव आपके सामने प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

2. विषय-प्रवेश—बात अधिक पुरानी नहीं है। दो साल पहले की ही बात है। उन दिनों मैं कक्षा 9 का विद्यार्थी था। मुझे मित्रों के साथ खेल-तमाशे देखने और आमोद-प्रमोद करने में विशेष आनन्द आता है। जब भी कोई ऐसा अवसर

आता है, मैं उसका पूरा लाभ उठाने का प्रयत्न करता हूँ। अगस्त का महीना चल रहा था। हमारे स्कूल खुल ही गये थे। वर्षा की रिम-झिम और पहाडो की हरियाली देख-देख कर कहीं न कहीं भ्रमण पर जाने की इच्छा बार-बार होती थी। विद्यालय मे अपने मित्रो के साथ प्राय रोज ही इस प्रकार चर्चाएँ होती रहती थी, किन्तु कोई उपाय नही सूझता था। एक दिन मेरे एक मित्र परमेश्वर ने बताया कि यहाँ से करीब छ मील दूर पहाडी पर नीलकठ महादेव का मन्दिर है। वहाँ एक पहाडी झरना और छोटा सा तालाब भी है। तालाब के किनारे हरियाली से ढका एक बहुत बडा मैदान है। प्रतिवर्ष भादो की अमावस्या के दिन वहाँ मेला लगता है, जिसमे हजारो लोग जाते हैं। सयोग से उस दिन रविवार भी है। क्यो न उस दिन हम भी वहाँ चलें ? मेला भी देखेंगे और प्रकृति की रमणीक छटा का भी आनन्द लेंगे।" परमेश्वर का प्रस्ताव मुझे बहुत अच्छा लगा। एक-दो अन्य साथियो से भी चर्चा की। वे भी सहर्ष तैयार हो गये। अब तो केवल एक ही काम बाकी था—माता-पिता से अनुमति प्राप्त करना। जब मैंने पिताजी से रविवार के दिन मेले मे जाने की इजाजत माँगी तो उन्होंने पहले तो थोडी आनाकानी सी की। अनेक प्रकार के प्रश्न भी मुझसे पूछे, लेकिन आखिर मेरी विनम्र हठ से प्रभावित होकर उन्होंने स्वीकृति दे दी। मैं खूब प्रसन्न हो गया। परमेश्वर और अन्य साथियो ने भी अपने घर से इजाजत ले ली थी हम लोग दो दिन तक मेले मे जाने की तैयारी करते रहे और सुखद कल्पनाओ का आनन्द लेते रहे।

रविवार के दिन सवेरे परमेश्वर और दो अन्य साथी मेरे घर आ गये। हम चारो मित्र मेले के लिए घर से रवाना होने ही वाले थे कि पिताजी मेरे छोटे भाई टिक्कू का हाथ पकडे हमारे पास आये और बोले, "रामू ! यह तुम्हारा छोटा भाई कल से ही तुम्हारे साथ मेले मे जाने के लिए मचल रहा है। इसलिए इसे भी साथ ले जाओ। और देखो, यह जरा छोटा है, इसलिए इसका ध्यान भी रखना। वैसे मैंने इसे खूब समझा दिया है। यह तुम्हे किसी भी प्रकार से परेशान नही करेगा।" पिताजी का यह फैसला मुझे बहुत बुरा लगा। टिक्कू पर तो इतना क्रोध आया कि उसके दो-चार झाँपट जमा दूँ। लेकिन मन मसोस कर रह गया। पिताजी के फैसले के विरुद्ध यदि मैं उसे साथ ले जाने मे मना करता तो मुझे इस बात की पूरी आशका थी कि वे मुझे ही जाने से रोक देते। इसलिए परिस्थिति की गम्भीरता को समझकर मैंने मजबूर होकर उसे भी अपने साथ ले लिया और हम सब मेले के लिए चल पडे। रास्ते मे कुछ दूर तक तो हम सब गुमसुम ही चलते रहे। मेरे मित्रो को भी टिक्कू का साथ चलना अच्छा नहीं लग रहा था। लेकिन थोडी ही देर बाद हमारा मूड

ठीक हो गया और हम प्रसन्नता मे हँसते-खेलते पहाड़ की ओर तेजी से आगे बढने लगे।

जहाँ से पहाड की चढाई शुरु होनी थी, वहाँ से ऊबड़-खाबड पत्थरों की एक चोडी घाटी बनी हुई थी। सब लोग उसी पर होकर चढ रहे थे, हम भी चढने लगे। भीड़-भाड खूब थी। उस घाटी के सँकड़े मार्ग में भी स्त्री-पुरुषो की धक्कम-पेल खूब हो रही थी। हम पूरी सावधानी से चल रहे थे। रास्ते मे रुक-रुक कर पहाड की हरियाली और प्राकृतिक दृश्यो का आनन्द लेते जाते थे। इस इस प्रकार चलते-चलते दोपहर बारह बजे हम मेले के प्रमुख स्थल पर पहुँच गये। पहाड की एक ढलान पर सुन्दर शिवालय बना हुआ था, जहाँ दर्शनार्थियो की भीड़ लग रही थी। "हर-हर शभो" और "नील कंठ की जय" की आवाजें दूर से ही सुनाई पड़ रही थी जो पहाड़ो की गूँज से और भी मधुर लग-रही थी। मंदिर से हट कर नीचे की ओर एक तालाब था जिसमे ऊपर से झरना गिर रहा था। बडा मनोहर दृश्य था वह। तालाब के किनारे से लगा हुआ ही एक विशाल समतल मैदान था जिस पर रग-बिरगी पोशाकें पहने लोग आमोद-प्रमोद मे व्यस्त हो रहे थे। हमने पहले मदिर मे भगवान् शिव के दर्शन किये। फिर तालाब के किनारे झरने के पास ही बैठकर भोजन किया और फिर हम मैदान की ओर मेला देखने के लिए चल पडे। मेले मे चाय, नमकीन, मिठाई और चाट की दूकानें लगी हुई थी। एक ओर बिसाती के सामान की दूकानें थी। पेडों पर झूले लटक रहे थे जिन पर मन चले लोग झूला झूल रहे थे। गुब्बारे और पीपाड़ी की 'पी पी' आवाज करते हुए खिलौने वाले इधर-उधर चक्कर लगा रहे थे। आकाश मे बादल छाये हुए थे। चारो ओर हरियाली ही हरियाली थी। हम लोग भी उस मेले की रेल-पेल मे शामिल हो गये और इधर-उधर धक्के खाते हुए मेले की मस्ती मे खो गये।

हम लोग आगे-आगे चल रहे थे और टिक्कू हमारे पीछे-पीछे चल रहा था। इसी विश्वास को मन मे लिए हम भीड मे आगे ही बढते चले गये। हम लोग अपनी मस्ती मे इतने खो गये कि हम मे से किसी ने भी मुडकर नही देखा कि टिक्कू हमारे साथ आ रहा है या नही। काफी दूर निकल जाने पर एक पकौड़ी वाले को गरम-गरम पकौडी उतारते देखकर हमारी पकौड़ी खाने की इच्छा हुई। उसकी दूकान के पास जाकर जब मुडकर टिक्कू को देखना चाहा तो टिक्कू दिखाई नही पडा।

मैंने परमेश्वर से पूछा तो उसने कहा, "अपने पीछे-पीछे ही तो था। न जाने कहाँ रुक गया! आता ही होगा कोई चीज देखने के लिए रुक गया होगा।" अब हम वहाँ खडे होकर उसकी प्रतिक्षा करने लगे। मुझे एक-एक मिनट खलने लगा। मैं उन तीनो को उसी जगह खड़े रहने के लिए कहकर पीछे की ओर

टिक्कू को ढूंढने के लिए गया। भीड को चीरता हुआ, इधर-उधर चारो तरफ आंखें भपकाता हुआ मैं काफी दूर चला गया, लेकिन मुझे टिक्कू कहीं दिखाई नहीं दिया। मैं बहुत घबराया और बेचैन हो गया। तभी मेरे मस्तिष्क मे यह विचार आया कि हो सकता है वह अब तक परमेश्वर वगैरा से जा मिला हो और मुझे भीड मे आता दिखाई न दिया हो। फिर भी मुझे अपने इस विचार पर पूरा विश्वास नहीं हो रहा था। इसलिए अबकी बार मैं दूसरे रास्ते से चला और जोर-जोर से "टिक्कू ! ओ टिक्कू" आवाजें लगाता हुआ उसे मेले मे ढूंढने लगा। काफी देर बाद मैं इधर-उधर चक्कर लगाता हुआ पकौडी वाले की दुकान पर पहुंचा। अपने साथियो से उसके तब तक भी वहां न पहुंचने का समाचार सुनकर मेरे होश उड गये। मेरे मन मन मे यह विश्वास हो गया कि टिक्कू मेले में कहीं खो गया है और अब वह कैसे मिलेगा ? मेरे साथियो का भी मेरे न पहुंचने तक तो उसके जल्दी ही मिल जाने की उम्मीद थी किन्तु मेरे खाली हाथ लौटने पर तो उनको भी चिन्ता हो गई। 'अब क्या किया जाय ? उसे कहां ढूंढा जाय और कैसे ढूंढा जाय ? न जाने वह हमसे कहां बिछडा होगा ? न जाने वह हमारी तलाश मे रोता हुआ कहां भटक रहा होगा ?' ये सब विचार मेरे मस्तिष्क मे इतनी तेजी से घूमने लगे कि मुझे चक्कर सा आने लगा और मै दोनो हाथो मे अपना सिर पकड कर जमीन पर बैठ गया। कानो मे मेले की चहल-पहल और धूम-धडाके की आवाजें पड रही थी। ये आवाजें मुझे बहुत बुरी लग रही थीं लेकिन इन्हें मैं कैसे रोक सकता था। मेरे तीनो साथी भी हक्के-बक्के होकर सोच मे ही डूब रहे थे। मेले मे पुलिस तो थी किन्तु खोये हुए या बिछुडे हुए लोगो की सूचना देने का कोई निश्चित स्थान नहीं था। मैं बिल्कुल निराश हो गया मेरी आंखो मे आंसू आ गये।

कुछ देर बाद परमेश्वर ने एक उपाय सुझाया। कहा, "वह है तो कहीं न कहीं इसी भीड मे। क्योकि जब हम भोजन करके इस तरफ आये थे तो वह हमारे साथ था और इसी भीड मे वह हमसे बिछडा है। इसीलिए हम चारो चारो दिशाओ मे जावें और जोर-जोर से आवाजें देते हुए भीड मे तलाश करें और तलाश करने के बाद हम पुन: उसी स्थान पर मिले जहां बैठकर हमने भोजन किया था। इस प्रकार यदि वह एक बार मे नहीं मिला तो दूसरी-तीसरी बार मे तो हम उसे कहीं न कहीं ढूंढ लेंगे।" यह सुझाव हम सबको पसन्द आया और हम तत्काल चारो दिशाओ मे चल पडे। मैं और दो अन्य साथी तो काफी तलाश करने के बाद भी खाली हाथ ही लौटे, किन्तु कुछ देर बाद परमेश्वर टिक्कू का हाथ थामे आता मुझे दूर से ही दिखाई पड गया। मैं बेतहाशा दौडता हुआ उसके पास गया और उससे लिपट कर खूब रोया। वह तो न जाने कब से रो रहा था। उसकी आंखें लाल-लाल हो रही थी। कुछ देर बाद हमारा चित्त शान्त हुआ। हम झरने के पास गये, हाथ-मुंह धोया और फिर एक मिठाई की दुकान पर जाकर पेडे और नमकीन खाई।

3. उपसंहार—धीरे-धीरे थोड़ी ही देर मे हम पूर्ण स्वस्थ हो गये। वही हँसी-दिल्लगी और मेले की मस्ती पुनः लौट आई। कुछ देर बाद हम घर के लिए लौट पडे। रास्ते मे मैंने कही भी टिक्कू का हाथ नहीं छोड़ा। इस घटना ने यद्यपि मुझे कुछ घटों के लिए ही परेशानी मे डाला था किन्तु मुझे यह सीख हमेशा-हमेशा के लिए मिल गई कि जोश और मस्ती मे होश कभी नही खोना चाहिए। इसी प्रकार संकट की घडी मे भी घबराना नही चाहिए और निराश होकर बैठने के बजाय सोच-समझकर सकट से उबरने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। उस दिन यदि परमेश्वर मेरे साथ न होता तो न जाने क्या होता! परमेश्वर ने ही संकट से उबारने का रास्ता बतलाया और आखिर उसी ने सकट से उबारा। इसलिए परमेश्वर को सदा साथ रखना चाहिए।

बाढ़ पीड़ित क्षेत्र का दौरा | 18

निबन्ध की रूप रेखा

1 प्रस्तावना—प्रकृति का रक्षक और विनाशकारी रूप
2. अतिवृष्टि होना और बाढ़ आ जाना
3 नागरिक सुरक्षा-संगठन की सक्रियता
4 बाढ़ पीड़ितों की सहायता
5. विनाशलीला का प्रत्यक्ष दर्शन
6 उपसंहार

1 प्रस्तावना—प्रकृति जीव मात्र की पालक और रक्षक है। वर्षा से ही हमें पानी उपलब्ध होता है। नदियाँ, तालाब और अन्य जलाशय वर्षा की कृपा से ही जल से पूर्ण होते हैं जो हमारे जीवन के मूल आधार अन्न तथा अन्य खाद्य वस्तुओं के उत्पादन में हमारी सहायता करते हैं। वर्षा से ही भूमि पर जीव मात्र के लिए पोषण की आवश्यक सामग्री उत्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त वायु, प्रकाश और धूप से भी प्रकृति हमारे जीवन की रक्षा करती है। इस प्रकार प्रकृति के जितने भी रूप हैं वे सब जीवों के पोषण और रक्षा के लिए ईश्वर के द्वारा दिया गया एक वरदान है, लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता है कि यह रक्षक और पोषक प्रकृति घोर विनाशकारी रूप भी धारण कर लेती है। जिस वायु में हम श्वास लेकर जीवित रहते हैं वही कभी-कभी प्रचंड वेग से बहने वाली आँधी और तूफान का रूप धारण करके व्यापक विनाश का कारण बन जाती है। भीषण गर्मी से तपते हुए प्राणी जिस वर्षा के आगमन की आतुरता से प्रतीक्षा करते रहते हैं और आकाश में उमड़ते बादलों को देखकर जिस वर्षा की आशा में उनकी आँखें आकाश की ओर टकटकी लगाकर देखती रहती है, वही वर्षा जब अतिवृष्टि का रूप धारण करके पृथ्वी पर गिरती है तो उसका प्राण-दायक स्वरूप प्राण-लेवा बन जाता है।

2. विषय प्रवेश—जयपुर में वर्षा के इतिहास में सत्रह-अठारह जुलाई 1981 की तारीखें सदा याद रहेंगी। जयपुर नगर और आस-पास के क्षेत्रों में सत्रह जुलाई को प्रातःकाल शुरू हुई वर्षा ऐसी जमी कि लगातार रात और दिन पूरे छत्तीस घंटों तक मूसलधार वर्षा होती रही, जिसमें चालीस इंच पानी गिरा।

लोग अपने घरो मे या अन्य स्थानो पर जहाँ कहीं भी वे थे, फँसे रहे। सब के मन भय से काँप रहे थे—'न जाने क्या होने वाला है !' इस अतिवृष्टि का प्रभाव कहाँ कितना पड रहा है, इसका किसी को भी अनुमान नही था। अठारह जुलाई को प्रातःकाल रेडियो पर समाचार सुना तो पता चला कि जयपुर का रेल, सडक और वायु इन सभी मार्गो से देश के अन्य भागो से सम्पर्क टूट गया है। जयपुर के उत्तरी भाग से निकल कर पश्चिमी भाग मे होकर बहने वाला अमानीशाह का नाला एक उफनती हुई नदी के रूप मे बह रहा है और उसने मार्ग के सभी पुलों को तोड़ दिया है। समाचार सुनकर हम सब चिन्तित हुए। इस नाले ने बहते हुए न जाने कौनसा मार्ग अपना लिया होगा और इसके बहाव क्षेत्र मे पडने वाले स्थानों की जाने कैसी दुर्गति हो रही होगी। वर्षा रुके तो इन सब बातो की जानकारी करना सभव हो और प्रचार भी हो सके, पीडितो की सहायता करने का भी प्रयास किया जा सके, किन्तु वर्षा थमने का नाम ही नहीं ले रही थी। कुछ क्षणो के लिए इसकी रफ्तार कुछ धीमी पड जाती, किन्तु फिर वही मूसलाधार पानी गिरने लगता। सब लोग अपने-अपने घरो मे टपकती छतों के नीचे बैठे-बैठे राम-नाम जप रहे थे और किसी अनिष्ट की आशका से भयभीत हो रहे थे।

आखिर तीसरे दिन वर्षा रुकी। लोगो ने राहत की सास ली। मैं नागरिक सुरक्षा दल मे सैक्टर वार्डन का काम करता हूँ। इस दैवी विपत्ति के समय पीडितो की सहायतार्थ अपनी सेवाएँ अर्पित करने के लिए उत्सुक हो रहा था। तभी मुझे पोस्ट वार्डन का सदेश मिला कि मैं शीघ्रातिशीघ्र नागरिक सुरक्षा-दल के कार्यालय मे पहुँच जाऊँ। सन्देश मिलते ही मैंने आवश्यक सामग्री साथ ली और निश्चित स्थान पर पहुँच गया। वहाँ नागरिक सुरक्षा दल के सभी अधिकारी और स्वय सेवक उपस्थित थे। कमान्डर बतला रहे थे कि जयपुर नगर के बाहर सभी दिशाओं मे वर्षा से जन-धन की भारी हानि हुई है, किन्तु सबसे अधिक गम्भीर स्थिति जयपुर के दक्षिणी भाग मे सागानेर कस्बे और कस्बे से आगे पडने वाले क्षेत्र की है जहाँ मीलो तक पानी फैला हुआ है और गाँव के गाँव जलमग्न हो गये हैं। हमें सबसे पहले सहायता कार्य करके, पीडितों को राहत पहुँचानी है। झटपट टोलियाँ गठित हुई, प्राथमिक चिकित्सा तथा अन्य आवश्यक सामग्री एकत्रित हुई और पुलिस तथा आर. ए. सी. के जवानों से लदे ट्रकों के साथ एम्बुलेंस गाडियाँ और हमारी जीपें घटनास्थल की ओर दौड पडीं। हम सागानेर कस्बे से आगे उस स्थान पर पहुँचे जहाँ पानी एक विशाल झील की तरह भरा हुआ था। जहाँ तक दृष्टि जाती थी। पानी ही पानी नजर आता था। पानी मे डूबे हुए पेड और कहीं-कहीं झोपडे भी नजर आते थे। काफी दूर एक छोटी पहाडी भी नजर आ रही थी। कमाण्डर ने दूरबीन से देखा तो पता चला कि पेडों की डालों पर तथा पहाडी पर लोग चढे हुए हैं और सहायता की प्रतीक्षा कर रहे हैं। आर. ए. सी. के जवानो ने नौकाएँ

पानी मे उतार दी और हमारी टोलियाँ सहायता के लिए चल पडी। जहाँ पानी कम गहरा होता था वहाँ पतवार कभी तो किसी धराशायी हुए मकान के ढेर से टकराती थी और कही किसी मरे पशु की लाश से। इससे यह अनुमान सहज होता था कि इस पानी म न जाने कितने मनुष्यो और पशुओ की लाशें डूबी पडी होगी, लेकिन इस समय तो हमे केवल जीवितो को ही बचाना था। पेडो के पास जाने पर हमने देखा कि बहुत से लोग पेडो की डालो से बन्दरो की तरह चिपटे भूखे-प्यासे जिन्दगी और मौत के बीच भूल रहे हैं। नौका का पेड के तने से बाँधा और और नसैनी लगाकर स्वय सेवक ऊपर चढे। उन मृतप्राय लोगो को बडी सावधानी से नीचे उतारा गया। प्राथमिक चिकित्सा की गई। खाने-पीने को दिया गया और नौकाओ से उन्हे सहायता शिविरो मे पहुँचाया गया।

यह सहायता कार्य और राहत कार्य दिन रात चलते रहे। सरकारी सहायता दलो के अतिरिक्त अनेक समाज-सेवी सगठन भी इस कार्य मे जुटे थे। कोई चिकित्सा-व्यवस्था को देख रहा था तो कोई आवास-व्यवस्था को। कोई भोजन पानी की व्यवस्था मे लगा था तो कोई पहनने-ओढने के वस्त्रो की व्यवस्था मे लगा हुआ था। पानी में फँसे जिन लोगो को शीघ्र ही नही निकाला जा सका, उनके पास हैलिकोप्टरो से खाद्य-सामग्री के पैकेट गिराये जा रहे थ।

दो-तीन दिन बाद पानी धीरे-धीरे उतरने लगा। जब पानी उतरा तो उस क्षेत्र का दृश्य बडा ही वीभत्स और करुणाजनक बन गया। टूटे-फूटे मकानो के ढूह कब्रिस्तान से दिखाई पडते थे। वही मकानो के नीचे दबे पशुओ और मनुष्यो की लाशें दिखाई पडती थी। जब पानी बिलकुल उतर गया तो जमीन पर मनुष्यो और पशुओ की लाशें पडी दिखाई दी। सहायता शिविरो से आ-आकर लोग अपने परिजनो की लाशो को पहचानने लगे। उनका करुण क्रन्दन सुनकर सहायता कार्यों मे लगे स्वय सेवको को भी रोना आ जाता था। कोई अपने पुत्र के लिए छाती पीट-पीटकर रो रहा था तो कोई अपने पिता, माता, पत्नी, पति अथवा भाई-बहिन के लिए रो रहा था। उनमे कुछ तो ऐसे मन्दभागी भी थे जिनका सारा परिवार ही जल-समाधि लेकर उन्हे रोने के लिए अकेला छोड गया था। सहायता कार्य म लगे लोग उन्हे ढाढस बँधा रहे थे, किन्तु जिन्होने अपनी आँखो के आगे ही अपनी दुनियाँ को बरबाद होते देखा था, वे धीरज कैसे धरते? वे रो-रोकर पागल हुए जा रहे थे। एक ग्रामीण ने हिचकियाँ लेते हुए रो-रोकर बतलाया कि किस प्रकार उसकी आँखो के सामने ही उसका सारा गाँव बरबाद होता रहा और वह असहाय बना देखता रहा। वह कितना मन्दभागी है कि इस पहाड से दुख को झेलने के लिए अकेला ही बचा है। इसी तरह का करुणाजनक विलाप सभी लोग कर रहे थे। एक बूढा किसान तो अपनी दामाद की लाश से लिपटकर ऐसा रोया कि वह दृश्य

किसी से देखा नही गया। वह डकार-डकार रोता हुआ जो कुछ कह रहा था उसका सार यह था कि उसका दामाद उसकी बेटी को लेने दो दिन पूर्व ही गाँव मे आया था। जब बाढ़ आई तो उस समय वह खेत पर ही था। उसे खेत पर उस बूढे ने ही भेजा था। यदि वह भी गाँव मे ही होता तो बूढे के साथ भागकर अपनी जान बचा लेता। कैसा दुर्भाग्यपूर्ण सयोग हुआ कि बूढे माँ-बाप बच गये और जवान बेटी-दामाद चले गये।

उसे पकड़कर स्वय सेवको ने अलग किया और जल्दी-जल्दी मनुष्यों की लाशो को वहाँ से हटाने लगे। मनुष्य तो कम ही बाढ़ की चपेट मे आये थे, किन्तु पशु तो सभी मारे गये थे। उनकी लाशे दूर-दूर तक फैली पडी थी जिन्हे गिद्ध और कौए नोच-नोचकर खा रहे थे। लाशो मे निकलने वाली दुर्गन्ध वायु-मण्डल मे व्याप्त हो रही थी। शीघ्र ही उन मृत पशुओं को भी वहाँ से हटाने की व्यवस्था होने लगी। वहाँ की भूमि का यह हाल था कि पानी के कटाव मे जगह-जगह गड्ढे बन गये थे और यह स्पष्ट प्रतीत होता था कि अब यह जमीन कृषि के योग्य नही रही है।

3 उपसंहार—अखबारो मे इस विनाश लीला की चर्चा सुर्खियो मे छपी। राज्य-सरकार ने सहायता और पुनर्वास के लिए विशेष प्रयत्न किये। केन्द्रीय सरकार ने इस दैवी विपत्ति मे पीडितो के प्रति अपनी सहानुभूति प्रदर्शित की। स्वय प्रधानमत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी ने हैलिकाप्टर से बाढ़ पीडित क्षेत्रो का दौरा किया और राज्य-सरकार को प्रधानमत्री सहायता कोष से एक बडी राशि सहायता के लिए स्वीकृति की। अनेक स्वय सेवी सगठनो ने भी सहायता कोष स्थापित किये और बाढ-पीडितो को सहायता पहुँचाई। इस विनाश लीला की चर्चा लोग रोज ही अपने घरो पर, दुकानो तथा अन्य स्थानो पर इकट्ठे होकर किया करते थे। कोई कहता था —दुनिया मे पाप और अन्याय बहुत बढ गये है, इसलिए ईश्वर ने कोप किया है तो कोई इस दुर्घटना को वैज्ञानिको द्वारा किये जा रहे अणु-विस्फोट का परिणाम बतलाता था। अन्त मे केवल इतना ही समझ पाया कि उत्पत्ति और मृत्यु ये दोनो प्रकृति के शाश्वत नियम है जो सदा चलते आये हैं और चलते रहेंगे।

□□□

शरारत जो मँहगी पड़ी | 19

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2 मेरे एक मित्र का शरारती स्वभाव
3 कुछ शरारतें
4 वह शरारत जो मँहगी पडी
5. उपसहार

1 प्रस्तावना—किसी कवि की एक उक्ति प्रसिद्ध है-'तेरे मन कुछ और है, दाता के कुछ और।' यह उक्ति बडी सार्थक और सही है शायद किसी ने अपने जीवन के अनुभवों का सार इस उक्ति मे भरने का प्रयास किया है। हमारे जीवन मे अनेक अवसर ऐसे आते हैं, जब हम कोई कार्य करते तो किसी अन्य उद्देश्य से है और परिणाम कुछ और ही सामने आता है। हम किसी विषय मे सोचते कुछ और है, होता कुछ और है। कभी कभी हमारे जीवन मे अनायास ही ऐसी घटनाएँ घटित हो जाती हैं, जिनकी हम कल्पना भी नही करते। कभी हम बडे अपराध करके भी निर्दोष ही बने रहते हैं और कभी हमारी साधारण सी भूल भी बहुत घातक सिद्ध हो जाती है। ऐसा हमेशा ही होता हो यह बात तो नहीं है, किन्तु अनेक बार जब ऐसी घटनाएँ घट जाती है तो यह मानने को बाध्य होना ही पडता है कि इस कथन मे सच्चाई है।

2 शरारती स्वभाव और शरारतें—मेरी कक्षा का एक छात्र है-शैतान सिंह। उसका यह नाम 'यथा नाम तथा गुण' की कहावत चरितार्थ करता है। या तो किसी ज्योतिषी ने उसकी ग्रह-दशा को देखकर ही उसका यह नाम सुझाया होगा और या फिर बचपन मे उसके शरारती स्वभाव के प्रकट होने पर उसके माता पिता ने यह नाम रखना उचित समझा होगा। या यह भी हो सकता है कि जापानियों की मान्यता के अनुसार बालक का हम जैसा नाम रखते हैं, बडा होने पर वह वैसा ही बन जाता है, उसका प्यार मे नाम शैतान सिंह रख दिया हो और फिर नाम के आधार पर ही उसमे शरारत के गुण विकसित हो गये हों। जो भी हो, इसमे सन्देह नही कि उसका नाम शैतान सिंह यथार्थ है।

शैतानियों में उसका कोई भी मुकाबला नहीं कर सकता। इसलिए वह शैतानों का राजा 'शैतान-सिंह' ही है।

कद में वह बहुत छोटा है। शरीर से भी दुबला-पतला और कमजोर ही दिखाई पड़ता है। रंग-रूप में वह बहुत खूबसूरत और भोला-भाला ही दिखता है। उसकी मासूम शक्ल को देखकर कोई यह कल्पना भी नहीं कर सकता कि वह एक खतरनाक शरारती लड़का होगा। मुझ से वह पक्की मित्रता रखता है, यद्यपि मैं उससे बहुत सावधान रहता हूँ और डरता भी हूँ, लेकिन वह हमेशा मुझे अपने साथ रखता है और मुझसे कभी शरारत न करके 'एक घर तो डायन भी छोड़ती है' वाली कहावत चरितार्थ करता है। मुझे अपने साथ रखने का कारण भी मैं जानता हूँ। मैं शरीर से लम्बा-चौड़ा और हृष्ट-पुष्ट हूँ। जब कभी शरारत के कारण उसकी पिटाई की नौबत आ जाती है तो मैं उसकी रक्षा कर लेता हूँ। उसके साथ रहने में मुझे भी अच्छा लगता है क्योंकि उसकी शैतानियों के फलस्वरूप जब कोई विचित्र परिस्थिति बनती है तो मुझे भी देखने में खूब मजा आता है।

कक्षा में लड़कों से छेड़-छाड़ करना, किसी की किताब किसी दूसरे लड़के के थैले में रखकर उसे चोर साबित कर देना, किसी लड़के की किसी अध्यापक से झूठी शिकायत करके उसे पिटवा देना, दो गहरे मित्र लड़कों को उल्टी-सीधी बातें समझाकर उनमें लड़ाई-झगड़ा करवा देना, फुटबाल की टीम में उसे शामिल न करने पर मैच शुरू होने से ही चुपके से गेंद में सुई चुभाकर खिलाड़ियों को परेशानी में डाल देना और प्याऊ में रखे चपरासी के भोजन के साथ आई सब्जी में खूब सारा नमक मिलाकर उसके भोजन का मजा किरकिरा कर देने के साथ-साथ घर पर उसका उसकी घरवाली से झगड़ा करवा देना आदि अनेक ऐसी शैतानियाँ वह करता ही रहता है और शैतानियों का पर्दा खुलने से पहले ही हमें बतला देता है, जिससे हम वह परिस्थिति उत्पन्न होने पर खूब हँसते और मनोरंजन करते हैं। इस प्रकार की शरारतें करना उसके लिए बहुत साधारण बात है, लेकिन उसका मस्तिष्क तो शैतानियों का घर है क्योंकि उसे किस स्थान अथवा परिस्थिति में क्या शरारत सूझ पड़ेगी, कोई कल्पना भी नहीं कर सकता।

एक रोज 'नाग पञ्चमी' के दिन स्कूल में जल्दी ही छुट्टी हो गई। हम घर पर किताबें रखकर मेला देखने गये। हम कुल पाँच लड़के साथ थे, जिनमें शैतान सिंह भी था। मेले में खूब भीड़ थी। स्त्रियाँ टोली बना-बनाकर गीत गाती हुई आ जा रही थीं। स्थान-स्थान पर कालबेलिये (सपेरे) साँपों के पिटारे लिए बैठे थे और बीन बजा-बजाकर काले भयंकर साँपों को नचा रहे थे। दर्शक उन्हें नाग-देवता समझकर पैसे चढ़ा रहे थे। एक गुब्बारे वाला गुब्बारों में गैस भर-भरकर बेच रहा था। गैस से भरे गुब्बारे हवा में ऊँचे उठ रहे थे, जिन्हें उसने

धागों मे बाँधकर हाथ मे पकड रखा था। उसकी खूब बिक्री हो रही थी। उसके हाथ में बहुत सारे बडे-बडे गैस से भरे गुब्बारों के धागे लटक रहे थे। कहीं-कहीं गरमागरम पकौडी और चाट की दूकानें लगी हुई थीं। हम खूब मस्ती से इधर-उधर घूम रहे थे और मेले का आनन्द ले रहे थे। शैतान सिंह हमारे साथ ही था और कोई भी शरारत नहीं कर रहा था। मै जानता था कि वह कोई शरारत सोच रहा होगा। अवसर मिलते ही कर डालेगा। चलते चलते हम एक कालबेलिये के सामने जाकर रुके। उसने गले मे एक बडा सा काला सर्प डाल रखा था और वह ऐसा दिखता था जैसे भगवान शिव ही विराजमान हो रहे हो। उसके सामने रखे पिटारे मे और भी अनेक सांप थे, जिन्हे वह दर्शनार्थियों को दिखा दिखाकर पैसे कमा रहा था। कुछ क्षण बाद ही शैतान सिंह ने मेरे कान मे कहा, "तुम जरा यहीं खडे रहना। मैं अभी आता हूँ।" यह कह कर यह वहां से खिसक गया। कुछ देर बाद आकर उसने कालबेलिये से कहा, "बाबा! तुमको उधर मेरे पिताजी बुला रहे हैं। वे तुम्हारा एक फोटो खीचेंगे यहां तुम्हारे पिटारे के पास मैं बैठा हूँ। किसी को हाथ नहीं लगाने दूंगा।" यह कहकर उसने कुछ ही दूर खडे एक मोटे से आदमी की ओर इशारा किया, जिसके हाथ मे एक कैमरा भी था। कालबेलिया थोडा झिझका तो जरूर। उसने पिटारे को उठाना भी चाहा, लेकिन फिर शायद यह सोचकर कि इस पिटारे को कौन ले जायगा? और पिटारा उठाने पर उसकी यह जगह छूट जायेगी। यह बालक बैठा ही है—उसने पिटारे को ठीक से बन्द किया और कुछ कमाई की आशा मे फोटो खिचवाने के लिए चल पडा। उसके कुछ दूर जाते ही शैतान सिंह ने फुर्ती से उस पिटारे को उठाया और पास ही खडे गैस के गुब्बारे वाले के पांवो की तरफ फेंक दिया और भाग खडा हुआ। पिटारा खुलते ही सांप निकल पडे। हडबडाहट मे गुब्बारे वाले के हाथ से गुब्बारों का गुच्छा छूट गया और गुब्बारे आकाश मे उड गये। सांप तेजी से इधर-उधर चलते जा रहे थे और मेले मे हडकम्प मचा हुआ था। चारो तरफ ऐसी भगदड मची कि आदमी पर आदमी गिरने लगे। किसी की समझ मे नहीं आ रहा था कि माजरा क्या है? कुछ देर बाद लोगो के भाग खडे होने से मैदान खाली हुआ तो उसमे कुछ सांप रेंगते नजर आये। कुछ देर म वह कालबेलिया घबराया हुआ आया और उसने गिन गिनकर सांपो को इकट्ठा किया। उसके और गुब्बारे वाले के बतलाने पर लोगो को पता चला कि यह एक लडके की शरारत थी। लोग उसे ढूंढने लगे, लेकिन वह उन्हे कहां मिल सकता था? हम भी वहां से जल्दी से टरक गये, क्योंकि हमे यह डर था कि कोई यह न कह दे कि वह लडका इनका साथी ही था।

3. शरारत जो महँगी पड़ी—और भी सुनो—हम जब विद्यालय से घर लौटते तो शैतान सिंह रास्ते में अनेक शरारतें करता चलता था। सामने से आने वाली साइकिलों के पास आते ही वह कुछ ऐसा अभिनय करता कि साइकिल सवार हड़बड़ा जाता और सन्तुलन खोकर गिर पड़ता। तब फिर शैतान सिंह उसे उठाता और प्यार से कहता "भैया ! जरा ध्यान से चला करो।" बेचारा साइकिल सवार शर्मिन्दा होकर अपनी चोट को सहलाता हुआ चला जाता। कभी ताँगे के पास से गुजरने पर घोड़े के पाँवों में पटाखा चलाकर घोड़े को मचला देता और ताँगे के चालक, उसमें बैठी सवारियों और अन्य राहगीरों के लिए मुसिबत खड़ी कर देता। एक दिन विद्यालय से घर की ओर आते समय रास्ते में सामने से उसे एक मोटर साइकिल आती दिखाई दी। उसने शरारत सोच ली। जब मोटर साइकिल हम से कोई दस गज ही दूर होगी, उसने विचित्र सी आवाज करके चालक का ध्यान भंग कर दिया। ध्यान भंग होते ही उसका सन्तुलन बिगड़ गया। दूसरे ही क्षण मोटर साइकिल ने शैतान सिंह को जोरदार टक्कर मारी। चालक तो बाल-बाल बच गया, लेकिन शैतान सिंह के एक पाँव और एक हाथ की हड्डी टूट गई। उसके सिर में भी चोटें आई। वह बेहोश होकर गिर पड़ा। उसके सारे कपड़े खून से लथपथ हो गये। बाजार में भीड़ इकट्ठी हो गयी। मोटर साइकिल के चालक की खूब पिटाई हुई। कुछ समझदार लोगों ने आकर उसे बचाया। एक टैक्सी में डालकर वह चालक और कुछ अन्य लोग उसे अस्पताल में ले गये हमने दौड़कर उसके घर पर खबर की।

4 उपसंहार—करीब तीन महीने बाद वह अस्पताल से ठीक होकर आया। उसके हाथ की हड्डी तो ठीक से जुड़ गई, लेकिन पाँव की हड्डी जुड़ने में थोड़ी कसर ही रह गई। इसलिए वह अब चलने में लंगड़ाता है। उसकी पढ़ाई का एक वर्ष बरबाद हो गया और उसके इलाज में भी करीब पाँच हजार रुपये खर्च हो गये। अब वह शरारत बिल्कुल नहीं करता है। एक दम सीधा-सादा लड़का बन गया है। मैं जब उसके दुर्घटना से पूर्व के जीवन की याद करता हूँ कि वह कितनी शरारतें करता था। हर बार अपनी शरारत में दूसरों को संकट में डालकर स्वयं पूर्ण सुरक्षित रहता था और खूब हँसता था। मेरे विचार में यह उसका पाप-कर्म ही था। उसे उसकी शरारतों का अधिक मूल्य चुकाना पड़ा। अब वह जीवनभर लंगड़ा ही रहेगा। उसे यह एक ऐसी हानि हुई है जो कभी भी किसी प्रकार से पूरी नहीं हो सकती।

□□□

मतदान के दिन की एक मनोरंजक घटना | 20

निबन्ध की रूप रेखा

1 प्रस्तावना—चुनाव जनतत्र का मूल आधार
2. दोष-पूर्ण शासन प्रणाली
3 मतदान-केन्द्र की एक मनोरजक घटना
4 घटना का प्रभाव और प्रतिक्रिया
5 उपसहार

1. प्रस्तावना—चुनाव जनतत्र का मूल आधार है। निर्वाचन के द्वारा ही यह निर्णय होता है कि जनता का बहुमत किस दल अथवा उम्मीदवार के पक्ष मे है। शासन-प्रक्रिया मे जनता की भागीदारी चुनाव के द्वारा ही होती है। पाँच वर्ष मे या इससे पूर्व जब भी विधान-सभाओ, लोक सभा अथवा ग्राम-पचायतो के चुनाव होते हैं, तो जन-समर्थन प्राप्त करने के लिए सभी उम्मीदवारो को जनता के सामने आना पडता है और उनके आक्रोश को भी सहन करना पडता है। एक साधारण सा व्यक्ति भी जब किसी बडे और अत्यन्त प्रभावशाली नेता को खरी खोटी सुना देता है, तो वह उसे बडे सद्भाव से नत मस्तक होकर सुन लेता है। उस समय उस मतदाता को यह अहसास होता है कि उसके मत का कितना अधिक मूल्य है। चुनाव मे भाग लेने वाले सभी उम्मीदवार मतदाताओ की खुशामद करते है और उन्हे हर प्रकार से प्रसन्न करने का प्रयत्न करते हैं। मतदाता भी उम्मीदवारा की गर्ज को खूब समझता है, इसलिए वह भी जितना हो सकता है, उस अवसर का लाभ उठाने का प्रयत्न करता है।

2. दोष-पूर्ण शासन-प्रणाली—हमारे देश मे जनतत्र अभी अपनी प्रारम्भिक अवस्था मे ही है। चुनाव-प्रणाली मे बहुत से दोष है, किन्तु जिन राजनैतिक दला को दोषपूर्ण चुनाव-प्रणाली से ही लाभ मिलता है, वे इसमे सुधार की बात क्यो सोचने लगे ? अन्य दल भी चुनाव प्रणाली मे सुधार करने की बातें तो करते है, किन्तु इसके लिए ईमानदारी से वे भी प्रयत्न नही करते, बल्कि इस प्रणाली की खामियो से वे भी लाभ उठाने का ही प्रयत्न करते रहते हैं।

हमारी चुनाव-प्रणाली का सबसे बडा दोष यह है कि यह खर्चीली बहुत है। जिसके पास चुनाव मे खर्च करने के लिए खूब धन होता है, वही चुनाव लडता है और वही चुनाव जीत भी जाता है। पैसा एक ऐसी चीज है जिसके लालच मे कोई भी फँस जाता है और हमारे देश मे-जहाँ गरीबो और दरिद्रो की सख्या खूब है-पैसा बहुत प्रभावशाली भूमिका निभाता है। हमारे देश मे तो पैसो से वोट ही नही ईमान और धर्म भी खरीदा जाता है। पैसो की इस शक्ति और क्षमता से राजनैतिक दल तथा उम्मीदवार पूर्णतया परिचित हैं और चुनाव के समय वे पैसे को पानी की तरह बहाकर अपने पक्ष मे अधिकाधिक मत प्राप्त करने मे कोई कसर नही छोडते। पैसा खर्च करने की विधियाँ भी वे जानते हैं और समय, स्थान तथा व्यक्ति के अनुसार नये-नये तरीको की खोज और ईजाद करते रहते हैं।

3. मतदान केन्द्र की एक घटना—राजस्थान विधान सभा के चुनाव हो रहे थे। हमारे क्षेत्र मे कुल पाँच उम्मीदवार मैदान मे बचे थे, जिनमें दो के बीच ही काँटे की टक्कर थी। शेष तीन उम्मीदवार तो नगण्य थे। उन्हें शायद वोट काटने के लिए ही पैसा देकर किसी उम्मीदवार ने खड़ा किया था। चुनाव के दिन सभी मतदान केन्द्रो पर सुबह से ही मतदाताओं की भीड लगी हुई थी। उम्मीदवारो के समर्थक और कार्यकर्त्ता खूब दौड धूप कर रहे थे मतदान केन्द्रों के बाहर तम्बू लगे हुए थे, जिनमें बैठे कार्यकर्त्ता मतदाताओं की पर्चियाँ काट रहे थे। चाय की दुकानो, पान-सिगरेट की दुकानो तथा अन्य स्थानो पर लोगों की भीड़ लग रही थी। रग-बिरगी पोशाकें पहने स्त्री-पुरुष मतदान केन्द्रो पर आ-जा रहे थे और एक अच्छे-खासे मेले का सा दृश्य उपस्थित हो रहा था। लोग अपने-अपने कयास लगाकर जीत-हार के दावे कर रहे थे।

मतदान-केन्द्रो के भीतर प्रत्येक उम्मीदवार के पोलिंग एजेण्ट बैठे थे जो मतदाताओं की शिनाख्त का काम कर रहे थे। वे पूर्ण सतर्क और चौकन्ने थे। वे बराबर इसी बात की चौकसी कर रहे थे, कि कोई नकली मतदाता मतदान न कर सके। शुरु के चार घण्टो मे मतदान को गति बहुत तीव्र रही। इस अवधि मे किसी भी मतदान केन्द्र पर न किसी प्रकार का तनाव पैदा हुआ और न ही कोई झन्झट हुआ। मतदान का कार्य शान्तिपूर्वक चलता रहा। जब मतदाताओं की सख्या बहुत कम हो गई तो उम्मीदवारो के कार्यकर्त्ता अपनी-अपनी मतदाता सूचियाँ लेकर मतदाताओं को घरो पर टटोलने लगे और जिन्होंने मतदान नही किया था, उन्हें पहले मतदान कर आने का आग्रह करने लगे। इस अभियान के दौरान ही एक उम्मीदवार के कार्यकर्त्ताओं को पता चला कि रामस्वरूप नाम के एक युवक की बहू यहाँ नही है, वह अपने मायके मे गयी हुई है। संयोग से उनके यहाँ कुछ मेहमान भी आये हुए थे, जिनमे एक शादीशुदा युवती भी थी। कार्यकर्त्ताओं ने सोचा कि यह युवती घूँघट मे जाकर अपना नाम तारा तथा पति का नाम

रामस्वरूप बतलाकर वोट दे दे तो एक वोट अपने पक्ष मे और बढ सकता है। युक्ति तो बडी अच्छी सूझी थी, लेकिन वह युवती और उसके घर वाले मानें तभी तो। इस योजना की क्रियान्विति के लिए दौड धूप शुरू हुई। पहले तो सबने साफ मना कर दिया, लेकिन फिर उन पर न जाने क्या जादू हुआ कि वे सब ही तैयार हो गये। विपक्षी कार्यकर्त्ता भी गलियो मे ही चक्कर लगा रहे थे। उन्हे वस्तुस्थिति का तो ज्ञान नही हुआ, किन्तु वे इतना अवश्य समझ गये कि दाल मे कुछ काला है। इसलिए उन्होंने वहाँ अपने गुप्तचर छोड दिये और पोलिंग एजेण्टो को सावधान कर दिया।

दिन मे करीब दो बजे मतदान केन्द्र पर एक युवती लम्बा घूँघट निकाले एक छोटी बालिका को साथ लिए आयी। उस समय मतदान केन्द्र पर भीड भाड बिल्कुल नही थी। उस बालिका को तो पुलिस के सिपाहियो ने बाहर ही रोक लिया, युवती भीतर प्रविष्ट हो गई। जब वह मतदान अधिकारियो के सामने जाकर खडी हुई तो कुछ घबडाई हुई सी थी। पोलिंग एजेन्ट पहले से चौकन्ने थे। उसने अपने हाथ की पर्ची प्रथम मतदान अधिकारी को दी। उसने मतदाता सूची मे उसका नम्बर ढूँढा और उससे अपना नाम बतलाने के लिए कहा। वह चुप रही। उससे दुबारा और तिबारा नाम पूछा गया, लेकिन वह चुप ही रही। चौथी बार मतदान अधिकारी के नाराज से होकर बोलने से वह धीरे से बोली, "इस पर्ची मे मेरा और मेरे पति का नाम लिखा हुआ है, आप पढ लीजिए।" मतदान अधिकारी को कुछ सन्देह हुआ। उसने उसे समझाते हुए कहा, 'आप पढी लिखी मालूम होती है। आप को अपना नाम बतलाने मे क्या आपत्ति है? जब तक आप अपने मुँह से अपना नाम नही बतलायेंगी हम आपको वोट नही डालने देंगे।" यह कहकर उसने फिर उससे पूछा, "आपका नाम?" युवती ने धीरे से कहा, "तारा।" अधिकारी ने दूसरा प्रश्न किया, "क्या आप रामस्वरूप की बीबी है?" युवती के मुँह से अनायास ही निकल गया, "नही।" उस समय तक वह भोली भाली लडकी काफी घबरा चुकी थी। वोट देना गया भाड मे। वह तो जल्दी से जल्दी पीछा छुडाकर भागना चाहती थी। जब मतदान अधिकारी ने उससे पुन पूछा, "आप उल्टे-सीधे जवाब क्या दे रही हैं? साफ-साफ बतलाइये कि आपके पति का नाम रामस्वरूप है या नही?" युवती ने पीछा छुडाने की नीयत से साफ-साफ कह दिया, "नही है, नही है, नही है। मेरा नाम भी तारा नही है। मैं तो किसी के बहकाने मे मे आकर वोट देने आयी थी। अब मुझे वोट भी नही देना है।" यह कहकर वह तेजी से मतदान केन्द्र के बाहर निकलने के लिए चल पडी। पोलिंग एजेन्ट तो पहले से ही सावधान थे। उन्होंने लपककर उसका रास्ता रोक लिया और उसे बहकाने वाले व्यक्ति का नाम बतलाने के लिए उस पर दबाव डालने लगे। इधर मतदान अधिकारियो से उसे गिरफ्तार करने के लिए कहने लगे। उसे बहकाकर लाने वाले कार्यकर्त्ता भी बाहर ही खडे थे। गडबड होती देखकर वे भी

भीतर दौड़ आये । वे उसे जबर्दस्ती मतदान केन्द्र से बाहर निकालने का प्रयास करने लगे। इतनी ही देर में दोनों ही पक्षों के कुछ और लोग भी आ गये। अब वह मतदान-स्थल एक युद्ध-स्थल बन गया। पुलिस के जवान उन्हें रोक रहे थे और किसी तरह झगड़ा टाल रहे थे, लेकिन टल कैसे सकता था? पहले जोर-जोर से कहा-सुनी हुई और फिर लात-घूँसों से मारपीट शुरू हो गई। झगड़ा उस युवती को लेकर ही हो रहा था। इसलिए वहाँ तैनात पुलिस के सिपाही ने उस लड़की को हाथ पकड़ कर एक तरफ खड़ी कर दी और पुलिस के उड़न दस्ते को टेलीफोन करने चला गया। उधर दोनों पक्षों के लोग घूँसम-घूँसम में व्यस्त थे। लड़की मौका पाकर वहाँ से खिसक गई और सीधे अपने घर पहुँच गई।

कुछ ही देर में वहाँ सशस्त्र पुलिस के साथ मजिस्ट्रेट आ पहुँचा। पुलिस को देखते ही तमाशबीनों की भीड़ तो भाग खड़ी हुई। झगड़ा करने वाले दोनों ही पक्षों के कार्यकर्त्ताओं को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया। मजिस्ट्रेट ने मुख्य मतदान अधिकारी से मामले की जानकारी की और यह जान कर संतोष प्रकट किया कि उन्होंने फर्जी मतदान करने वाली लड़की को मतदान नहीं करने दिया। मतदान का कार्य पुनः शुरू हो गया।

4 प्रभाव और प्रतिक्रिया—पुलिस तो वहाँ पहले ही भारी तादाद में जमा हो चुकी थी, थोड़ी देर में ही वहाँ बड़े-बड़े नेताओं की जीपें आने लगीं। मतदान केन्द्र के बाहर और आस-पास नेता ही नेता एकत्रित हो गये। दोनों पक्षों के नेता अपने-अपने कार्यकर्त्ताओं को छुड़ाने का प्रयास कर रहे थे। इसके अतिरिक्त एक पक्ष के नेता उस लड़की को घर से गिरफ्तार करने की माँग कर रहे थे तो दूसरे पक्ष के नेता इस माँग का विरोध कर रहे थे। अखबारों के संवाददाता नेताओं की बातचीत को नोट कर रहे थे और तस्वीरें खींच रहे थे। आखिर दोनों पक्षों में समझौता हो गया। लड़की को गिरफ्तार करने की माँग वापस ले ली गई। मजिस्ट्रेट ने कार्यकर्त्ताओं की जमानतें लेकर उन्हें हिरासत से मुक्त कर दिया। बड़े नेता चले गये और मतदान शान्तिपूर्वक होने लगा।

5. उपसंहार—घर-घर और गली-गली में इस घटना की चर्चा हो रही थी। कोई कहता था, उस लड़की के घर वालों ने फर्जी मतदान कराने का एक हजार रुपया लिया था और कोई कहता था सौ रुपये ही लिए थे। जितने मुँह उतनी बात। मैं निश्चित रूप से तो नहीं कह सकता कि रामस्वरूप के परिवार वालों को इस घटना से कितनी आत्म-ग्लानि हुई होगी किन्तु उस घटना के बाद कई दिनों तक उस परिवार का कोई भी सदस्य घर से बाहर दिखाई नहीं दिया, हो सकता है वे सब तीर्थ-यात्रा करने चले गये हैं।

□□□

विद्यालय का वार्षिकोत्सव | 21

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2 उत्सव की तैयारी
3. उत्सव का आयोजन—मुख्य अतिथि का स्वागत–सांस्कृतिक कार्यक्रम–वार्षिक रिपोर्ट–पुरस्कार वितरण–मुख्य अतिथि का आशीर्वाद–विज्ञान प्रदर्शनी का उद्घाटन–जलपान कार्यक्रम
4. उपसंहार

1 *प्रस्तावना—शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है।* कक्षा के कमरों में विभिन्न विषयों की शिक्षा देने के साथ साथ विद्यालयों में अनेक ऐसे कार्यक्रम और प्रवृत्तियों का संचालन भी होता है जिनसे छात्रों के बौद्धिक विकास के साथ-साथ उनका शारीरिक, चारित्रिक और सामाजिक विकास भी होना है। शारीरिक विकास के लिए खेल-कूद, पी टी, जिमनास्टिक तथा अन्य कार्यक्रमों का आयोजन होता है और चारित्रिक तथा सामाजिक गुणों के विकास के लिए बालचर, एन. सी सी, रेडक्रास, समाज-सेवा, भ्रमण तथा अनेक प्रकार के उत्सवों एव समारोहों का आयोजन किया जाता है। समारोहों और उत्सवों में प्रमुख उत्सव वार्षिकोत्सव होता है जिसमें विद्यालय के सभी छात्र भाग लेते हैं। यह उत्सव प्रतिवर्ष जनवरी माह में आयोजित होता है। इसके आयोजन में छात्र अत्यन्त उत्साह से भाग लेते हैं। जैसी लगन और उत्साह वे इस उत्साह के आयोजन में प्रदर्शित करते हैं, वैसे उत्साह अपने पारिवारिक उत्सवों में भी नहीं दिखाते। अनेक दृष्टियों से यह उत्सव उनके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। हमारे विद्यालय में भी प्रतिवर्ष *वार्षिकोत्सव मनाया जाता है। पिछले वर्ष मनाया गया वार्षिकोत्सव* विद्यालय के इतिहास में सर्वश्रेष्ठ रहा था। ऐसी मान्यता विद्यालय के छात्र, अध्यापक तथा सरक्षक सभी ने व्यक्त की थी।

2 उत्सव की तैयारी—दिसम्बर का महीना जैसे ही समाप्त होने लगा, विद्यालय के छात्रों ने अध्यापकों तथा प्रधानाध्यापक जी से पूछना प्रारम्भ कर दिया कि इस वर्ष वार्षिकोत्सव कब मनाया जायगा। सभी छात्र उत्सव की तैयारी में जाने को आतुर होने लगे थे। सभी के दिल में उमंग थी कि इस उत्सव में कुछ

महत्त्वपूर्ण कार्य करने का श्रेय प्राप्त करें। एक जनवरी को नये वर्ष का बधाई-सन्देश देते हुए प्रधानाध्यापक जी ने प्रार्थना सभा में घोषणा की कि इस वर्ष विद्यालय का वार्षिकोत्सव इक्कीस जनवरी को मनाया जायेगा। इस घोषणा का सभी छात्रों ने हर्ष के साथ तालियाँ बजाकर स्वागत किया। उसी दिन अध्यापकों की एक मीटिंग हुई और विभिन्न कार्यों की तैयारी के लिए समितियों का गठन हो गया। दूसरे दिन ही उत्सव की तैयारी प्रारम्भ हो गई। समितियों ने छात्रों की रुचि और योग्यता के अनुसार उनमें काम बाँट दिया और सब लोग उत्सव की तैयारी में जुट गये। प्रधानाध्यापक जी ने दो दिन बाद ही छात्रों को सूचित किया कि इस बार वार्षिकोत्सव में मुख्य अतिथि के रूप में शिक्षा-मन्त्री महोदय पधारेंगे। इसलिए उत्सव की तैयारी में किसी प्रकार की भी कमी नहीं रहनी चाहिए। प्रधानाध्यापक जी की इस घोषणा का कुछ ऐसा जादू हुआ कि अध्यापकों तथा छात्रों में उत्सव की तैयारी करने की होड़ लग गई। विद्यालय-समय के उपरान्त शाम तक और कभी-कभी तो रात तक भी छात्र तथा अध्यापक तैयारी में जुटे रहते थे। मेरा चयन सास्कृतिक कार्यक्रम में किया गया था। हम सभी मन लगाकर अपने कार्यक्रमों की तैयारी करते रहे। विद्यालय-भवन की सफाई हुई, सजावट की तैयारी हुई, रंगमंच बना, निमन्त्रण-पत्र वितरित किये गये और तैयारी करते-करते ही 21 जनवरी का दिन आ गया। उस दिन विद्यालय का तोरण-द्वार, शाला का प्रांगण, प्रधानाध्यापक-कक्ष और रंगमंच इस प्रकार सजाये गये कि लगता था किसी राजा के घर उसकी कन्या का विवाह हो और बरात आने वाली हो। इस सारी सजावट की एक विशेष बात यह थी कि सजावट का सारा कार्य अध्यापकों के मार्ग दर्शन में छात्रों ने ही किया था। किसी बाहर के व्यक्ति से कोई सहायता नहीं ली गई थी। अपने कार्य को देखकर सभी लोग आश्वस्त और प्रसन्न थे। सब लोग अपनी तैयारी को अन्तिम रूप दे रहे थे। घड़ी की सुई भी घूम रही थी।

3. उत्सव का आयोजन—शाम के चार बजे और पी. टी. आई. जी की विशिल की आवाज प्रांगण में गूँज उठी। सब छात्र इधर-उधर से दौड़-दौड़ कर आये और प्रांगण में लाइन बनाकर खड़े हो गये। पी. टी. आई. जी ने आवश्यक निर्देश दिये और सब छात्र अपने-अपने स्थानों पर बैठ गये। लाउडस्पीकर पर देश-भक्ति के गानों की आवाज गूँज रही थी। प्रधानाध्यापक जी तथा अन्य अध्यापकों के कोटों पर बैज लगे हुए थे और वे व्यवस्था में इधर-उधर आते-जाते बड़े आकर्षक लग रहे थे। द्वार पर एक ओर एन. सी. सी. के छात्र फौजी वेश-भूषा में सजे खड़े थे और दूसरी ओर स्काउट्स का दल खड़ा था। धीरे-धीरे संरक्षक तथा अन्य मेहमान आने लगे। देखते-देखते शाला का प्रांगण खचाखच भर गया। प्रधानाध्यापक जी, छात्र-संसद के प्रधानमंत्री तथा स्वागत-समिति के सदस्य द्वार पर ही खड़े होकर मुख्य अतिथि जी की प्रतीक्षा कर रहे थे। सभी की निगाह द्वार की

ओर ही लगी हुई थी। ठीक साढ़े चार बजे मंत्री महोदय पधारे। कार से उतरते ही प्रधानाध्यापक जी तथा अन्य लोगों ने उनका हार्दिक स्वागत किया। द्वार में प्रवेश करते ही एन सी सी के जवानों तथा स्काउट्स ने उन्हें सलामी दी। धीरे-धीरे चलते हुए वे मंच पर पहुँचे और अपना स्थान ग्रहण किया। अपने स्थान पर बैठकर जब उन्होंने सारी सजावट को देखा, तो देखते ही रह गये। इसी बीच रंगमंच से वाद्य यंत्रों की आवाज आने लगी। धीरे-धीरे पर्दा खुला और सरस्वती-वन्दना प्रारम्भ हुई। लय, ताल, सुर और अभिनय की दृष्टि से वन्दना का कार्यक्रम इतना अच्छा जमा कि दर्शक मुग्ध हो गये। वातावरण में पूर्ण निस्तब्धता और शान्त भाव व्याप्त हो गया। वन्दना समाप्त होते ही दर्शकों ने करतल ध्वनि से अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। इसके पश्चात् प्रधानाध्यापक जी ने अपना स्वागत-भाषण दिया जिसमें उन्होंने मुख्य अतिथि सहित सभी आगुन्तक अतिथियों के विद्यालय में पधारने पर विद्यालय परिवार की ओर से स्वागत किया।

स्वागत-भाषण के पश्चात् अन्य कार्यक्रम प्रारम्भ हुए। पहले समूह गान हुआ उसके पश्चात् एक एकाभिनय का कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। ये दोनों ही कार्यक्रम बहुत अच्छे जमे। इसके पश्चात् प्रधानाध्यापक जी ने विद्यालय की वार्षिक रिपोर्ट पढ़कर सुनाई। रिपोर्ट में जब विद्यालय के श्रेष्ठ परीक्षा-परिणाम खेल कूद में विशेष उपलब्धियों का उल्लेख किया, तो उपस्थित सभी लोगों ने जोर-जोर से तालियाँ बजाकर विद्यालय-परिवार को अपनी बधाई दी। विद्यालय के अध्यापक तथा छात्र अपने आपको गौरवान्वित महसूस करने लगे। रिपोर्ट समाप्त होने पर पुन सब का ध्यान रंगमंच की ओर आकृष्ट हुआ। छात्रों ने एक सामूहिक लोक नृत्य प्रस्तुत किया। कलाकारों का मेकअप, वेश-भूषा और अंग-संचलन तथा हाव भाव इतने स्वाभाविक और आकर्षक थे कि दर्शक झूम उठे। राजस्थानी लोकगीत के भाव भी इतने प्रभावशाली थे कि श्रोताओं पर उसका प्रभाव दर्शनीय था। नृत्य की समाप्ति पर विद्यालय का प्रांगण काफी देर तक तालियों की आवाज से गूँजता रहा। इसके पश्चात् पुरस्कार वितरण का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। माइक पर पुरस्कार प्राप्त करने वाले छात्रों के नामों की घोषणा हुई, उनकी उपलब्धियों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया। छात्र मंच के पास गये और मुख्य अतिथि महोदय ने उन्हें हाथ मिलाकर बधाई दी तथा पुरस्कार प्रदान किये। पुरस्कार प्राप्तकर्त्ताओं ने माननीय अतिथि महोदय का सिर झुकाकर अभिवादन किया और फिर गर्व से अपने स्थान की ओर लौटे। प्रत्येक पुरस्कार पर फोटोग्राफर फोटो खींच रहे थे और दर्शक तालियाँ बजाकर पुरस्कार प्राप्तकर्त्ताओं का अभिनन्दन कर रहे थे।

पुरस्कार-वितरण का कार्य सम्पन्न होने के पश्चात् मुख्य अतिथि महोदय ने आशीर्वाद प्रदान किया। अपने आशीर्वाद भाषण में उन्होंने हमारे विद्यालय

और विद्यालय के कार्यक्रमों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। उन्होंने इस वार्षिकोत्सव आयोजन की प्रशंसा करते हुए यहाँ तक कह डाला कि ऐसा सुन्दर और व्यवस्थित आयोजन उन्होंने राजस्थान के किसी भी विद्यालय में नहीं देखा। परीक्षा-परिणाम, अन्य प्रवृत्तियाँ तथा अनुशासन की दृष्टि से यह विद्यालय राजस्थान में सर्वश्रेष्ठ विद्यालय है। इसके लिए उन्होंने विद्यालय के प्रधानाध्यापक, अध्यापक समुदाय तथा छात्रों को अपनी ओर से बधाई दी। उन्होंने अपने भाषण में अध्यापकों को छात्रों का विकास करने तथा उन्हें सही दिशा में आगे बढ़ने की प्रेरणा देने का निर्देश दिया और छात्रों से अनुशासित रहकर चरित्र-निर्माण तथा जीवन-निर्माण के कार्यों में लगे रहने का सन्देश दिया। आशीर्वाद भाषण के पश्चात् प्रधानाध्यापक जी ने अपना धन्यवाद-भाषण दिया, जिसमें उन्होंने मुख्य अतिथि सहित सभी आमन्त्रित अतिथियों के प्रति अपना आभार व्यक्त किया। इसके साथ ही उन्होंने विद्यालय के अध्यापकों तथा छात्रों को भी धन्यवाद दिया जिनके कठोर श्रम के कारण यह उत्सव सफल हुआ। उन्होंने अपने भाषण में मंत्री महोदय को यह आश्वासन भी दिया कि उनके निर्देशों का पालन करते हुए वे विद्यालय के छात्रों के विकास का कार्य पूरी, लगन, निष्ठा और परिश्रम से करते रहेंगे। धन्यवाद-भाषण के पश्चात् राष्ट्रगान हुआ और उसके साथ ही वार्षिकोत्सव का यह कार्यक्रम समाप्त हो गया। मंत्री महोदय अपने स्थान से उठे। उन्हें प्रधानाध्यापक जी विज्ञान-प्रयोगशाला में ले गये, जहाँ उन्होंने छात्रों के द्वारा लगायी गई विज्ञान प्रदर्शनी का उद्घाटन किया और प्रदर्शनी को देखा। प्रदर्शनी से भी वे बहुत प्रभावित हुए। इसके पश्चात् जल-पान का आयोजन हुआ। जलपान के पश्चात् मुख्य अतिथि महोदय सबको बधाई और धन्यवाद देकर विदा हो गये। सभी लोग प्रसन्न और सन्तुष्ट थे और एक दूसरे को बधाई दे रहे थे। सभी लोग अपनी बातचीत में यही विचार व्यक्त कर रहे थे कि ऐसा वार्षिकोत्सव इस विद्यालय में पहले कभी नहीं हुआ।

4. उपसंहार—किसी कार्य की सफलता कार्यकर्ताओं की लगन, उत्साह और परिश्रम पर निर्भर करती है। जब सब लोग संगठित होकर लगन और उत्साह से किसी कार्य में जुट जाते हैं तो सफलता निश्चित रूप से प्राप्त होती है। गत वर्ष हमारे विद्यालय के वार्षिकोत्सव में इस सत्य का हमने प्रत्यक्ष दर्शन किया। दूसरे दिन प्रधानाध्यापक जी ने प्रार्थना सभा में अपने भाषण में भी यही बात दोहराई। वास्तव में विद्यालय केवल किताबी ज्ञान प्राप्त करने का ही स्थान नहीं है, बल्कि हमारे भावी सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन की तैयारी का भी स्थान है। विद्यालय में आयोजित होने वाले समारोह और उत्साह हमें इसी तैयारी के अवसर उपलब्ध कराते हैं। हमें पूर्ण उत्साह से इनमें भाग लेकर इनका लाभ उठाना चाहिए।

□□□

एक भीषण अग्निकांड | 22

निबन्ध की रूप रेखा

1 प्रस्तावना
2 अग्निकाण्ड की सूचना प्राप्त होना
3 घटनास्थल का दृश्य
4 अग्नि-शमन के उपाय
5. अग्नि-शमन के बाद का दृश्य
6 उपसंहार

1 प्रस्तावना—होनहार प्रबल होता है। जीवन मे जब जो घटना घटित होनी होती है वह होकर ही रहती है। मनुष्य सदा अच्छी ही कल्पना करता रहता है, किन्तु अनेक बार उसकी कल्पना और इच्छा के विपरीत ऐसी घटनाए घट जाती हैं जो उसके जीवन का स्वरूप ही बदल देती हैं। ऐसी घटनाओं के लिए वह स्वय जिम्मेदार नही होता, किन्तु फिर भी अनायास ही ऐसी घटनाए घट जाती हैं। इससे होनहार की प्रबलता सिद्ध होती है। आज हम पूर्ण सुखी, स्वस्थ और प्रसन्न हैं किन्तु, कल इस स्थिति मे क्या और कैसा परिवर्तन हो जायेगा, इसकी कोई कल्पना भी नही कर सकता। हम अपने नगर, गाँव अथवा पडौस मे ऐसी घटनाओं को यदा-कदा प्रत्यक्ष देख सकते हैं। जिन घरो मे हँसी के कहकहे गूँजते थे, उनमे रुदन और चीत्कार की आवाजें सुनाई पडने लग जाती हैं। जो कल तक धनाढ्य व्यक्ति माना जाता था, वह आज दाने-दाने का मोहताज दिखाई देता है। ऐसी ही एक घटना पिछले वर्ष मेरे गाँव मे घटित हुई थी, जब एक भीषण अग्नि-काण्ड ने अनेक परिवारो को तबाह कर दिया था।

2 सूचना प्राप्त होना—मार्च का महीना चल रहा था। मेरी बोर्ड की परीक्षाए चल रही थीं। 28 मार्च के दिन शाम को करीब आठ बजे मैं घर पर अपने कमरे मे बैठा हुआ परीक्षा की तैयारी कर रहा था। दूसरे दिन सुबह गणित की परीक्षा थी, इसलिए मैं दत्तचित्त होकर गणित के प्रश्नो को हल कर रहा था। एकाएक मैंने घर के बाहर भगदड और शोर की आवाज सुनी। मेरा ध्यान भग हुआ। मैं कान देकर आवाज को सुनने और समझने का प्रयत्न करने लगा। दूसरे ही क्षण मेरी समझ मे आ गया। गाँव के किसी मौहल्ले मे आग लग गई थी और

गाँव के लोग घटनास्थल की ओर भागे जा रहे थे। मैं तत्काल उठा और सीधा मकान की छत पर गया। मेरे परिवार के अन्य सदस्य पहले से ही छत पर खड़े अग्निकाण्ड की ओर देख रहे थे। मैंने देखा–गाँव के दूसरे किनारे महाजनों के मौहल्ले में आग लगी हुई थी। सारी परिस्थिति समझ में आते ही मैं घटनास्थल की ओर दौड़ पड़ा। मेरी माताजी ने मुझे रोका और कहा कि कल मेरी परीक्षा है, इसलिए मैं न जाऊँ, किन्तु मैं रुका नहीं और तेजी से दौड़ता हुआ घटनास्थल के पास जा पहुँचा।

3 घटनास्थल का दृश्य—मैंने देखा–मेरे ही एक मित्र सुरेश के घर में आग लगी हुई थी। उसका आधा मकान पक्का था और आधा कच्चा। उसके कच्चे मकानों में आग लग रही थी और आग की लपटें हवा के झोंकों से इधर-उधर फैल रही थी। आस-पास बहुत से कच्चे मकान और भी थे, जिनमें से पास वाले अन्य मकान भी आग की लपेट में आ गये थे। आग की लपटें पक्के मकान की ओर भी बढ़ रही थी जिससे मकान का सामान और दरवाजे जलने लगे थे। मकान में फँसे लोग अपने जीवन की रक्षा के लिए हाहाकार कर रहे थे। घटनास्थल पर आग की लपटों से तीव्र प्रकाश फैला हुआ था और चारों ओर सैंकड़ों लोग खड़े थे। सब लोग किंकर्त्तव्य विमूढ होकर यह विनाश लीला देख रहे थे। किसी की समझ में ही नहीं आ रहा था कि इस आग पर कैसे काबू पाया जाये और मकान में फँसे लोगों को बाहर कैसे निकाला जाये। उधर आग का यह हाल था कि तीव्र हवा के झोंकों से यह प्रचण्ड होती चली जा रही थी और आस-पास के क्षेत्रों की ओर भी लपेटती जा रही थी। उस दृश्य को देखकर मेरा हृदय काँप उठा। एक क्षण के लिए मुझे ऐसा लगा कि इस आग पर काबू पाना असम्भव है। यह सर्वनाश करके ही शान्त होगी। आँखों के सामने धू-धू करके जलती हुई आग का दृश्य और चारों ओर चीख-पुकार तथा लोगों की आवाजों का कानों के पर्दे फाड़ देने वाला शोर। मेरे तो हाथ-पाँव फूल गये, लेकिन दूसरे ही क्षण मेरे दिमाग में एक विचार कौंधा। मैंने अनेक बार सुना था और पढ़ा भी था कि विपत्ति में धैर्य और साहस नहीं खोना चाहिए। धैर्य और साहस के बल से मनुष्य बड़ी से बड़ी विपत्ति को टालने में भी सफल हो जाता है। मुझे इस विचार से बल मिला और मैं आग बुझाने के कार्य में सहयोग करने का उपाय सोचने लगा।

4 अग्नि शमन के उपाय—तभी मैंने देखा कि बहुत से लोग बाल्टियों और मटकों से आग पर पानी उडेल रहे थे। लेकिन आश्चर्य ! पानी गिरते ही आग इस तरह भड़कती थी जैसे उस पर पानी न गिरकर घी पड़ा हो। मैंने निश्चय किया कि मैं आग पर मिट्टी डालूँगा। इस निश्चय के साथ ही मैं अपने स्थान से भागा। अपनी लूंगी खोलकर रास्ते में पड़ी मिट्टी भरी और आग के पास जाकर उसे उडेल दिया। जिस जगह मिट्टी डाली थी, वहाँ आग थोड़ी शान्त हो गई। मुझे मिट्टी

डालते हुए देखकर अन्य लोग भी ऐसा ही करने लगे। जो लोग पानी डाल रहे थे, वे पानी डालते रहे और बाकी उपस्थित सभी लोग मिट्टी डालने के काम मे लग गये। जिसे जो साधन मिला, उसी से मिट्टी डालते रहे। थोडी सी आग शान्त होते ही कुछ लोग साहस करके जलते हुए पक्के मकान मे घुस गए और वहाँ फँसे लोगों को बाहर लाये। कुल 6 प्राणियो को बाहर निकाला जो जगह-जगह मे भुलस गय थे और लाभग अचेत से ही हो गय थे। उनको बाहर निकालने वाले भी जगह-जगह से भुलस गये। उन सब को कुछ लोग सुरक्षित स्थान पर ले गये और उनकी चिकित्सा शुरू कर दी। लगातार एक घटे तक पानी और मिट्टी की वर्षा करते रहने के बाद आग पर काबू पाया जा सका। आग की लपटो के शान्त होते ही वहाँ घोर अन्धकार व्याप्त हो गया। लोग अपने घरो की ओर लपके और लालटेनें लेकर आये (हमार गाव मे अभी बिजली नही पहुँची है) लालटेनों के प्रकाश मे अग्नि-पीडितो से मिले और उनको सान्त्वना देने लगे। जिनके मकान पूरी तरह आग मे स्वाहा हो गये थे उन्हे कुछ लोग अपने घरो पर ले गये। अन्य लोग धीरे धीरे अपने अपने घरो की ओर जाने लगे। वह अधियारी काली रात कुछ परिवारो के लिए काल रात्रि के रूप मे ही अवतरित हुई थी। रात्रि का अधकार गहराता जा रहा था, किन्तु लोग स्थान-स्थान पर इकट्ठे होकर कुछ देर पहले घटी घटना की चर्चाएँ कर रहे थे। मुझे दूसरे दिन परीक्षा देनी थी, इसलिए मैं जल्दी ही चला गया। बहुत देर बाद मुझे नीद आई। सुबह मैंने सुना कि उस गाँव मे कोई नही सोया। कुछ झुलसे हुओं की सेवा-सुश्रूषा मे लगे रहे और कुछ पीडितो को सान्त्वना देते रहे।

5 **अग्नि शमन के बाद के दृश्य**—दूसरे दिन प्रात काल उठा तो वही अग्नि-काण्ड की चर्चाएँ सुनी। परीक्षा भवन मे भी लोग इसी विषय पर चर्चाएँ कर रहे थे। परीक्षा समाप्त होते ही हम बहुत से लडके सीधे घटनास्थल पर पहुँचे। वहाँ काफी लोग इकट्ठे थे। कुल सात कच्चे मकान पूरी तरह जल गये थे। उनमे रखा सामान राख की ढेरी बन गया था। जगह-जगह अधजली लकडियो के टुकडे पडे थे। बाकी सब राख और कोयले ही थे। नगी छतो के, काली पडी दीवारो के वे कच्चे मकान मरघट का सा दृश्य उपस्थित कर रहे थे। सुरेश के कच्चे मकान तो राख की ढेरी बन ही गये थे, उसका पक्का मकान भी धुँआ और आग की लपटो से काला पड गया था। मकान के दरवाजे, खिडकियाँ और जलने योग्य सभी सामान जला पडा था। लोहे के बक्स यद्यपि नही जले थे, किन्तु उनके भीतर के कपडे और अन्य सामान जलकर राख हो गये थे। सुरेश का बाप और चाचा वही बैठे-बैठे विलाप कर रहे थे। उनके परिवार के अन्य सदस्य इलाज के लिए अस्पताल मे भर्ती करा दिये गये थे। सुरेश का पिता सेठ कजोडमल रो रोकर कह रहा था कि उसके पचास हजार रुपयो के नोट जल गये और करीब सत्तर हजार की उधार के खाते-बही जलकर राख हो गय हैं। अब वह क्या करेगा? उसे पैसा

श्रौर ब्याज कौन देगा ? कल तक वह लखपति था और आज कंगाल बन गया। सेठ कजोड़मल के अतिरिक्त तेरह परिवारो पर इस अग्नि-काड का प्रभाव पड़ा था। उनके पास शरीर पर पहने हुए कपड़ो के अतिरिक्त घर मे कुछ भी नही बचा था। अन्य सामान के साथ घर मे रखा अनाज भी अग्नि की भेंट चढ गया था। वे सब पास के ही एक नीम के पेड की छाया मे बैठे विलाप कर रहे थे। उनके चेहरे इतने उदास थे और मुखाकृति इतनी दयनीय थी कि देखी नही जाती थी। कभी वे ऊपर आकाश की ओर देखते, कभी अपने जले मकानो की ओर और कभी अपनी ओर देखकर रो पड़ते। उनको चारों ओर से घेरे गाँव के बहुत से बुजुर्ग और समझदार लोग बैठे थे, जो उन्हे सान्त्वना दे रहे थे, किन्तु वे रह-रह कर फूट पड़ते थे। कुछ लोग उनके पास भोजन सामग्री और पहनने के कपडे लिए खडे थे, किन्तु वे 'भूख नही है' कहकर टाल रहे थे और बहुत दु खी हो रहे थे। आस-पास का सारा वातावरण शोकमय बना बना हुआ था। अग्नि-पीडितो की इस दयनीय दशा को देख-देख कर देखने वालो की भी आँखो मे आँसू आ रहे थे। जले हुए मकानों पर पडा हुआ पानी और बालू रेत का ढेर उस दृश्य को और भी हृदय द्रावक बना रहा था। एक दूसरे पेड के नीचे इन अग्नि-पीडितो की स्त्रियाँ और बच्चे बैठे बिलख रहे थे गाँव की स्त्रियाँ झु ड बना-बनाकर जली हुई मकानो को देखने आ रही थी और उन पीड़ित स्त्रियो से आग लगने के कारण की तथा आग लगने के समय की परिस्थितियों की जानकारी कर रही थी। रोती-कलपती स्त्रियो को वे सान्त्वना देती और विधि के विधान की चर्चा करती चली जाती थी। मैं वहाँ काफी देर खडा रहा। फिर भारी मन से घर की ओर चल पडा। मैं अपने मित्र सुरेश से मिलना चाहता था किन्तु वह तो अस्पताल मे भर्ती था। दूसरे दिन शहर जाकर उससे अस्पताल में ही मिलने का निश्चय करके मैं घर चला गया।

6 उपसंहार—इस भीषण अग्निकाड की सूचना आस-पास के गावों मे भी पहुँची और तीसरे दिन अखबार में भी समाचार छपे। करीब तीन लाख के नुकसान का अनुमान लगाया गया। आस-पास के गाँवो के लोगों ने भी आकर घटनास्थल को देखा। सब लोग होनहार की प्रबलता और ईश्वर की लीला की विचित्रता की ही बातें करते चले गये। मैं भी सोचने लगा—कैसी विचित्र बात है! कल शाम तक यहाँ कैसी चहल-पहल थी! कैसी हँसी-खुशी का वातावरण था! और आज? आज यहाँ एकदम सुनसान और वीरानी है। क्या किसी ने इस होनहार की कल्पना भी की थी? फिर यह सब यकायक कैसे हो गया? यही है ससार की असारता, यही है परिवर्तनशीलता और यही है जीवन की क्षण-भंगुरता।

□□□

मेले में जब अचानक वर्षा होने लगी | 23

निबन्ध की रूप-रेखा

1. प्रस्तावना
2. मेले की तैयारी
3. मेले के विभिन्न दृश्य
4. अचानक वर्षा आ जाना
5. वर्षा का प्रभाव
6. उपसंहार

1. प्रस्तावना—वर्षा, आंधी और तूफान, ये सब प्रकृति के स्वभाविक रूप हैं। वायुमडल मे प्रकृति के विभिन्न तत्वो के योग और सयोग के फलस्वरूप ही वर्षा, आंधी और तूफान आते हैं। इन रूपो मे प्रकृति न हम पर कृपा करती है और न प्रकोप, क्योकि कृपा और प्रकोप तो चेतन मन के गुण हैं प्रकृति तो जड है, उससे चेतनता की आशा करना ही भूल है। हम प्रकृति के किसी रूप से कभी लाभान्वित होते हैं तो उसको कृपा मान लेते हैं और हानि उठाने पर उसका प्रकोप मान लेते हैं। हम अपने हितो की दृष्टि से ही प्रकृति पर कृपा या प्रकोप का आरोप लगा देते हैं, जबकि वास्तविकता इससे भिन्न है। प्रकृति पूर्णतया स्वच्छन्द और स्वतन्त्र है। वह निर्लिप्त भी है। वर्षा से किसी को हानि होती है अथवा लाभ, इससे उसे कोई सरोकार नही होता। वर्षा कल कहाँ कितनी हो इस प्रकार का कोई नियन्त्रण वह स्वीकार नहीं करती। लोग बूंद-बूंद पानी के लिए तरसते रहते हैं और वर्षा बिल्कुल नही होती। कभी लोग भारी वर्षा से त्राहि-त्राहि करने लग जाते हैं, अपार जन-धन की हानि हो जाती है किंतु वर्षा थमने का नाम नही लेती। अत यह मानना पडता है कि प्रकृति स्वतन्त्र और स्वच्छन्द है। उस पर किसी का आज तक न तो नियन्त्रण स्थापित हो सका है और न कभी होगा। वह अजेय ही बनी रहेगी। वर्षा भीड-भाड, चहल-पहल और नाच-गान से भरपूर शीतला माता के मेले मे अचानक तेज वर्षा होने ... और इतनी वर्षा हुई कि मेले का सारा रंग ही बदल गया।

2. मेले की तैयारी—चैत्र मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी को जयपुर से करीब 35 किलोमीटर दूर चाकसू मे प्रतिवर्ष शीतला माता का मेला लगता है। आस-पास

के गाँवों, कस्बों और नगरों के लोग भारी संख्या में इस मेले में शामिल होते हैं। जयपुर से भी हजारों लोग इस मेले में प्रतिवर्ष जाते हैं। अष्टमी के दिन वहाँ दो-तीन लाख श्रद्धालु स्त्री-पुरुष माता के दर्शन करते हैं और पूजा करते हैं। मैंने दो-तीन बार पहले भी यह मेला देखने का विचार किया था किन्तु पिताजी ने स्वीकृति नहीं दी। इस वर्ष कुछ संयोग ऐसा हुआ कि मेरे पड़ोस के ही कुछ लोग मेला देखने को तैयार हो गये। उनके साथ जाने के लिए मैंने पिताजी से पूछा तो उन्होंने कुछ जरूरी हिदायतों के साथ मुझे जाने की स्वीकृति दे दी। मैं खूब प्रसन्न हुआ और मेले की तैयारी में जुट गया। सप्तमी की रात को बस से जाने का कार्यक्रम निश्चित हुआ। मैंने एक थैले में एक जोड़ी कपड़े, पूजा का सामान और नाश्ते के लिए कुछ मिठाई व नमकीन रखी और अपने पड़ौसियों के साथ रात को करीब दस बजे घर से चल पड़ा। रोडवेज ने मेले के लिए विशेष बसों की व्यवस्था की थी। हर दस-पन्द्रह मिनट बाद खाली बस आकर स्टैण्ड पर खड़ी हो जाती थी किन्तु बस के आते ही लोग उसमें चढ़ने के लिए टूट पड़ते थे। खूब धक्का-मुक्की होती और देखते-देखते बस खचाखच भर जाती और रवाना हो जाती। हमारे सामने तीन बसें भर कर चली गईं किन्तु भीड़ तभी भी उतनी ही बनी हुई थी। आखिर हमने भी धक्का-मुक्की से ही चढ़ने का निश्चय किया और खाली बस के आकर रुकते ही पिल पड़े। पसीने में तर हो गये, एक साथी के कपड़े भी फट गये किंतु हम बस में चढ़ने में सफल हो गये। दस मिनट बाद बस रवाना हो गई। हवा लगी तो पसीने सूखे। अब मेरा मन खूब प्रसन्न था। वर्षों की साधना आज पूरी हो रही थी। रात्रि को करीब एक बजे हम चाकसू पहुँच गये।

3. मेले के विभिन्न दृश्य—बस से उतर कर जब हम मेले के मैदान की ओर कुछ दूर आगे बढ़े तो हमें मार्ग के दोनों ओर खुले मैदान में दूर-दूर तक बैल गाड़ियाँ खुली हुई दिखाई दीं। इन गाड़ियों में आस-पास के ग्रामीण स्त्री-पुरुष मेले में आये थे और इस समय गाड़ियों को खोलकर विश्राम कर रहे थे। इधर-उधर से और भी गाड़ियाँ आ रही थीं जिनमें बैठे स्त्री-पुरुष गाते-बजाते आ रहे थे। आधी रात का समय था लेकिन दूर-दूर तक गैस की लालटेनों का प्रकाश फैल रहा था। अपनी-अपनी गाड़ियों के पास स्त्री-पुरुष बैठे लोक गीत गा रहे थे। मुझे यह दृश्य बहुत अच्छा लगा। सोच कर तो यह गया था कि रात्रि में कहीं उपयुक्त स्थान ढूँढ कर थोड़ी देर सो लूँ, किन्तु वहाँ की चहल-पहल और नाच-गान की मस्ती का वातावरण देख कर नींद न जाने कहाँ गायब हो गई। हम भी मस्त होकर उन ग्रामीणों के नाच-गान देखते हुए इधर उधर चक्कर लगाने लगे। एक स्थान पर लोकगीतों का कार्यक्रम बहुत अच्छा जम रहा था। नव-युवकों का दल एक घेरा डाल कर बैठा था। अलगोझे बज रहे थे, चंग तथा मजीरों की मीठी धुन पर दो युवक मस्त होकर नाच कर रहे थे। घेरे के चारों ओर काफी लोग खड़े होकर वह नाच-गान का मन मोहक

दृश्य देख रह थे। हम भी वही खडे हो गए और देखने लगे। उस नृत्य मे, गायन मे और वाद्य यत्रो की मीठे स्वर मे लोक सस्कृति का सच्चा स्वरुप प्रकट हो रहा था। गायक और नर्तक इतने मतवाले हो रहे रहे थे कि उन्हे अपने शरीर की भी सुधि नही थी। हमारा मन उस कार्यक्रम म ऐसा रमा कि हम भी वहीं बैठ गये और सुबह पाँच बजे तक, जब तक वह कार्यक्रम चलता रहा, हम वही बैठे रहे।

सूर्य का प्रकाश चारा ओर फैल गया था। जहाँ तक नजर जाती थी, रग-बिरगी पोशाक पहने ग्रामीण स्त्री-पुरुषो के झुड दिखालाई पडते थे। हम लोगो ने पहल शीतला माता के दर्शन करने का निश्चय किया। शीतला का मन्दिर उस विशाल मैदान क बीच मे एक छोटी सी पहाडी पर बना हुआ है। हम भीड मे धक्के खाते हुए बडी कठिनाई से कदम-कदम आगे बढने लगे। मार्ग के दोनो ओर विभिन्न प्रकार का सामान बेचन वालो की दुकाने लगी थी, जिन पर सामान खरीदने वाले ग्रामीणो की भीड पड रही थी। किसी प्रकार चलते चलते हम पहाडी क पास पहुँच गये। मन्दिर की सीढिया पर तिल रखने को जगह नही थी। पुलिस का इन्तजाम खूब अच्छा था किन्तु दर्शनार्थियो की सख्या इतनी अधिक थी कि उन्हे भीड पर काबू पाना कठिन हो रहा था। खूब धक्कम धक्का करने के बाद हम सीढियाँ चढ सके। बडी कठिनाई से मन्दिर तक पहुँचे। माता के दर्शन किये। दूर से ही पूजा का सामान फैंक कर चढाया और वापस लौटे। पहाडी पर से जब मैदान की ओर निगाह फैलाई तो आँखे चकरा गई। पहाडी के चारो ओर जहाँ तक दृष्टि जाती थी, बैल गाडियाँ और ग्रामीण स्त्री पुरुष ही दिखाई देते थ। यह दृश्य देखत हुए हम पहाडी से नीचे उतर आये। काफी दूर आने पर हम मेले की भीड भाड से अलग हुए। वहाँ हम नित्य कम से निवृत हुए। नाश्ता किया और पुन मेले मे शामिल हो गए। उस समय सुबह के दस बजे थे। मले मे भीड प्रतिक्षण बढती ही जा रही थी। कुछ लोग माता के दर्शन करके अपनी गाडियो से लौटने भी लग थे किन्तु आने वालो की ही सख्या अधिक थी। किसी तरफ युवक अलगोझे बजाकर नाच गा रह थ तो किसी तरफ युवतियाँ एक दूसरी क गले मे बाह डाले इधर उधर चक्कर लगा रही थी। बसन्त ऋतु थी, इसलिए सब तरफ उमग, उल्लास और मौज-मस्ती का वातावरण बना हुआ था। हम लोग चक्कर लगात-लगाते थक गये तो एक वृक्ष की छाया मे बैठकर मेले का दृश्य देखने लगे।

4 **अचानक वर्षा आ जाना**—चमकीली धूप निकल रही थी। आसमान मे बादल कब घिरे, किसी को पता नहीं चला। यकायक बूँदें गिरने लगी तो सब का ध्यान आकाश की ओर गया। देखते-देखते वर्षा प्रारम्भ हो गई। चारो तरफ हल-चल मची और कुछ ही क्षण म मूसलाधार वर्षा होन लगी। चैत्र के महीने मे वर्षा होती ही नही है। इसलिए इस अप्रत्याशित वर्षा स सभी लोग विचलित हो गये। लाखो आदमी उस खुले मैदान म थे। कुछ वृक्षो का छोडकर सिर छिपाने का दूर-

दूर तक कोई स्थान नहीं था। मेले में चारों ओर भगदड़ मच गई। वर्षा उसी प्रकार होती रही। जब कहीं स्थान नहीं दिखा तो लोग झुण्ड बनाकर छाती में अपना सिर छिपा कर अपने स्थान पर बैठ गये। वर्षा का वेग कम नहीं हुआ। जिनको ध्यान आ गया वे बैलगाडियों के नीचे जा छिपे। हम सयोग से पहले से ही एक वृक्ष के नीचे थे। कुछ देर में हमारे चारों ओर इतने लोग इकट्ठे हो गये कि मैदान दिखना बन्द हो गया। पूरे आधे घंटे तक मूसलाधार वर्षा होती रही। उसके बाद रुक गई।

5. वर्षा का प्रभाव—बे मौसम की इस अप्रत्याशित वर्षा का मेले मे उपस्थित जन-समुदाय पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। जमीन पर सब जगह कीचड़ ही कीचड़ हो गया। हलवाइयों की कड़ाइयों और भट्टियों में पानी भर गया। दुकानदारों का सारा सामान भीग गया और पानी में बह गया। सबके कपड़े पानी में तर हो गये और कीचड़ में सन गये। सैंकड़ो बच्चों और बूढ़ों की वर्षा मे भीगने के कारण हालत गभीर हो गई। हंसी खुशी, नाच-गान और मौज-मस्ती का वातावरण उदासी, मायूसी और चिन्ता में बदल गया। मेले में रुकने की किसी की रुचि नहीं रही। सब लोग अपने-अपने साधनों से रवाना होने लगे। दुकानदार अपने भाग्य को कोसते हुए वर्षा में भीगा हुआ अपना बचा खुचा सामान बटोर कर बांधने लगे। वर्षा रुकते ही कुछ बैलगाडियां और भी मेले के स्थान की ओर आने लगी तथा बसों से उतर-उतर कर पैदल यात्री भी आ रहे थे किन्तु अब वहां मेला नहीं था। वर्षा से हुई बर्बादी के दृश्य ही वहां शेष बचे थे। वे भी सब कीचड़ में छप-छप करते मन्दिर की ओर चले जा रहे थे।

6. उपसंहार—हम लोग भी अपने कपड़ों को निचोड़ते हुए बस-स्टैण्ड की ओर चले जा रहे थे। बसो की प्रतीक्षा में हजारो आदमी खड़े थे। बस आकर रुकती और लोग उस पर टूट पड़ते। खूब धक्का-मुक्की हो रही थी। हमने निश्चय किया कि ऐसी धक्का-मुक्की में हम शामिल नहीं होंगे चाहे हमें शाम तक प्रतीक्षा करनी पड़े। हम दूर एक वृक्ष की छाया में बैठ गये। हर व्यक्ति की जुबान पर वर्षा से पहले जमे मेले की और फिर वर्षा से हुई बर्बादी की चर्चा थी। सब लोग अचानक बे मौसम की इस मूसलाधार वर्षा के विषय मे आश्चर्य कर रहे थे। कोई कहता था—'कलियुग चल रहा है, इसमें तो ऐसे ही काण्ड होंगे।' कोई कहता था—'दुनिया में पाप बहुत छा गया है, उसी की भगवान हमें सजा दे रहा है।' कोई कोई यह भी कहता था कि विज्ञान के नये-नये आविष्कारों के कारण ही ये सब हो रहा है। जितने मुँह उतनी बातें। मैं अपने स्थान पर बैठा यही सोच रहा था कि यह सब ईश्वर की लीला है। प्रकृति स्वच्छन्द और स्वतन्त्र है। उसे कोई नियम और मर्यादा में रहने के लिए बाध्य नहीं कर सकता।

□□□

जीवन की वह चिरस्मरणीय घटना | 24

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2 यात्रा का प्रयोजन और प्रस्थान
3 धर्मशाला से समान की चोरी हो जाना
4. घोर विपत्ति मे पड जाना
5. विपत्ति से बचने के उपाय करना
6. उपसहार

1 प्रस्तावना—लोग अकसर कहते है कि विश्वास पर दुनिया कायम है। यदि हम एक-दूसरे पर विश्वास न करें तो हमारा काम ही नही चल सकता। घर मे, समाज मे, समाज के विभिन्न क्षेत्रों मे और हमारे कार्य-स्थानो पर हमको एक दूसरे पर विश्वास करना ही पडता है। साधारण बात से लेकर अत्यन्त महत्त्व पूर्ण विषयो पर भी किसी न किसी पर विश्वास करना ही पडता है। इसका कारण यह है कि ससार के जितने कार्य हैं, वे केवल एक व्यक्ति सम्पादित नही कर सकता। उसे दूसरे आदमी की सहायता और सहयोग लेना अनिवार्य होता है। इस सहायता और सहयोग के लिए विश्वाश की आवश्यकता पडती है। कैसा ही गुप्त से गुप्त रहस्य हो, किन्तु उस गुप्त रहस्य का लाभ उठाने के लिए मनुष्य को वह रहस्य किसी न किसी के सामने प्रकट करना ही पडता है। इसके लिए उस व्यक्ति के चयन का आधार विश्वास ही होता है अत। यह सही है कि दुनिया विश्वास पर कायम है। किन्तु साथ मे यह भी सही है कि विश्वास के साथ सावधानी व सतर्कता भी बहुत आवश्यक हैं, क्योकि थोडी सी भी असावधानी मनुष्य को घोर विपत्ति मे डाल देती है। यह ज्ञान मुझे तब हुआ जब मेरी थोडी सी असावधानी न मुझ घोर विपत्ति मे डाल दिया।

2 यात्रा का प्रयोजन और प्रस्थान—मुझे कर्मचारी चयन आयोग की परीक्षा मे साक्षात्कार के लिए दिल्ली जाना था। अपनी तहसील म मैं अकेला ही साक्षात्कार के लिए चयनित हुआ था। मैंने अपने कुछ मित्रो से मेरे साथ दिल्ली चलने का अनुरोध किया। एक मित्र रामगोपाल तैयार हो गया। मै बहुत प्रसन्न हुआ।

साक्षात्कार मे सफल हो जाने का तो मुझे भरोसा नहीं था क्योंकि मैंने सुन रखा था कि वहां खूब सिफारिशें चलती है। जिसकी सिफारिश तगड़ी होती है, उसी का चयन होता है। मेरे पास भगवान के सिवा किसी की सिफारिश नहीं थी, किन्तु मुझे इस बात की प्रसन्नता थी कि इस बहाने मुझे दिल्ली देखने का मौका मिलेगा। दोनो मित्र वहां खूब घूमें-फिरेंगे। लौटते समय कुछ अच्छी चीजे भी खरीद कर लायेंगे। मन मे प्रसन्नता और उत्साह लिए दोनो मित्र निश्चित तिथि को अपने गांव से जयपुर पहुँचे और वहां से रेल में बैठ कर दिल्ली पहुँच गये। हम शाम को करीब सात बजे दिल्ली पहुँचे थे। दूसरे दिन साक्षात्कार था। उसके बाद हम तीन चार दिन और रुक कर दिल्ली की सैर करना चाहते थे। इसलिए हमने चांदनी चौक मे एक धर्मशाला मे ही रुकने का निश्चय किया क्योंकि, होटलों की तुलना में धर्मशाला का किराया बहुत कम था। एक होटल पर खाना खाया और अपने कमरे में जाकर विश्राम करने लगे।

3. सामान की चोरी हो जाना—उस धर्मशाला मे स्थान-स्थान पर यात्रियों के लिए हिदायतों के बोर्ड लगे हुए थे जिन पर लिखा था 'जेब कतरों से सावधान' 'यात्री अपने सामान की हिफाजत खुद करें' आदि। इन हिदायतों को पढकर हम दोनो मित्रों ने निश्चय किया कि कमरा खुला नहीं छोड़ना है और दिल्ली में घूमते समय पैसे पास में नहीं रखना है। दूसरे दिन सुबह तैयार होकर जब हम साक्षात्कार के लिए रवाना हुए तो हमने नाश्ता और बस के किराये के पैसे ही जेब में रखे बाकी सारा पैसा अटैची मे रख दिया। रामगोपाल धर्मशाला के मैनेजर से एक ताला मांग लाया। यद्यपि मैनेजर ने अपने स्वयं का ही ताला लगाने का हमसे आग्रह किया किन्तु हमारे पास ताला था नहीं और साक्षात्कार के लिए पहुँचने की जल्दी थी, इसलिए हमने एक मामूली सा ताला इस मान्यता से लगा दिया कि ताले तो साहूकारों के लिए होते है, चोरों के लिए तो सभी ताले समान होते है, और हम रवाना हो गये।

दोपहर को करीब दो बजे हम धर्मशाला मे लौटे। मैं मन मे बहुत प्रसन्न था क्योंकि मेरा साक्षात्कार बहुत अच्छा हुआ था और सोच रहा था कि यदि योग्यता आधार पर चयन हुआ तो मैं अवश्य चुना जाऊंगा। इन्हीं मधुर कल्पनाओं मे खोया मैं रामगोपाल के साथ ऊपर गया। हमने मार्ग मे योजना बनायी थी कि पहले भर-पेट भोजन करेंगे और उस के पश्चात् आज बिड़ला मन्दिर तथा राजघाट देखेंगे। कमरे के दरवाजे पर वही ताला लटक रहा था। राम गोपाल ने ताला खोला और हम भीतर घुसे। देखा तो हमारी दोनो अटैचियां और अन्य सामान गायब था। हम हक्के-बक्के रह गये। मेरी अटैची मे तो कीमती कपड़ो के साथ पूरे एक हजार के नोट थे। रामगोपाल के भी कपड़े और पांच सौ रुपये उसकी अटैची मे रखे थे। हम

दोनों एक-दूसरे की शक्ल देख रहे थे। कुछ क्षण तो हमारे मुँह से आवाज तक नहीं निकली। फिर मैं दौड़ता हुआ मैनेजर के पास पहुँचा। सारा किस्सा सुनकर उसने मुझे ही डांटा—"हमने आपसे पहले ही कह दिया था कि ताला अपना ही लगाओ या फिर आप में से एक आदमी को रुक जाना था। आपके नुकसान की हमारी कोई जिम्मेवारी नहीं है। हमें क्या पता, आप सामान लाये भी थे या नहीं।" कह कर वह अपनी जगह से उठकर चला गया। मैं आश्चर्य से उसकी ओर देखता रहा। कुछ देर वहीं खड़े सोचता रहा—अब क्या किया जाय ! घोर विपत्ति में पड़ गये थे हम लोग। भारी नुकसान हुआ, साथ में मूर्ख और बने।

4. घोर विपत्ति में पड़ जाना—कुछ देर बाद ऊपर कमरे में गया। रामगोपाल दीवार का सहारा लिए, सिर पर हाथ रखे उदास बैठा था। मैंने मैनेजर का जवाब उसे सुनाया, उसने एक लम्बी सांस ली। बोला कुछ भी नहीं। मैं भी उसके पास बैठ गया। कुछ देर हम दोनों ही गुमसुम बैठे रहे। उस समय हमारी स्थिति कितनी दयनीय और चिन्ताजनक हो गई थी, इसका वर्णन करना कठिन है। क्या-क्या सपने थे, कैसी-कैसी योजनाएँ थी, सब कुछ समाप्त हो गया था। पेट में जोरकी भूख लगी थी किन्तु खाने के लिए जेब में पैसे नहीं थे। दिल्ली में कोई परिचित नहीं था और बड़े शहरों में बिना परिचय के कोई बात भी नहीं करता। खोये हुए सामान के मिलने की कोई आशा नहीं थी। सामान की कीमत का ध्यान आते ही दिल भर आता था। मुझे यह भी चिन्ता हो रही थी कि हम वापस कैसे पहुँचेंगे। किराये के पैसे का इन्तजाम कैसे होगा। कुछ देर बाद मैंने देखा, रामगोपाल की आँखों में आँसू गिर रहे थे। इच्छा तो मेरी भी रोने जैसी हो रही थी किन्तु न जाने मुझ में इस विपत्ति में भी साहस कहाँ से आ गया था। मैंने उसे धैर्य बँधाया और उसे अपने साथ पुलिस स्टेशन चलने का सुझाव दिया। थोड़ी देर बाद वह स्वस्थ हुआ। उसने नल पर जाकर मुँह धोया और फिर दोनों वहाँ से खाली हाथ रवाना हुए। दरवाजे निकलने लगे तो मैनेजर की सीट पर बैठे एक लड़के ने हमें टोका, "बाबूजी ! कमरे का किराया देकर जाओ।" मेरा भीतर दबा क्रोध फूट पड़ा। मैंने गुस्से में कहा, "हम लोग कोई चोर उचक्के नहीं हैं। थाने में चोरी की रिपोर्ट दर्ज कराने जा रहे हैं। फिर अपने एक परिचित व्यक्ति के पास जायेंगे। उससे पैसे लाकर तुम्हारा किराया चुका कर फिर जायेंगे। तुम लोगों की मिली भगत से हमारा हजारों रुपयों का नुकसान हुआ है और तुम किराये के पाँच रुपयों के लिए इज्जत बिगाड़ने हो ! शर्म नहीं आती तुम्हें ?" न जाने क्यों उसने बुरा न माना और नम्रता पूर्वक बोला "अच्छा बाबूजी ! आप जब चले तब दे जाना।"

5. विपत्ति से बचने के उपाय—बाजार में आकर सब से पहले पेट की भूख शान्त करना मैंने आवश्यक समझा। हमने अपनी जेब टटोली। दो रुपये मेरी जेब से निकले और डेढ़ रुपया रामगोपाल की जेब से। इतने से पैसे में भोजन ला कर

नहीं सकते थे। हमने एक रुपये की नमकीन और एक रुपये के सादा चने लिये। बाजार में ही एक तरफ खड़े होकर हमने चने खाकर भूख शान्त की। चने खाते समय बड़ी आत्म-ग्लानि हो रही थी किन्तु भूख शान्त करने के लिए दूसरा कोई उपाय ही नहीं था। चने खाकर पानी पिया और फिर एक ठेले वाले से चाय पी। चाय पीकर हम घूमते हुए थाने पर पहुँच गये। बहार खड़े सिपाही ने हमें रोका और भीतर जाने का कारण पूछा। हमने संक्षेप में उसे सारा हाल बता दिया। न जाने क्यों उसे हमसे सहानुभूति हो गई। वह स्वयं हमें अपने साथ लेकर डी. एस. पी. के पास पहुँचा। संक्षेप वह हमारा परिचय देकर चला गया। सारा वृतान्त सुनकर वे गम्भीर होकर कुछ देर सोचते रहे और फिर उन्होंने चोरी की रिपोर्ट दर्ज कराने का आदेश दे दिया। मैंने हाथ जोड़कर एक प्रार्थना और की, "यहाँ हमारा कोई परिचित व्यक्ति नहीं है। हमारे पास पैसे भी नहीं हैं। किसी प्रकार जयपुर पहुँच जाएँ ऐसी व्यवस्था और कर दीजिए। वे कुछ क्षण सोचते रहे और फिर उन्होंने उसी सिपाही को बुलाकर हमें किसी ऐसे ट्रक में बिठा आने का आदेश दिया जो जयपुर जा रहा हो। हमने उन्हें धन्यवाद दिया और रिपोर्ट लिखाकर सिपाही के साथ चल पड़े। वह हमें पास ही एक ट्रांसपोर्ट कम्पनी में ले गया। उसने डी. एस. पी. साहब का नाम लेकर हमें जयपुर तक ट्रक में ले जाने का आदेश दिया और चला गया। जो ट्रक रवाना हो रहा था उसी ट्रक में ड्राइवर के बराबर वाली सीट पर हमें बिठा दिया गया। ड्राइवर समझ रहा था कि हम डी. एस. पी. साहब के आदमी हैं, इसलिए रास्ते में हमारी खूब आव-भगत करता रहा। जयपुर पहुँच कर मैं राम गोपाल को लेकर अपने एक रिश्तेदार के घर चला गया।

6. उपसंहार—करीब एक महीने बाद मुझे दिल्ली थाने से अपने सामन की शिनाख्त (पहचान) करने का सम्मन मिला। मैं और रामगोपाल पुनः दिल्ली गये। हमारी अटैचियाँ, कपड़े और अन्य सामान हमें मिल गया। नकदी नहीं मिली। हमने इस पर ही संतोष कर लिया। इस बार हम वहाँ पाँच दिन रुके और पूरी दिल्ली की सैर की। उस घटना को एक वर्ष से अधिक समय बीत चुका है किन्तु उसकी अब भी बराबर याद आती रहती है।

□□□

फूस की छत के नीचे बरसात की एक रात | 25

निबन्ध की रूप-रेखा

1 प्रस्तावना
2. यात्रा का प्रयोजन
3 गाँव की यात्रा
4. रात्रि में वर्षा का आ जाना—विभिन्न अनुभव
5 उपसंहार

1. प्रस्तावना—भारत गाँवो का देश है। यहाँ की लगभग अस्सी प्रतिशत जनता गाँवो मे ही रहती है। स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् यद्यपि गाँवो का खूब विकास हो गया है किन्तु फिर भी अभी गाँवों की मूल स्थिति मे कोई विशेष अन्तर नही आया है। अब भी ग्रामीण लोग जीवन की अनेक सुविधाओ से वंचित हैं। स्वभाव से भोले और सीधे होने के कारण वे अब भी धूर्त और चालाक लोगो से ठगे जाते हैं। कृषि-भूमि पर उन्हे स्वामित्व का अधिकार मिल जाने के बावजूद वे अपनी उपज का पूरा लाभ नही उठा पाते। उनकी आर्थिक स्थिति आज भी खराब ही बनी हुई है। आर्थिक स्थिति मे सुधार न होने के कारण उनका रहन-सहन और जीवन स्तर आज भी बहुत पिछड़ा हुआ है। मोटा खाना, मोटा पहनना, और फूस को छतो के नीचे कच्चे मकानो मे गुजर-बसर करना ही उनका जीवन है। रात-दिन कड़ी मेहनत करते रहने के बावजूद वे अभावों से पूर्ण जीवन बिताते है। यह, या तो दुर्भाग्य है या फिर सामाजिक व्यवस्था का दोष। जो भी हो, इसका सीधा प्रभाव उन भोले-भाले ग्रामीणो के जीवन पर ही पड़ता है।

2. यात्रा का प्रयोजन—मेरा ननिहाल एक गाँव में ही है। मेरे नानाजी भी एक किसान ही हैं। उनके पास पन्द्रह बीघा कृषि की भूमि है जिस पर वे स्वयं

खेती के काम में लेते रहते हैं। उनके पास गाय-भैंसें भी हैं। खाने-पीने के खूब ठाट हैं किन्तु उनका मकान कच्चा ही है जिस पर फूस के छप्पर की छत है। खेती में पैदावार भी खूब होती है किन्तु न जाने क्यों वे अब तक चाह कर भी पक्का मकान नहीं बना पाये हैं। मुझे वहाँ जाना और रहना बहुत अच्छा लगता है और वर्षा ऋतु में तो और भी अच्छा लगता है। खेतों की हरियाली और मिट्टी की सौंधी महक से मन प्रफुल्लित हो जाता है। एक विशेष कार्य से रक्षा बन्धन के दिन जब मेरी माता जी राखी लेकर मेरे ननिहाल में नहीं जा सकी तो मैं ही राखी लेकर अपने ननिहाल गया।

3. गाँव की यात्रा—मैं रक्षा-बन्धन के एक दिन पहले ही अपने ननिहाल (गाँव) में पहुँच गया। वहाँ सबने मेरा खूब हार्दिक स्वागत किया। मेरा सबसे छोटा मामा मेरी ही उम्र का है। मैं उसके साथ दिन भर खेतों की हरियाली का आनन्द लेता रहा। खेतों में बाजरा, ज्वार, मक्का, और उर्द-मूँग के पौधे खड़े थे। जहाँ तक दृष्टि जाती थी, हरियाली ही हरियाली नजर आती थी।। कहीं तुरई की बेलों में लम्बी तुरइयाँ लटक रही थी तो कहीं लौकी झूल रही थीं। कहीं तरबूज की बेलों में लगे छोटे-छोटे तरबूज जमीन पर लोट रहे थे। खेतों में रंग-बिरंगी पोशाकें पहने किसानों की स्त्रियाँ काम कर रही थी। कोई हरी-हरी घास का बड़ा सा गट्ठर अपने सिर पर लिये घर की ओर जा रही थी। चरवाहे गायों के झुंडों के पीछे विभिन्न प्रकार की आवाज करते हुए चल रहे थे। पिछले दिनों उस गाँव में वर्षा हो गई थी, इसलिए फसलें बड़ी हो रही थी, घास भी खूब हो गया था। किसानों के मन प्रसन्न थे और पशुओं पर रौनक आ रही थी। मनचले युवक इकट्ठे होकर मल्हार गा रहे थे। ये सारे दृश्य देख-देख कर मैं प्रसन्न हो रहा था। शाम होने पर मैं अपने मामा के साथ घर लौटा। नानाजी ने पास-पास पाँच कच्चे घर बना रखे हैं जिन पर फूस की छतें हैं। उस समय वे कच्चे घर भी मुझे बहुत अच्छे लग रहे थे। फूस की छतों पर लौकी और तुरई की बेलें फैल रही थी। आँगन में एक ओर गाएँ, बैल और भैंसें बंधी हुई थीं और दूसरी ओर एक छप्पर के नीचे घास का ढेर लगा हुआ था। बाड़े के बाहर एक ओर गोबर का ढेर लगा हुआ था। आँगन में बड़ी-बड़ी चार चारपाइयाँ बिछी हुई थी। मैं एक चारपाई पर जाकर बैठ गया। नाना और नानी जी मेरे पास ही आ गये और मुझसे घर के समाचार पूछने रहे। कुछ देर बाद ही मैंने अपने छोटे मामा के साथ बैठ कर एक ही थाली में भोजन किया।

4. रात्रि को वर्षा का आजाना—आसमान में बादल छा रहे थे। हवा बिलकुल बन्द थी, इसलिए उमस बहुत थी। खुले आँगन में ही एक चारपाई पर मेरे लिए बिस्तर लगा दिये गये। मैं कपड़े उतार कर उस पर आराम से लेट गया। गाँव में बिजली तो है नहीं, इसलिए लालटेन का मद्धिम प्रकाश मुझे बहुत अटपटा सा लग रहा था।

पास ही दूसरी चारपाइयों पर और लोग सो रहे थे। फिर आँख मींच कर नींद आने का इन्तार करने लगे। कुछ देर बाद ही आकाश से बूंदें गिरने लगीं। हम लोग विस्तर और चारपाइयाँ उठाकर घरों के भीतर चले गये। वहाँ इधर-उधर खूब सामान फैल रहा था। सामान के ऊपर ही चारपाइयां बिछादी गईं और हम सो गये। बाहर से हवा आने का कोई मार्ग ही नहीं था, इसलिए मुझे बहुत गर्मी लगी। कुछ देर वर्षा धीरे-धीरे होती रही, फिर तेज हो गई। जब वर्षा तेज हुई तो उसकी आवाज ऊपर फूस की छत पर मैंने स्पष्ट सुनली। कुछ देर में ही वह फूस की छत टपकने लगी। 'टप', 'टप' करके पानी की मोटी-मोटी बूँदें मेरे चेहरे पर गिरी। मैं बूँदों से बचने के लिए चारपाई के किनारे की तरफ खिसक गया और करवट लेकर सो गया। कुछ क्षण तो मैं बचा रहा, लेकिन फिर एक मोटी बूँद सीधे मेरे कान में पड़ी और पानी कान के भीतर चला गया। मैं हड़बड़ा कर उठ बैठा और गर्दन को तिरछा करके पानी को बाहर निकालने का प्रयास करने लगा। पानी की बूंदें तो मेरे मामा और नानाजी पर भी टपक ही रही थी किन्तु मेरी हड़बड़ाहट से उन्हें कुछ चिन्ता सी हुई उन्होंने मेरी चारपाई और पीछे की तरफ खिसका दी, जहाँ छत की फूस कुछ कम पुरानी थी। मैंने अनुभव किया कि वहाँ पानी नहीं टपक रहा था। अब मैं निश्चिन्त होकर सोने का प्रयास करने लगा। वर्षा निरन्तर तेज होती जा रही थी। कुछ देर बाद नये स्थान पर भी मुझ पर पानी टपकने लगा। आसमान में बिजलियों के कड़कने की आवाज आ रही थी और वर्षा तेज हो रही थी। मुझसे लेटा नहीं रहा गया। मेरे सारे बिस्तर गीले हो गये और सारा शरीर पानी की बूंदों से भीग गया। मामा और नानाजी भी उठ बैठे। उनका हाल मुझ से भी खराब था। उन्होंने वर्षा की आशंका से पहले ही सबसे अधिक सुरक्षित स्थान पर मुझे सुलाया था। वह स्थान भी असुरक्षित हो गया था। उन्हें अपनी कोई चिन्ता नहीं थी। मैंने उनकी भावना को समझ कर विश्वास दिलाया कि न मुझे कोई तक्लीफ है और न ही इसमें उनका कोई दोष है। तेज वर्षा में तो पक्के मकानों की छतें भी टपकने लग जाती है। उसी समय एक नयी मुसीबत आ गयी। छोटे से ताक में रखी चिमनी एकायक गुल हो गई और घोर अन्धकार व्याप्त हो गया। नानाजी ने मामा से कहा कि चिमनी में से शायद तेल खत्म हो गया है, इसलिए उसमें तेल डालकर उसे दुबारा जलादे। कैसे आश्चर्य की की बात! जहाँ अन्धकार में हाथ को हाथ दिखाई न दे, उस अन्धकार में ऊपर-नीचे सामान से खचा-खच भरे कमरे में तेल की बोतल ढूँढना और फिर अन्धेरे में ही चिमनी को ढूंढ कर उसमें तेल डालना और फिर जलाना। ऊपर से टपाटप पानी टपक रहा सो अलग। तभी मुझे ध्यान आया कि मेरे थैले में टार्च है, लेकिन इस अन्धेरे में थैले को कैसे ढूंढा जाय! इसका भी उपाय नानाजी ने ही किया। अपनी जेब से माचिस निकाल कर एक तीली जलाई। मुझे एक कोने में पड़ा अपना थैला दिखलाई दिया। मैंने टार्च की रोशनी की और सामने

चिमनी तैयार करके जला दी। कुछ देर बाद वर्षा तो थम गई किन्तु फूस की छत का टपकना बन्द नहीं हुआ। मैंने गीले बिस्तरों को इकट्ठा करके चारपाई के एक किनारे पर रख दिया और बिना बिस्तर ही लेट गया। कुछ देर बाद पानी टपकना कम हो गया। इसी बीच न जाने मेरी आंख कब लग गयी। सुबह उठ कर घर से बाहर आया तो देखा—बड़ा सुहावना मौसम था।

5. उपसंहार—उस दिन पूर्णिमा थी और रक्षा-बन्धन का त्यौहार था। इसलिए सब लोग घर पर ही थे। रात की घटना को याद कर करके सब लोग मेरी हंसी उड़ा रहे थे। उनकी बातों से मुझे ऐसा लगा जैसे वे लोग इस प्रकार की असुविधाओं को भोगने के अभ्यस्त हैं। कठिनाइयां और असुविधाएं तो उनके जीवन के अनिवार्य अंग हैं। मन ही मन मैं उनके साहसी जीवन की प्रशंसा कर रहा था। मामा के साथ तालाब पर मैंने स्नान किया और फिर खीर-पुड़ी का भोजन करके शाम को अपने घर लौट आया। फूस की छत के नीचे बितायी गई बरसात की रात मुझे सदा याद रहेगी।

□□□